राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 नवीनतम दृष्टिकोण

हिंदी पाठ्यपुस्तकों में भारतीय ज्ञान परंपरा का नियोजन

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020
नवीनतम दृष्टिकोण
हिंदी पाठ्यपुस्तकों में भारतीय ज्ञान परंपरा का नियोजन

विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान

VIDYA BHARATI
UCHCHA SHIKSHA SANSTHAN

in association with
PATHAK PUBLISHER AND DISTRIBUTORS

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 नवीनतम दृष्टिकोणः हिंदी पाठ्यपुस्तकों में भारतीय ज्ञान परंपरा का नियोजन

Editor: Harshita

© Vidya Bharati Uchcha Shiksha Sansthan

ISBN : 978-93-91952-42-6

Price : 200/-

First Edition: 2023

All rights reserved. No part of this publication may be reproduced in any form without the prior written permission of the Publisher.

This work is based on the proceedings of the deliberations at the National Workshop and the publishers have taken due care to verify the reported material to the extent possible. The publishers are not, in any way, liable for the same.

Published by
PATHAK PUBLISHER AND DISTRIBUTORS
E-6/33c & 34, Ground Floor, Sangam Vihar
New Delhi-110080
E-mail: pathakppd@gmail.com

Typographic Design by: G. R. Sharma

अनुक्रमणिका

आमुख vii

आभार ix

वैज्ञानिक समिति xi

मसौदा समिति xii

प्रस्तावना पृष्ठभूमि: आवश्यकता, उपयोगिता और महत्त्व xiii

SECTION I
MANDATE OF NEP 2020 & DEVELOPING NEW TEXTBOOKS

1. Highlights of National Education Policy 2020 3
2. 331st Report: Reforms in Content and Design of School Text Books 9
3. NEP & Developing New Text Books 27

SECTION II
राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुरूप हिंदी की नई पाठ्य पुस्तकों का निर्माण

4. प्रो. कैलाश चन्द्र शर्मा- अध्यक्ष, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान 39
5. प्रो. गोविन्द प्रसाद शर्मा- अध्यक्ष, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास 42
6. प्रो. कुमुद शर्मा- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 45
7. प्रो. चन्दन चौबे- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 51
8. प्रो. रवि टेकचंदानी- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 56

9. प्रो. हितेंद्र पटेल- रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, कोलकाता 61

10. प्रो. पूनम कुमारी- भारतीय भाषा केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली 67

11. प्रो. ममता वालिया- दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली 70

12. प्रो. किरण हजारिका- प्राचार्य, तंगखत कॉलेज, डिब्रुगढ़ 76

13. प्रो. मैथिली राव- उपनिदेशक, शोधार्थी प्रशिक्षण एवं प्रबंधन केंद्र, जैन यूनिवर्सिटी , बैंगलोर 79

14. प्रो. रीता मणि वैश्य- गौहाटी विश्वविद्यालय 102

15. प्रो. महेन्द्रपाल शर्मा- जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली 118

16. प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय- राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर 121

17. प्रो. करुणाशंकर उपाध्याय- बंबई विश्वविद्यालय, मुंबई 129

18. प्रो. प्रमोद कुमार दुबे- एनसीईआरटी, दिल्ली 136

19. डॉ. विनोद कुमार विलासराव वायचल- व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, उस्मानाबाद, धाराशिव 138

20. डॉ. विवेकानंद उपाध्याय- बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस 145

उपसंहार 152

प्रतियोगियों की सूची 159

आमुख

"राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 नवीनतम दृष्टिकोण: हिंदी पाठ्य पुस्तकों में भारतीय ज्ञान परंपरा का नियोजन" शीर्षक पुस्तक विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास एवं देश भर से जुड़े विद्वजनों के सामूहिक सद्प्रयास का सुचिंतित परिणाम है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 भारतीय ज्ञान परंपरा को केंद्र में रखते हुए एक ऐसी शिक्षा नीति हमारे सामने प्रस्तुत करती है जिसके आधार पर हमारे नौनिहाल वास्तव में अपनी जड़ों से जुड़ते हुए उन्नति के उत्तुंग नभ की ओर प्रयाण करने में सक्षम हो पाएंगे। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के मंतव्यों को ध्यान में रखते हुए हिंदी भाषा और साहित्य का विद्यालय के पाठ्यक्रम निर्माण, शिक्षण नीति आदि पर इस पुस्तक में गहनता से विचार हुआ है। इसमें संकलित सभी आलेख राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप शिक्षण पद्धति व पाठ्यक्रम निर्माण और पुस्तक निर्माण की दिशा में महत्वपूर्ण अनुदेश देते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक शिक्षण पद्धति में पाश्चात्य केन्द्रीयता के स्थान पर भारतीयता को केंद्र में रखने पर जोर देती है। देश की प्रगति और उन्नति के लिए शिक्षा का स्वरूप राष्ट्रीय हो और ज्ञान का स्तर वैश्विक। अपनी जड़ों से जुड़ कर ही वास्तव में हम वैश्विक स्तर पर अपनी पहचान पुन: स्थापित कर पाएंगे। विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान ने भारतीय ज्ञान परंपरा पर आधारित भारतीय शिक्षा प्रणाली की नींव को पुन: वैश्विक ज्ञान धारा से जोड़ने व राष्ट्रीय शिक्षा नीति के इरादे को पूरा करने की दिशा में अग्रणी पहल की है। इस पुस्तक के निर्माण से जुड़ने वाले सभी नीति निर्माताओं, शिक्षाविदों, विद्वानों, लेखकों एवं पाठकों का स्वागत करता हूँ। साथ ही सहयोगी संस्थाओं राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद एवं आयोजकों को आभार जिनके सम्मिलित प्रयास से यह सब संभव हो पाया।

प्रो. कैलाश चन्द्र शर्मा

अध्यक्ष, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान

आभार

इस पुस्तक की निर्मिति का विचार तब आया था जब विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान द्वारा जनवरी 2022 से पाठ्यपुस्तकों पर आधारित प्रारंभिक कार्यशालाओं का आयोजन किया गया था। संस्थान (वीबीयूएसएस) ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति- 2020 के अनुमोदन के अनुरूप, 3 सी(3C) की अवधारणा अर्थात पाठ्यक्रम सामग्री, अंतर्वस्तु और विषय वस्तु की समझ के पुनर्गठन के लिए एक रोडमैप और रणनीति का विकास किया। इन्हीं शुरुआती विचार-विमर्शों से तब मदद मिली जब महत्वपूर्ण संस्थानों को शामिल करते हुए आगे की कार्रवाई को अंतिम रूप देने का प्रयास किया गया। हिन्दी भाषा और साहित्य से संबन्धित मुख्य विषय के अनुरूप विभिन्न उपविषय बनाए गए तदनुसार पूरे भारत भर से विषय विशेषज्ञों से संपर्क किया गया। विषय और विशेषज्ञों को एक साथ लाकर पूरी संगोष्ठी की रूपरेखा तय की गयी। राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप भारतीय ज्ञान प्रणाली को आत्मसात करते हुए, "राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिन्दी" विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन किया गया। यह एक मिलाजुला प्रयास था, जिसके लिए विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान की ओर से हम राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के प्रति अपनी हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करना चाहते हैं।

इसके अलावा, हम माननीय के.एन.रघुनंदन जी (अखिल भारतीय संगठन मंत्री, वीबीयूएसएस), माननीय प्रकाश चंद्र जी (उपाध्यक्ष, वीबीयूएसएस) और श्री गोविंद महंता जी, संगठन मंत्री, (विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान) के प्रति उनके संरक्षण, मार्गदर्शन और प्रेरणा के लिए अपनी कृतज्ञता व्यक्त करना चाहते हैं। उनके सुझावों, दिशानिर्देश और निरंतर जुड़ाव ने इस विचार को वास्तविक रूप दिया।

इस कार्यशाला के आयोजन में सहयोग के लिए हम राष्ट्रीय पुस्तक न्यास के अध्यक्ष गोविंद प्रसाद शर्मा का आभार व्यक्त करते हैं। हम राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद (एनसीईआरटी) को भी उनके सहयोग के लिए आभार व्यक्त करते हैं। हम प्रो. रवि नारायन कर (प्रिन्सिपल, श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली

विश्वविद्यालय) का भी हार्दिक धन्यवाद देते हैं जिन्होंने निरंतर हमारा मार्गदर्शन किया। हम उन सभी विशेषज्ञों और विद्वानों के भी आभारी हैं जो प्रारम्भ से ही इस पहल से जुड़े रहे हैं और जिन्होंने कार्य को पूरा करने में अपना बहुमूल्य योगदान दिया है। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि हम उन सभी विशेषज्ञों एवं प्रतिभागियों के ऋणी हैं जिन्होंने इस पूरी पहल की परिकल्पना को साकार करने के लिए निरंतर बौद्धिक समर्थन दिया है।

अंत में, हम उन सभी प्रतिभागियों, विशेषज्ञों और आयोजकों के प्रति हार्दिक धन्यवाद व्यक्त करना चाहते हैं, जिन्होंने इस कार्यक्रम के आयोजन में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस कार्यक्रम के आयोजन में व इस रिपोर्ट को तैयार करने में अपना सहयोग देने के लिए डॉ. अमिता, डॉ. पूनम, डॉ विनोद तिवारी,रमन, आशीष व अन्य सहयोगियों को भी हम धन्यवाद देते है।

संरक्षक

माननीय के.एन. रघुनंदन जी

अखिल भारतीय संगठन मंत्री, वीबीयूएसएस

माननीय गोविंद महंत जी

संगठन मंत्री, विद्या भारती अखिल भारतीय शिक्षा संस्थान

प्रो. गोविन्द प्रसाद शर्मा

अध्यक्ष, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास

भागीदार

विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान

राष्ट्रीय पुस्तक न्यास

वैज्ञानिक समिति

क्र. सं.	नाम	पदनाम और संस्थान
1.	प्रो. कैलाश चन्द्र शर्मा	अध्यक्ष, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान
2.	प्रो. गोविन्द प्रसाद शर्मा	अध्यक्ष, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास
3.	प्रो. रबि नारायण कर	प्राचार्य, श्यामलाल कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय
4.	प्रो. कुमुद शर्मा	दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
5.	प्रो. चन्दन चौबे	दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
6.	प्रो. रवि टेकचंदानी	दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
7.	प्रो. हितेन्द्र पटेल	रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, कोलकाता
8.	प्रो. पूनम कुमारी	भारतीय भाषा केंद्र, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, दिल्ली
9.	प्रो. ममता बालिया	दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
10.	प्रो. किरण हजारिका	प्राचार्य, तंगखत कॉलेज, डिब्रूगढ़
11.	प्रो. मैथिली राव	उपनिदेशक, शोधार्थी प्रशिक्षण एवं प्रबंधन केंद्र, जैन यूनिवर्सिटी, बैंगलोर
12.	प्रो. रीता मणि वैश्य	गौहाटी विश्वविद्यालय
13.	प्रो. महेन्द्रपाल शर्मा	जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली
14.	प्रो. नंदकिशोर पाण्डेय	राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

15.	प्रो. करूणा शंकर उपाध्याय	बंबई विश्वविद्यालय, मुंबई
16.	प्रो. प्रमोद कुमार दुबे	एनसीईआरटी, दिल्ली
17.	डॉ. विनोद कुमार विलासराव वायचल	व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, उस्मानाबाद, धाराशिव
18.	डॉ. विवेकानंद उपाध्याय	बनारस हिंदू विश्वविद्यालय, बनारस

मसौदा समिति

क्र. सं.	**नाम**	**पदनाम और संस्थान**
1.	डॉ. हर्षिता	इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

पृष्ठभूमिः आवश्यकता, उपयोगिता और महत्त्व

पुराणमित्येव न साधु सर्वं न चापि काव्यं नवमित्यवद्यम।
सन्तः परीक्ष्य अन्तरद्-भजन्ते मूढ़ः परप्रत्ययनेयबुद्धि॥
कालिदास [मालविकाग्निमित्रम]

पुराना होने से न तो कोई काव्य उत्कृष्ट हो जाता है और न नया होने से निकृष्ट। ज्ञानी लोग दोनों को परखकर उनमें से वरेण्य को अपनाते हैं। मूढ़ औरों के कहने पर चलते हैं।

परखने की अपेक्षित दृष्टि के अभाव के कारण स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद भी विडंबना है कि हम आज भी भारत की परंपरा और इतिहास की पहचान और समझ नहीं बना पाए हैं। हम आज भी अपने समाज और संस्कृति को इतिहास के पश्चिमी मानकों पर परख और समझ रहे हैं। भारतीय ज्ञान परंपरा और उसमें निहित दृष्टि हमारी देशज चिंतन पद्धति पर एकाग्र है। हमें भारतीय ज्ञान परंपरा को समझने और इसे हमारी शिक्षा व्यवस्था में अनुस्यूत करने की आवश्यकता है। इसकी शुरुआत विद्यालय के पाठ्यक्रम और तदनुसार पाठ्य पुस्तकों के निर्माण से करना होगा। यह देश की नई पीढ़ी के नौनिहालों के चरित्र निर्माण और प्रकारांतर से राष्ट्र निर्माण में सहायक सिद्ध होगा।

भारतीय शिक्षा पद्धति में मैकाले की शिक्षा नीति से लेकर पिछली शिक्षा नीतियों (1975, 1988, 2000 और 2005) तक में भारतीय ज्ञान परंपरा की निरंतर उपेक्षा हुई है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 इस अंतराल की क्षतिपूर्ति का सार्थक प्रयास है, जहां शिक्षा के केंद्र में भारतीय ज्ञान परंपरा को रखा गया है।

शिक्षा शब्द हमें सबसे पहले ऋग्वेद के 7वें मण्डल में दिखाई देता है। उसमें बताया गया है कि आंतरिक और बाह्य अज्ञान को दूर करके ज्ञान की ओर अग्रसर

होना शिक्षा है। जब किसी भी विद्यार्थी के अंतर्गत आंतरिक और बाह्य दोनों प्रकार का अज्ञान दूर हो जाएगा तब वह अपने आप ही राष्ट्र के लिए एक स्वस्थ्य नागरिक बन जाएगा। इसी तरह की शिक्षा वर्तमान पीढ़ी के लिए भी अपेक्षित है। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में हम 5 से 7 घंटे के लिए पढ़ने जाते हैं फिर भी ऐसा क्यों है कि हम राष्ट्र को शारीरिक व मानसिक रूप से स्वस्थ नागरिक नहीं दे पा रहे। समाज में अपराध बढ़ रहे हैं।

प्राचीन शिक्षा प्रणाली में विद्यार्थी गुरुकुल में रह कर शिक्षा ग्रहण करता था। इस शिक्षा प्रणाली में चाहे कोई राजा का बेटा हो या रंक का बेटा सभी के लिए शिक्षा की एकसमान पद्धति थी। प्राचीन शिक्षा पद्धति की मुख्य बात यही है कि यह पद्धति किताबी ज्ञान की बजाय व्यावहारिक ज्ञान पर अधिक बल देती थी। यही कारण था कि इस पद्धति से पढ़े-लिखे विद्यार्थी समाज व राष्ट्र के निर्माण में अपनी सक्रिय भूमिका निभाते थे। शिक्षा के संबंध में अपने विचार प्रकट करते हुए स्वामी विवेकानंद ने कहा है- "हमें ऐसी शिक्षा चाहिए जिससे चरित्र का निर्माण हो, मन की शक्ति बढ़े, बुद्धि का विकास हो और मनुष्य अपने पैरों पर खड़ा हो सके"।

हमारी प्राचीन शिक्षा प्रणाली नैतिक, भौतिक, आध्यात्मिक मूल्यों पर केन्द्रित थी। जिससे विद्यार्थी में विनम्रता, सत्य, आदर्श, अनुशासन व सभी के प्रति सम्मान जैसे मूल्यों का विकास होता था। छात्रों को मानव, प्राणी और प्रकृति के बीच संतुलन बनाना सिखाया जाता था। विद्या के माध्यम से विद्यार्थी स्वयं के प्रति, परिवार के प्रति, समाज व राष्ट्र के प्रति कर्त्तव्यनिष्ठ बनता था। परम्परावादी शिक्षा प्रणाली कर्म पर जोर देती है। कर्म वही है जो बंधनों से मुक्त करे और विद्या वही है जो मुक्ति का मार्ग दिखाये। इसके अतिरिक्त जो भी कर्म है वह सब निपुणता देने वाले मात्र हैं (विष्णु पुराण, 1/9/41)।

गुरूकुलों में हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति इसी संकल्प को ध्यान में रखते हुए ही विद्यार्थियों का ज्ञानवर्धन करती थी। विद्यार्थियों को संस्कार व जीवन मूल्यों का बोध कराया जाता था। जिससे वे उचित और अनुचित में भेद करना सीखते थे। विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करने के बाद समाज व राष्ट्र के लिए एक आदर्श मनुष्य के रूप में प्रस्तुत होता था। वह बड़ों का सम्मान, हम उम्र से दोस्ती, छोटों से प्यार व स्त्री सम्मान को प्राथमिकता देना अपना कर्तव्य समझता था। वैदिक काल में महिलाएं भी शिक्षा ग्रहण करती थी। पुरुषों से वाद-विवाद में भी हिस्सा लेती थी। प्राचीन महिला विदुषियों में मैत्रेयी, ऋतम्भरा, अपाला, गार्गी और लोपामुद्रा आदि नाम उल्लेखनीय

हैं। बोधायन, कात्यायन, आर्यभट्ट, चरक, कणाद, वाराहमिहिर, नागार्जुन, शंकराचार्य, जैसे अनेकानेक महापुरुषों ने भारत की भूमि पर ही जन्म लिया। इन विदुषियों व महानुभावों से विद्यार्थियों को अवगत होना बहुत जरूरी है। आज न के बराबर ही विद्यार्थी इनके नामों से परिचित हैं।

एक समय था जब भारत के तक्षशिला व नालंदा विश्वविद्यालय, विक्रमशिला, बल्लभी, उज्जयिनी, काशी आदि विश्वप्रसिद्ध शिक्षा स्थल व शोध के केन्द्र थे। यहां कई देशों के विद्यार्थी ज्ञानार्जन के लिए आते थे। हमारी प्राचीन ज्ञान परम्परा का मुख्य उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष को समाहित करते हुए विद्यार्थी का सर्वांगीण विकास करना था।

हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा हजारों वर्ष पुरानी है। इसमें आधुनिक विज्ञान प्रबंधन के साथ-साथ लगभग सभी विषयों के अध्ययन के लिए अद्भुत खजाना है। हमने हमेशा प्रत्येक विषय को पश्चिम के नजरिए से ही पढ़ कर अपनी ज्ञान परंपरा को नजरअंदाज किया और अपनी ज्ञान परंपरा के महत्त्व को भूल गए। यह अक्सर होता आया है कि हम अपनी ज्ञान परंपरा या अपनी महान विभूतियों को तब तक महत्त्व नहीं देते जब तक कि पश्चिम के लोग उन्हें स्वीकार नहीं करते। जैसे ही पश्चिम में हमारी ज्ञान परंपरा व महान विभूतियों को जगह मिलती है वैसे ही हम भी इनकी तरफ झुकने लगते हैं। पश्चिम में आयुर्वेद, योग, प्राकृतिक चिकित्सा, शाकाहार आदि को लोगों ने अपनाना शुरू किया है और हम इन सबको भूलते जा रहे थे। विदेशों में जब योग योगा के रूप में प्रसिद्ध हुआ, तब हम हमारे योग की तरफ झुके। जब अमेरिका नीम, हल्दी, जड़ी-बूटियों व गोमूत्र को पेटेंट करवाने लगा तब हमें अपनी परंपरागत आयुर्वेदिक चीजों का महत्त्व समझ में आना शुरू हुआ । आज हम गांधीजी के बताए अहिंसा के रास्ते को नकार रहे हैं जबकि अमेरिका में पिछले कुछ वर्षों से बहुत से विश्वविद्यालयों में गांधी पढ़ाये जा रहे हैं। हम अपनी महान विभूतियों द्वारा बताए गए रास्तों को भूलते जा रहे हैं और पश्चिम के देश उन्हें अपनाने की कोशिश कर रहे हैं। हम आज भी पश्चिमी शिक्षा पद्धति का ही अनुकरण कर रहे हैं। आज एकबार फिर हमे अपनी ज्ञान परंपरा की ओर झुकना होगा ताकि न केवल हमें अपनी परंपरा की जानकारी प्राप्त हो बल्कि हम उसे अपने व्यावहारिक जीवन में भी उतार सकें।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली केवल परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने और डिग्री प्राप्त करने के चलन तक सीमित है। वर्तमान में इस शिक्षा पद्धति का रूप बहुत

ही विकृत तथा भ्रष्ट हो गया है। कुछ विद्यार्थी अनैतिक हथकंडों को अपनाकर भी परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त करने की कोशिश करते हैं। ताकि परीक्षा में उत्तीर्ण होने के बाद उसे डिग्री मिल जाए और उसे एक अच्छे वेतन वाली नौकरी मिल जाए। इसका परिणाम यह है कि शिक्षा का ह्रास होता जा रहा है। जिसे देखो वो अंग्रेजी की तरफ झुका जा रहा है चाहे विद्यार्थी में किसी भी विषय पर तार्किक क्षमता हो या न हो। जबकि हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति में रटने वाली शिक्षा प्रणाली नहीं थी बल्कि विद्यार्थी के चरित्र गठन पर बल दिया जाता था। विद्यार्थी को समाज व राष्ट्र हित के योग्य बनाने पर बल दिया जाता था। प्राचीन शिक्षा पद्धति भौतिकता की तरफ नहीं बल्कि आध्यात्मिकता की तरफ विद्यार्थी को ले जाती थी। इसी का परिणाम था कि विद्यार्थी किसी भी अनैतिक कार्य में लिप्त होने से पहले संकोच करता था। उसकी शिक्षा उसे कुछ भी अनैतिक करने से रोकती थी।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति विद्यार्थियों के नए पाठयक्रम में भारतीयता, जीवन मूल्य, संस्कार, आचरण पर बल देती है। नई शिक्षा नीति प्रारम्भिक शिक्षा पर जोर देती है। क्योंकि "बच्चे कुम्हार के एक कच्चे घड़े के समान होते हैं जिन्हें किसी भी आकार में ढाला जा सकता है"। इसका अभिप्राय यह है कि यदि एक छोटे बच्चे को बचपन से ही मानवीय मूल्यों व संस्कारयुक्त शिक्षा मिलती है तो वह आगे चलकर एक आदर्श राष्ट्र का निर्माण कर सकता है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति 3 से 6 वर्ष की उम्र के बच्चों के सम्पूर्ण विकास पर अधिक जोर देती है क्योंकि बच्चों के 85% मस्तिष्क का विकास 6 वर्ष की अवस्था से पूर्व ही हो जाता है।

हमारे देश में सरकार का यह प्रावधान रहा है कि देश में 14 साल तक की उम्र के बच्चे को निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा दी जाए। इसके अंतर्गत देश के सभी वर्ग के विद्यार्थियों को समान अधिकार व अवसर दिये गए। नई शिक्षा नीति बच्चों के व्यावहारिक शिक्षा के ज्ञान पर बल देगी। पुरानी शिक्षा पद्धति रटी-रटाई शिक्षा पद्धति पर आधारित थी लेकिन अब बच्चों की तार्किक शक्ति के विकास पर भी बल दिया जाएगा। बच्चे को तार्किक शक्ति का भी प्रदर्शन करना होगा। नई शिक्षा प्रणाली का उद्देश्य भारत की परम्परा व सांस्कृतिक मूल्यों को ध्यान में रखते हुए विद्यार्थी का सम्पूर्ण विकास करना है।

भारतीय भाषाओं को महत्व देते हुए अभियांत्रिकी, चिकित्सा और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों में भारतीय भाषा का विकल्प भी रखा गया है क्योंकि विद्यार्थी अपनी मातृभाषा में शिक्षा बहुत आसानी से ग्रहण कर लेता है।

आचार्य विनोबा भावे ने भी कहा है कि – "शिक्षण को यदि सार्वजनिक बनाना हो, तो वह मातृभाषा में ही होना चाहिए अन्यथा समाज में भेदभाव की दीवार खड़ी होती है ।"

गांधी जी ने भी मातृभाषा में शिक्षा को महत्व देते हुए कहा है कि "व्यक्ति अपनी मातृभाषा में शिक्षा को अधिक रुचि तथा सहजता के साथ ग्रहण कर सकता है।" वैज्ञानिक शोधों के अनुसार मातृभाषा में ही मौलिक चिन्तन होने की पुष्टि की गई है। अतएव मातृभाषा में प्राप्त शिक्षा मौलिक शोध, आविष्कार तथा ज्ञान का मार्ग प्रशस्त कर सकती है। फ्रांस, जर्मनी, चीन और जापान जैसे देशों का उदाहरण हमारे सामने है।

शैक्षिक पाठ्यक्रम का एक उद्देश्य और निश्चित लक्ष्य होना चाहिए। व्यावसायिक शिक्षा और शिक्षा के व्यवसाय ने पारम्परिक शिक्षा को हाशिये पर धकेल दिया है। शारीरिक, सामाजिक और आध्यात्मिक आवश्यकताओं को पूरी तरह से दरकिनार कर दिया गया है। आज के भौतिकवादी युग में शिक्षा की वर्तमान प्रणाली एक भौतिक सुख की जरूरत बन के रह गई है। इसके अन्तर्गत मानवमूल्य का ह्रास हुआ है इसलिए जरूरी है कि शिक्षा का अंतिम लक्ष्य चरित्र निर्माण और मानव मूल्य का निर्माण होना चाहिए।

पाठ्य पुस्तकों के निर्माण के पीछे निम्न ध्येय अपेक्षित हैं

- यह सुनिश्चित करने के लिए कि पाठ्य पुस्तकें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के ढांचे के अनुरूप हैं।
- मुख्यतः हिंदी और संस्कृत साहित्य परंपरा और गौणतः भारतीय भाषाओं की साहित्य परंपरा से ऐसी सामग्री का निर्माण किया जाए जो भारतीय मूल्यों, नैतिकता और दर्शन को प्रदर्शित और उजागर करती है, और उन्हें स्कूली पाठ्यपुस्तकों में शामिल करके मुख्यधारा में लाया जाए।
- यह सुनिश्चित करने के लिए कि पाठ्यपुस्तकें श्भारतीयताश पर केंद्रित हैं और प्रेम की भावनाओं को भी बढ़ावा देती हैं। मातृभूमि और उसके नागरिकों के लिए अपनेपन और करुणा के साथ-साथ प्राचीन वसुधैव कुटुम्बकम के भारतीय मूल्य को आत्मसात किए हुए हो।
- यह सुनिश्चित करने के लिए कि पाठ्य पुस्तक लिखते समय वैज्ञानिक तर्कसंगतता और प्रामाणिकता के सभी सिद्धांतों को ध्यान में रखा जाए।

- इन पाठ्य पुस्तकों में यथास्थान क्षेत्रीय और स्थानीय संस्कृति, कला और विरासत का समावेश सुनिश्चित होना चाहिए। ताकि प्रत्येक प्रांत का विद्यार्थी देश के सभी प्रांत की कला, संस्कृति व विरासत को जान सके। विद्यार्थी तीज-त्यौहार, पर्व व हमारी नाना संस्कृति को एक-दूसरे के साथ साझा कर सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति एक महत्वपूर्ण दस्तावेज है जो इस पाठ्यक्रम विकास में एक मार्गदर्शक और नियामक की भूमिका निभाता है। वर्तमान में पाठ्यक्रम निर्माण में वर्तमान पाठ्य पुस्तकों की समीक्षा करने की आवश्यकता है। इससे हमें वर्तमान स्थिति का पता चलेगा। उसके स्वरूप, सीमा और समस्या का बोध होगा। तत्पश्चात हम भारतीय ज्ञान परंपरा के अनुरूप सामग्री निर्माण की दिशा में अग्रसर हो सकेंगे। हिंदी भाषा और साहित्य के पाठ्यक्रम की बात करें (कक्षा 9 से 12) तब हम पाते हैं कि इसमें कुछ असंबद्धता है। इन पाठ्य पुस्तकों में भारतीय ज्ञान परंपरा को संतोषजनक स्थान नहीं मिल सका है। कई ऐसे पाठ हैं जिनकी आवश्यकता नहीं है और कई पाठों की अंतर्वस्तु आपत्तिजनक है।

एनसीईआरटी की पुस्तकों की अंतर्वस्तु की विवेचना के कुछ बिन्दु

एनसीईआरटी के अंतर्गत हिंदी भाषा और साहित्य में 9वीं और 10वीं में क्षितिज, स्पर्श, कृतिका और संचयन तथा 11वीं और 12वीं में अंतरा, वितान, आरोह और अंतराल नामक पाठ्य पुस्तकें प्रचलन में हैं। नमूने के तौर पर इन पाठ्य पुस्तकों से कुछ उदाहरण दिए जा सकते हैं:

कक्षा 9 की संचयन में एस.के.पोट्टेकाट की लिखी एक कहानी 'हामिद खाँ' है जिसमें कहानी का लेखक पाकिस्तान में जाकर एक होटल के मालिक हामिद खाँ से कहता है कि 'हमारे यहाँ हिन्दू मुसलमान में कोई फर्क नहीं है; सब मिल-जुलकर रहते हैं ; भारत में हिंदू-मुसलमान के दंगे नहीं के बराबर होते हैं'। इस पर हामिद खाँ दुकानदार कहता है कि "यहाँ कोई भी हिन्दू आपकी कही हुई बातों को इतने फक्र के साथ किसी मुसलमान को नहीं कह सकता। उसकी नजर में हम आतताइयों की औलादें हैं; हमें इस हालत में अपनी आन के लिए लड़ना पड़ता है। यही हमारी नियति है। 'उसकी आवाज में सच्चाई कूट-कूटकर भरी थी"। इस संवाद से साफ लग रहा है कि पाकिस्तान में एक धर्म विशेष के लोग ही दूसरे धर्म विशेष के लोगों को परेशान करते हैं और उनकी आन पर हमला करते है। वहाँ दूसरे धर्म विशेष के

लोगों को अपने बचाव में आना पड़ता है। जबकि यह सर्वविदित है कि पाकिस्तान में अल्पसंख्यक एक धर्म विशेष के साथ किस प्रकार का व्यवहार किया जाता है। यह हम आए दिन अखबार व न्यूज में देख सकते हैं। पाठयक्रम का यह अध्याय भी एक ही धर्म विशेष को लक्ष्य करके लिखा गया है। इस तरह के अध्याय पढ़ कर विद्यार्थी के मन में यही भावना पैदा होगी कि एक ही धर्म विशेष के लोग पाकिस्तान में दूसरे धर्म के लोगों के साथ मिलजुलकर नहीं रहते जबकि एक धर्म विशेष के लोगों की संख्या पाकिस्तान में बहुत ही कम है। वहाँ तो वो खुद अपनी पहचान के संकट से जूझ रहे हैं। ऐसे में वे किसी को कैसे परेशान कर सकते हैं।

कक्षा 10 की 'संचयन' किताब में कथाकार मिथिलेश्वर की कहानी 'हरिहर काका' में एक गाँव की ठाकुरबारी के जरिये किसी एक धर्म विशेष के धर्मगुरुओं के पाखंड व ढोंग पर प्रहार किया है। गांव की ठाकुरबारी की स्थापना के लिए यह प्रचलित है कि कहीं-कहीं से संत आकर इस स्थान पर झोंपड़ी बना कर रहने लगे थे।

धीरे-धीरे समय के साथ इसका विस्तार होता है महंत, पुजारी, साधु, संतों के प्रवचन चलते हैं। गाँव में ही एक हरिहर काका हैं। उनके हिस्से के पन्द्रह बीघे खेत हैं। उनके खेतों पर ठाकुरबारी के महंत की भी नजर है और उनके भाइयों की भी। एकदिन जब घर से परेशान होकर वे घर से निकलते हैं तब ठाकुरबारी के महंत अपनी ठाकुरबारी के विस्तार के लिए उनसे अपनी जमीन ठाकुरजी के नाम लिखने की सलाह देते हैं। इसी लालच में उनकी आव भगत भी करते हैं। उसे कहते हैं कि तुम्हारा लोक और परलोक दोनों बन जाएगा। लेकिन हरिहर काका अपने घर चले जाते हैं तब एकाएक ठाकुरबारी के साधु-संत और उनके पक्षधर भाला, गंडासा और बंदूक से लैस एकाएक हरिहर काका के दालान पर जा धमकते हैं और उनको पीठ पर लादकर चंपत हो जाते हैं।

जब हरिहर काका के भाई उन्हें ढूँढने के लिए ठाकुरबारी पहुंचे तब ठाकुरबारी की छत से रोड़े और पत्थर उनके ऊपर गिरने लगे। ठाकुरबारी के कमरों की खिड़कियों से फायरिंग शुरू हो गई। जब उनके भाई पुलिस को साथ लेकर पहुंचे तब हरिहर काका उन्हें बुरी स्थिति में मिले। हरिहर काका के हाथ और पाँव तो बांध ही दिए गए थे, उनके मुंह में कपड़ा भी ठूंस दिया गया था। हरिहर काका जमीन पर लुढ़कते हुए दरवाजे तक आए और पैर से दरवाजे पर धक्का लगाया था। इस घटना के बाद हरिहर काका को महंत, साधु, संतों आदि से बहुत अधिक

नफरत हो चुकी थी। कहानी आगे भी काफी कुछ है लेकिन इस पूरे प्रकरण में एक धर्म विशेष को लक्ष्य करके उसके खिलाफ नफरत फैलाना सही नहीं माना जा सकता। कुछ झूठे-सच्चे, ढोंगी धर्म गुरु सभी धर्मों में देखे जा सकते हैं लेकिन अगर हम लक्ष्य सिर्फ एक ही धर्म विशेष को करें तो यह न्याय संगत नहीं ठहराया जा सकता। इससे विद्यार्थी विशेष के मन में गलत भावनाएं पैदा हो सकती हैं । वह एक धर्म विशेष से ही नफरत करेगा। इससे उसे सभी धर्मों को तर्क संगत समझने में मदद नहीं मिल सकती। हमें विद्यार्थी को किसी भी बात को तार्किक ढंग से समझाने पर जोर देना होगा।

कक्षा 10 की ही संचयन में 'टोपी शुक्ला' अध्याय को अगर हम देखें तो इसमें इफ्फान और टोपी दो दोस्त की कहानी है। टोपी इफ्फान के घर जाता है। वहां वह अम्मी, बाजी जैसे शब्दों से परिचित होता है। टोपी घर आकर अपनी मां को अम्मी शब्द से संबोधित कर देता है। इस पर उस घर की परम्पराओं की दीवार डोलने लगी। उससे पूछा जाता है कि यह शब्द कहां से सीखा। तब वह बताता है इफ्फान से, इस पर उससे कहा जाता है कि ''तैं कउनो मियां के लइका से दोस्ती कर लिहले बाय का रे?'' टोपी को बहुत पीटा गया। इस प्रकरण के माध्यम से भी एक धर्म विशेष पर ही आघात किया गया है। इसमें टोपी के घरवालों को बहुत ही कट्टर व परम्परावादी परिवार के रूप में पेश कर दिया गया। टोपी का परिवार ही दूसरे धर्म के लड़के से दोस्ती पर एतराज करता है। उसी का परिवार माँ के लिए दूसरे धर्म का शब्द (अम्मी) इस्तेमाल किए जाने पर विरोध करता है। जबकि इफ्फान के परिवार पर कट्टरपंथी होने का आघात नहीं किया गया। हमें किसी एक धर्म विशेष पर आघात न करके चीजों को संयमित तरीके से विद्यार्थी को पढ़ाना चाहिए। ताकि किसी भी धर्म विशेष के प्रति उसके मन में गलतफहमियां ना पैदा हो। इससे विद्यार्थी यही समझेगा कि एक ही धर्म के लोग कट्टर होते हैं। इस तरह की कहानियों की जगह हमें आपसी सौहार्द बढ़ाने वाली कहानी विद्यार्थियों को पढ़ानी चाहिए।

बारहवीं कक्षा की किताब आरोह में 15 वां अध्याय विष्णु खरे ने लिखा है। अध्याय का नाम है 'चार्ली चौप्लिन यानी हम'। जब हम इस अध्याय को पढ़ सकते हैं तो हम इसकी जगह दादा साहब फाल्के या सत्यजीत रे को क्यों नहीं पढ़ सकते? बारहवीं कक्षा की किताब वितान में 'डायरी के पन्ने' के स्थान पर किसी अन्य भारतीय भाषा के महत्वपूर्ण पाठ को स्थानापन्न किया जा सकता है।

बारहवीं कक्षा की किताब आरोह में 18 वां अध्याय बाबा साहब भीमराव अंबेडकर का है 'श्रम विभाजन और जाति-प्रथा' इसमें हिन्दू धर्म को लेकर कुछ ऐसी बातें हैं जिनका आज के समय में कोई औचित्य नहीं है। जैसे- 'हिन्दू धर्म की जाति प्रथा किसी भी व्यक्ति को ऐसा पेशा चुनने की अनुमति नहीं देती है, जो उसका पैतृक पेशा न हो, भले ही वह उसमें पारंगत हो। इस प्रकार पेशा परिवर्तन की अनुमति न देकर जाति-प्रथा भारत में बेरोजगारी का एक प्रमुख व प्रत्यक्ष कारण बनी हुई है'। इस तरह की चीजें अब समाज में हमें नहीं दिखाई देती। अब सभी जाति, धर्म व समुदाय के लोग देश के उच्च पदों पर आसीन हैं। सभी को कानूनी अधिकार समान रूप से मिले हुए हैं। देश के सभी जाति, धर्म व समुदाय के लोगों को संविधान में समान अधिकार दिये हैं। इसलिए आज के समय में इस तरह की बातें विद्यार्थियों को ना पढ़ा कर हमें उन्हें अपने अधिकारों के प्रति जागरूक करना चाहिए और भविष्य में कुछ अच्छा करने की प्रेरणा देनी चाहिए। इससे विद्यार्थी पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

12 वीं कक्षा की किताब अंतरा में ममता कालिया की कहानी 'दूसरा देवदास' है जिसके अंतर्गत एक लड़का और एक लड़की की प्रेम कहानी का वर्णन है। हर की पौड़ी पर एक मंदिर के पुजारी से तिलक लगवाते हुए संभव और पारो नाम की लड़की की प्रेम कहानी शुरू होती है। संभव अगले दिन भी उस लड़की के मिलने की संभावना से हर की पौड़ी पर जाता है। वहाँ उसे वह लड़की नहीं मिलती तो वह मंसा देवी के मंदिर जाता है और वहाँ उसे वह लड़की मिल जाती है। दोनों को एक दूसरे के नाम भी पता चल जाते हैं। इस प्रकार धर्म-स्थल को प्रेम कहानी का स्थल बना दिया गया। यहाँ भी एक धर्म विशेष के धर्म स्थल को ही प्रेम कहानी के विकसित होने का स्थल बनाया गया है। इस तरह की कहानी विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में कोई सहयोग प्रदान नहीं कर सकती। इसकी जगह उनके मन में धार्मिक स्थलों को लेकर शांति व स्थिरता की भावना उत्पन्न नहीं हो सकती। इसलिए इस तरह की कहानियों की जगह प्रेरक कहानी को पाठयक्रम का हिस्सा बनाया जा सकता है, जिससे विद्यार्थी के मन में सकारात्मक भाव उत्पन्न हों।

बारहवीं कक्षा की पुस्तक अंतराल में एम एफ हुसैन की आत्मकथा का अंश खटकने वाला है। ये वही हुसैन हैं जिन्होंने कला के नाम पर देवियों के नग्न चित्र बनाए, इस अंश 'हुसैन की कहानी अपनी जबानी' में पृष्ठ 30 पर एक अर्धनग्न स्त्री के वस्त्र पर गणेश जी का चित्र बना है। धर्म के साथ ऐसा भद्दा मजाक छात्रों

को किस प्रकार की शिक्षा देना है? इन सभी चीजों से हमें बचना चाहिए। इससे यही पता चलता है कि पाठयक्रम में सिर्फ एक ही धर्म के साथ भद्दा मजाक किया जा रहा है।

बारहवीं कक्षा की किताब अंतरा में 'गांधी, नेहरू, यास्सेर अराफात',असगर वजाहत की चार लघु कहानियाँ; एक पुस्तक में नेहरू जी की 'भारत माता' का पाठ एक खास सोच को पोषित करने हेतु सम्मिलित किए गए पाठ हैं। विद्यार्थियों को एक ऐसे पाठयक्रम की जरूरत है जो जीवन के सभी पक्षों को तार्किक ढंग से सिखाये। विद्यार्थी में ऐसे संस्कार उत्पन्न करे कि वह अपनी सभ्यता, संस्कृति का सम्मान करना सीखे।

पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जिसमें किसी भी जाति,धर्म या समुदाय विशेष पर प्रहार न किया जाए। पाठ्यक्रम में ऐसी सामग्री का चयन किया जाए जिससे विद्यार्थियों पर सकारात्मक प्रभाव पड़े। पाठ्य सामग्री में ऐसे चित्रों का भी प्रयोग न किया जाए जिससे विद्यार्थी पर नकारात्मक प्रभाव पड़े।

नई पाठ्य पुस्तकों में क्या होना चाहिए और उसे कैसे सम्मिलित किया जाना चाहिए?

भारतीय ज्ञान परंपरा पर आधारित अंतर्वस्तु

प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार की गयी है।जहां प्रासंगिक हो वहाँ भारत की समृद्ध और विविध प्राचीन और आधुनिक संस्कृति और ज्ञान प्रणालियों और परंपरा को शामिल किया जाना चाहिए और उससे प्रेरणा पाना आवश्यक है तभी एक आदर्श पाठयक्रम तैयार हो सकता है।

भारतीय मूल्यों और संस्कृति पर आधारित विमर्श

पाठ्यपुस्तकें प्राचीन भारत के साथ-साथ आधुनिक भारत से भी ज्ञान प्राप्त करेंगी। देश के भविष्य की आकांक्षाओं को ध्यान में रख कर वैज्ञानिक और सटीक तरीके से सभी प्रासंगिक ज्ञान को एक साथ शामिल किया जाएगा। पाठ्य पुस्तकों की पूर्व की श्रृंखला में श्भारतीयताश का अभाव था। परंपराएं, भारतीय विचार, भारतीय ज्ञान प्रणाली, सामाजिक समस्याओं से निपटने के भारतीय तरीके, भारतीय मूल्य प्रणाली, भारतीय सांस्कृतिक विरासत, भारतीय तर्क प्रणाली, भारतीय गणित, वैदिक विज्ञान और गणित, उपनिषद ज्ञान आदि भारतीयता के समृद्ध स्रोत हैं। भाषा और साहित्य

के क्षेत्र में भारतीय विचारों के उत्थान और प्रचार के लिए श्भारतीयताश का चित्रण सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

अभिनव शिक्षण पद्धति

सभी भाषाओं के शिक्षण को नवीन और अनुभवात्मक विधियों के माध्यम से समृद्ध किया जाए, जिसमें सरलीकरण और एप्लीकेशन के माध्यम से भाषाओं के सांस्कृतिक पहलुओं जैसे कि फिल्म, थिएटर, कथावाचन, काव्य और संगीत को जोड़ते हुए, और विभिन्न प्रासंगिक विषयों के साथ और वास्तविक- जीवन के अनुभवों के साथ संबंधों को दिखाते हुए इन्हें सिखाया जाए। इस प्रकार, भाषाओं का शिक्षण भी अनुभवात्मक-अधिगम शिक्षणशास्त्र पर आधारित हो।

जीवन पर्यंत प्रभाव

भारत की शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य के महत्त्व, प्रासंगिकता और सुंदरता को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है।

संस्कृत, संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक महत्वपूर्ण भाषा होते हुए भी, इसका शास्त्रीय साहित्य इतना विशाल है कि सारे लैटिन और ग्रीक साहित्य को भी यदि मिलाकर इसकी तुलना की जाए तो भी इसकी बराबरी नहीं कर सकता।

संस्कृत साहित्य में गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता, कहानी, और बहुत कुछ (जिन्हें ''संस्कृत ज्ञान प्रणालियों'' के रूप में जाना जाता है), के विशाल खजाने हैं। इन सबको विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ-साथ गैर-धार्मिक लोगों और जीवन के सभी क्षेत्रों और सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के लोगों द्वारा हजारों वर्षों में लिखा गया है। इस प्रकार संस्कृत को, त्रि-भाषा की मुख्यधारा के विकल्प के साथ, स्कूल और उच्चतर शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रों के लिए एक महत्वपूर्ण, समृद्ध विकल्प के रूप में प्रस्तुत किया जाए। यह उन तरीकों से पढ़ाया जाए जो रोचक और अनुभवात्मक होने के साथ-साथ समकालीन रूप से प्रासंगिक हैं, जिसमें संस्कृत ज्ञान प्रणाली का उपयोग शामिल है, और विशेष रूप से ध्वनि और उच्चारण के माध्यम से। इन सबका क्रमबद्ध शिक्षण विद्यार्थियों को न केवल शैक्षिक दृष्टि से तैयार करेगा बल्कि उन्हें उन मूल्यों से भी लैस करेगा जिसका प्रभाव जीवन पर्यंत बना रहेगा।

रोचक प्रस्तुतिकरण और दृश्यात्मक अंतर्वस्तु

सामग्री का निर्माण मात्र अंतर्वस्तु तक सीमित न रख कर उसे रोचक तरीके से प्रस्तुत किए जाने की आवश्यकता है, उसे दृश्य विन्यास की सहायता से अधिक आकर्षक बनाया जाना चाहिए।

अंतर्वस्तु प्रदेश आधारित

भारत के बहुभाषिक होते हुए भी उसकी अभिव्यक्ति के तरीके आश्चर्यजनक रूप से एक हैं, भक्ति आंदोलन, नवजागरण और स्वाधीनता संग्राम की भाषाएं भारतीय भाषाएं ही थीं। हिंदी, संस्कृत, कन्नड, तेलुगु, तमिल और मलयालम आदि भाषाएं अलग होते हुए भी इनमें प्रयुक्त काव्य रूप, मिथक,जनश्रुतियाँ आदि कमोवेश समान हैं। भारत में विभिन्न भाषाओं में कई शताब्दियों से बाल्यावस्था की शिक्षा के विकास के लिए समृद्ध प्रथाएँ हैं। स्थानीय बोली की परम्पराओं के अंतर्गत विकसित ये प्रथाएँ जिनमें कला, कहानियाँ, कविता, खेल, गीत और बहुत कुछ शामिल हैं, इन सभी को पाठ्यक्रम में शामिल करने की आवश्यकता है। विभिन्न प्रान्तों से पाठ्य सामग्री को अनूदित कर पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाना चाहिए ताकि विद्यार्थी अन्य प्रान्तों की संस्कृति से भी परिचित हो सके।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति से जुड़ाव

प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार की गयी है।जहां प्रासंगिक लगे वहाँ भारत की समृद्ध और विविध प्राचीन और आधुनिक संस्कृति और ज्ञान प्रणालियों और परंपरा को शामिल करना और उससे प्रेरणा पाना आवश्यक है। सभी स्तरों पर पाठ्यचर्या और शिक्षा विधि का समग्र केंद्रबिंदु, शिक्षा प्रणाली को रटने की पुरानी प्रथा से अलग वास्तविक समझ और ज्ञान की ओर ले जाना है। शिक्षा का उद्देश्य केवल संज्ञानात्मक समझ न होकर चरित्र निर्माण और इक्कीसवी शताब्दी के मुख्य कौशल से सुसज्जित करना है।

विभिन्न पाठ्यक्रमों में निरन्तरता और क्रमबद्धता पर बल

पाठ्यक्रम निर्माण में इस बात पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है कि प्रारंभ से अंतिम कक्षा तक अंतर्वस्तु में आंतरिक अन्विति हो। साथ ही पाठ्यक्रम के विकास में क्रमबद्धता हो।

उपरोक्त दिशानिर्देश के अनुसार पूर्व की पाठ्यपुस्तकों पर विचार हो और राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप भारतीय ज्ञान परंपरा को आधार बनाते हुए नई पाठ्य पुस्तकों का निर्माण हो। निम्नलिखित कुछ पाठ को हम उदाहरण के तौर पर देख सकते हैं, जिन्हें पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जा सकता है–

1. **मेरे शिक्षकः ए० पी० जे० अब्दुल कलामः** एक बालक के जीवन में शिक्षकों की भूमिका– आत्मकथा अग्नि की उड़ान में से उद्धरित।
2. **हिम्मत और जिंदगीः रामधारी सिंह दिनकर (प्रेरणादायक निबंध):** यह निबंध हमें परिश्रम करने के लिए प्रेरित करता है क्योंकि परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। इस निबंध से बच्चों में लगन, हिम्मत, साहस, कर्मठता आदि तत्वों का सृजन हो सकेगा।
3. **स्वामी विवेकानन्दः प्रेमचंद (रेखाचित्र):** इस पाठ से बच्चे रेखाचित्र विधा से परिचित होंगे। साथ ही अपने देश के महापुरुष स्वामी विवेकानंद के महान व्यक्तित्त्व से भी परिचित हो पाएंगे।
4. **शरणागत (कहानी):** वृन्दावनलाल वर्मा द्वारा रचित इस कहानी में यह संदेश है कि मानवीय मूल्यों से ज्यादा कुछ नहीं हैं)
5. **मेवाड़ की भूमि में:** राहुल सांकृत्यायन 'यात्रा के पन्ने से' यह एक यात्रा वृत्तांत है जिसमें मेवाड़ के बारे में तथ्य परक जानकारी है।
6. **क्या गांधी युग बीत गयाः** विवेकी राय (चिंतन प्रधान निबंध)
7. **उत्साह (निबंध):** आचार्य रामचंद्र शुक्ल, इस निबंध में उन्होंने उत्साह के संदर्भ में अपने मौलिक विचार प्रस्तुत किए है। उत्साह निबंध के आरंभ में उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि दुख के वर्ग में भय और उत्साह के वर्ग में आनंद का स्थान एक जैसा है।
8. **जंगल (कहानी):** चित्रा मुदगलः लेखिका की यह कहानी पशुओं के जीवन और उनकी भावनाओं पर केंद्रित है। प्रस्तुत कहानी में मुदगल जी ने खरगोश के माध्यम से बाल मानस की अनुभूतियों, प्राणियों के साथ व्यवहार, उनके संरक्षण एवं प्राणिमात्र के प्रति दयाभाव को दर्शाया है। इस पाठ से बच्चों में भी पशुओं के प्रति दया भाव की उत्पत्ति होगी और वे उनके प्रति संवेदनशील हो पाएंगे।

9. **मेरे मास्टर साहबः चंद्रगुप्त विद्यालंकारः** (गुरुजनों/अध्यापकों के प्रति श्रद्धा/ कृतज्ञता का संदेश इस कहानी के मूल में हैं।) भारतीय जीवन दर्शन में और ज्ञान परम्परा में हमेशा से गुरुओं का स्थान सर्वोपरि माना गया है। इसलिए यह आवश्यक है कि विद्यार्थियों को हमेशा यह बोध रहे कि गुरु का उनके जीवन में क्या महत्त्व है। गुरु के महत्त्व को इस श्लोक से भी समझ सकते हैं–

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात् परं ब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नमः"

अतः इस दृष्टिकोण से यह कहानी पाठ्यक्रम में रखी जा सकती है।

10. **शिष्टाचारः** भीष्म साहनीः लोग गरीब हो सकते हैं परंतु उनके भी मूल्य हैं, शिष्टाचार के प्रति सचेत हैं जो कभी-कभी संभ्रांत व्यक्तियों में भी नहीं होता है – मानवीयता का लोप, अविश्वास।

    आज के भूमंडलीकरण के दौर में जब लोगों का विश्वास एक दूसरे से खत्म होता चला जा रहा है ऐसे में नैतिक मूल्य और मानवीयता ही हमें एक दूसरे से जोड़कर रख सकता है। इस दृष्टिकोण से यह कहानी विद्यार्थियों में मानवीयता और विश्वास का भाव पैदा करेगा।

11. **विक्रम साराभाईः** जीवनीः अमृता साह द्वारा रचित यह जीवनी एक ऐसे वैज्ञानिक के जीवन का चित्रण करती है जिन्होंने वैश्विक पटल पर भारत का नाम रोशन किया। इस जीवनी का एक अंश या पूरा भाग हम पाठ्यक्रम में रख सकते हैं। इससे विद्यार्थियों में ज्ञान-विज्ञान के प्रति रुचि बढ़ेगी और वह अपने नायकों के संघर्ष एवं सफलता की कहानी को भी जान पायेंगे।

12. **स्वराज्य की नींव- विष्णु प्रभाकर (एकांकी):** महारानी लक्ष्मीबाई पर आधारित इस रचना में स्वतंत्रता पूर्व की वीरांगनाएँ जैसे झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, जूही और वीर पुरुष तात्या की वीरता के बारे में पता चलता है। साथ ही उस समय के स्वतंत्रता आंदोलन तथा स्वराज्य की भावनाओं का पता चलता है। यह आवश्यक है कि हम आने वाली पीढ़ी को ऐसे वीर सेनानियों के सघर्षो से अवगत कराते रहें, इस दृष्टिकोण से यह एक उपयोगी पाठ है।

13. **परमवीर चक्र विजेता (परमवीर चक्र विजेता- अशोक गुप्ता–नया साहित्य, कश्मीरी गेट, नई दिल्ली):** परमवीर चक्र भारतीय सशस्त्र सेनाओं में, युद्धभूमि में दिखाई गई वीरता के लिए दिया जाने वाला सर्वोच्च पुरस्कार है। यह ऐसे वीरों को प्रदान किया जाता है जिन्होंने लड़ाई के मैदान में अपनी जान की परवाह किए बिना, अपनी असाधारण हिम्मत तथा बहादुरी का परिचय दिया हो। इन इक्कीस विजेताओं में 14 वीर तो ऐसे हैं जिन्होंने रणभूमि में अपने प्राण तक गंवा दिए और उन्हें यह पुरस्कार मरणोपरांत दिया गया। इन भारतीय बहादुर सेनानियों की जीवन गाथा को पढ़ना विद्यार्थियों के लिए प्रेरणादायक अनुभव साबित होगा।

14. **राष्ट्र का स्वरूपः वासुदेवशरण अग्रवालः** इस निबन्ध में लेखक बताते हैं कि राष्ट्र का स्वरूप जिन तत्त्वों से मिलकर बना है, वे तीन तत्व हैं–पृथ्वी (भूमि), जन और संस्कृति। यह सभी राष्ट्र निर्माण के लिए बहुत जरूरी हैं। राष्ट्रीयता का आधार जितना सशक्त होगा, राष्ट्रीयता की भावनाएँ भी उतनी ही अधिक विकसित होंगी। इस दृष्टिकोण से ऐसे निबंध छात्रों में राष्ट्र बोध की चेतना उत्पन्न करेंगे।

15. **मेरी बद्रीनाथ यात्राः विष्णु प्रभाकर (यात्रा वृत्तांत):** इस यात्रा वृतांत के माध्यम से हिमालय की सुरम्य प्रकृति का दार्शनिक एवं अदार्शनिक भाव से वर्णन किया है। रचनाकार नें हिमालय यात्रा के दौरान प्रकृति के विभिन्न रूपों का सुंदर एवं सजीव चित्रण तथा अपनी यात्रा में होने वाले अनुभवों को इस यात्रा वृतांत के माध्यम से प्रकट किया है। बद्रीनाथ केवल एक स्थल नहीं वरन हिंदुस्तान की संस्कृति से जुड़ा अभिन्न हिस्सा भी है। ऐसे पाठों से ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विरासत का ज्ञान भी छात्रों को होगा।

16. रामायण व महाभारत से कुछ ऐसे प्रसंगों को पाठ्यक्रम में ले सकते हैं जो परिवार, समाज व देश के प्रति आदर्श–भाव को स्थापित कर सकते हैं।

17. **पेशोला की प्रतिध्वनिः** जयशंकर प्रसादः इस कविता में कवि उदयपुर की पिछोला झील के किनारे बने हुए महाराणा के महलों और उनके झील में बने प्रतिबिंब के माध्यम से भारतीय लोगों को पुकार कर बार बार कह

रहा है कि हम आज हमारी पुरानी अस्मिता को भूल कर सो गए हमें पुनः जागना है तथा देश के पुनरुद्धार का भार उठाना है। इससे देश के प्रति समर्पण और कुछ कर गुजरने की चाह उत्पन्न होती है।

18. **मगध और कलिंग- श्रीकांत वर्मा:** युद्ध एवं शांति का संदेश, सम्राट का हृदय परिवर्तन, बौद्ध चिंतन की विशेषता आदि के माध्यम से विद्यार्थियों को बहुत कुछ नया सिखाया जा सकता है।

19. **मृत्तिका:** नरेश मेहता (मिट्टी के अनेक रूप- उसके प्रति श्रद्धा) कवि ने अपनी कविता में सुंदर ढंग से मनुष्य और मिट्टी के संबंधों पर प्रकाश डाला हैं। पुरुषार्थ द्वारा मनुष्य अपने अहंकार को पराजित कर मिट्टी को दैवी शक्ति में बदल देता है। मनुष्य ने अपनी चिन्मयी शक्ति को मिट्टी की प्रतिमा के जरिए अंकित किया है। पशुत्व से देवत्व तक के इस लंबे संग्राम में पुरुषार्थ ही मनुष्य को विकास की ओर ले जाते हैं पुरुषार्थ से बड़ा देवत्व कोई नहीं। इस कविता से बच्चे कर्मशील बनेंगे।

20. **'आर्य':** मैथिली शरण गुप्त: इस कविता में अपने देश के गौरव का वर्णन है। इसमें देशवासियों को अपने इतिहास से अवगत कराने का प्रयास किया है कि हम कितने देशभक्त थे कितने साहसी थे कितने अहिंसावादी और आज हम क्या हो गए हैं। हमें पुनः अपने अंदर उन सभी गुणों का संचार करना होगा जिससे देश गर्व कर सके।

21. **कायर मत बन:** नरेंद्र शर्मा: इस कविता के अंतर्गत यह सीख कवि ने दी है कि कितनी भी जीवन में बाधाएं आएं हमें उनका सामना दृढ़ता के साथ करना हैं। हम कुछ भी करें लेकिन हमें कायर नहीं बनना हैं।

22. **'ओ पीले पात':** डॉ रामकुमार वर्मा (वृद्धावस्था/जीवन के अंतिम चरण की स्थिति और अपने परिवार तथा समाज के प्रति संवेदना)

    आज वृद्ध-विमर्श की शुरुआत हो चुकी है इस दृष्टिकोण से हमें इस गंभीर विषय पर चिंतन करने की आवश्यकता है। इसलिए यह पाठ भी विद्यार्थी को संवेदनशील बनाने में सहायक साबित होगा।

23. **'मां कह एक कहानी':** महादेवी वर्मा: यह गौतम बुद्ध के बाल्यकाल में घटित प्रसंग पर आधारित है। इसमें न्याय, दया, मानवीयता का संदेश है।

24. **'अभिनंदनीय नारी': डॉक्टर जयंती प्रसाद नौटियालः** इसमें कवि ने भारतीय नारियों की सहनशीलता उनकी विनम्रता उनके स्त्री सुलभ गुणों को उनके परिवार के प्रति सेवा भाव को व्याख्यायित किया है। इस कविता के माध्यम से बच्चों में देश,समाज और अपने घर की सभी नारियों के प्रति सम्मान का भाव जागृत होगा।
25. भारतीय ज्ञान-परंपरा से भारतीय विदुषियों के प्रेरक प्रसंगों को भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जा सकता है जिससे विद्यार्थियों के मन में स्त्रियों के प्रति सम्मान जनक भाव उत्पन्न हो। जैसे ख्रमैत्रेयी, गार्गी आदि।
26. कुछ ऐसे पाठ को भी शामिल किया जा सकता है जो देश की अन्य प्रांतीय भाषाओं में रचित हो। उनका अनुवाद करके हम पाठ्यक्रम का हिस्सा बना सकते हैं। इससे अन्य प्रान्तों की भाषा, समाज, संस्कृति की जानकारी भी हम विद्यार्थियों को दे सकते हैं। जैसे- असमिया भाषा में रचित यह गीत असम में राष्ट्रगान के बाद गाया जाता है। इससे विद्यार्थियों को भी एक नई जानकारी होगी-

मूल असमिया राज्यगीत

অ' মোৰ আপোনাৰ দেশ
অ' মোৰ চিকুণী দেশ
এনেখন শূৱলা,
এনেখন সুফলা
এনেখন মৰমৰ দেশ।।

অ' মোৰ সুৰীয়া মাত
অসমৰ সুৱদী মাত
পৃথিৱীৰ ক'তো
বিচাৰি জনমটো
নোপোৱা কৰিলেও পাত।।

অ' মোৰ ওপজা ঠাই
অ' মোৰ অসমী আই
চাই লওঁ তোমোৰ

মুখনি এবাৰ
হেঁপাহ মোৰ পলোৱা নাই।।

''ओ मेरे प्यारे देश!
ओ मेरे सुंदर देश!
बेहद सुमधुर, बेहद उदार
बहुत प्रिय हो मुझको तुम,
ओ मेरे प्यारे देश!

ओ मेरी सुरमयी भाषा!
प्यारी असमिया भाषा!
मैं जो तुम्हें संसार भर खोजूँ
तो भी कहीं नहीं पाऊँगा।
ओ मेरी सुरमयी भाषा!

ओ मेरी जन्मदायिनी पृथिवी!
ओ मेरी आसाम माँ!
एक बार और अपना मुखड़ा निहारने दो न
क्या करूँ मेरा मन ही नहीं भरता।
ओ मेरी जन्मदायिनी पृथिवी!''

इस प्रकार प्रत्येक प्रांत से कुछ न कुछ लिया जा सकता है। जैसे कन्नड शिवशरणों के वचन, तमिल के संगम साहित्य का हिन्दी रूपान्तरण, तमिल भाषा के तिरूवल्लूर की वाणियों (तिरुकुरल) का अनूदित रूप भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जा सकता है।

अपेक्षित परिणाम

हिंदी भाषा और साहित्य से संबंधित पाठ्यक्रम और पाठ्य पुस्तक निर्माण के अपेक्षित परिणाम प्राप्त होंगे। इसके माध्यम से देश की सभ्यता, संस्कृति, कला व नाना परम्पराओं से विद्यार्थी अवगत होंगें और उनके आदर्श चरित्र का निर्माण होगा।

विद्यार्थी देश की स्वर्णिम विरासत को जान व समझ सकेंगे और राष्ट्र निर्माण में अपनी सक्रिय भूमिका निभा पाएंगें। ऋग्वेद की ऋचाओं में कहा गया है:

आ नो भद्राः क्रतवों यंतु विश्वत;

अर्थात सात्विक विचार हर दिशा से आने दो। स्वयं को किसी चीज से वंचित न करो, अच्छी बातों को ग्रहण करो, तभी भला होगा। हमारी इसी भारतीय ज्ञान परंपरा के साथ हम अपने पाठयक्रम को नए सिरे से तैयार करें, जिसमें भारतीयता, वैज्ञानिकता व तार्किकता के संतुलन का समावेश हो।

Section I

Mandate of NEP 2020 & Developing New Textbooks

CHAPTER – 1

HIGHLIGHTS OF NATIONAL EDUCATION POLICY 2020

Vision of NEP

This National Education Policy envisions an education system rooted in Indian ethos that contributes directly to transforming India, that is Bharat, sustainably into an equitable and vibrant knowledge society, by providing high-quality education to all, and thereby making India a global knowledge superpower. The Policy envisages that the curriculum and pedagogy of our institutions must develop among the students a deep sense of respect towards the Fundamental Duties and Constitutional values, bonding with one's country, and a conscious awareness of one's roles and responsibilities in a changing world. The vision of the Policy is to instill among the learners a deep-rooted pride in being Indian, not only in thought, but also in spirit, intellect, and deeds, as well as to develop knowledge, skills, values, and dispositions that support responsible commitment to human rights, sustainable development and living, and global well-being, thereby reflecting a truly global citizen.

Multilingualism and the power of language

4.11. It is well understood that young children learn and grasp nontrivial concepts more quickly in their home language/mother

tongue. Home language is usually the same language as the mother tongue or that which is spoken by local communities. However, at times in multi-lingual families, there can be a home language spoken by other family members which may sometimes be different from mother tongue or local language. Wherever possible, the medium of instruction until at least Grade 5, but preferably till Grade 8 and beyond, will be the home language/mother tongue/local language/ regional language. Thereafter, the home/local language shall continue to be taught as a language wherever possible. This will be followed by both public and private schools. High-quality textbooks, including in science, will be made available in home languages/ mother tongue. All efforts will be made early on to ensure that any gaps that exist between the language spoken by the child and the medium of teaching are bridged. In cases where home language/ mother tongue textbook material is not available, the language of transaction between teachers and students will still remain the home language/mother tongue wherever possible. Teachers will be encouraged to use a bilingual approach, including bilingual teaching-learning materials, with those students whose home language may be different from the medium of instruction. All languages will be taught with high quality to all students; a language does not need to be the medium of instruction for it to be taught and learned well.

4.12. As research clearly shows that children pick up languages extremely quickly between the ages of 2 and 8 and that multilingualism has great cognitive benefits to young students, children will be exposed to different languages early on (but with a particular emphasis on the mother tongue), starting from the Foundational Stage onwards. All languages will be taught in an enjoyable and interactive style, with plenty of interactive conversation, and with early reading and subsequently writing in the mother tongue in the early years, and with skills developed for reading and writing in other languages in Grade 3 and beyond. There will be a major effort from both

the Central and State governments to invest in large numbers of language teachers in all regional languages around the country, and, in particular, for all languages mentioned in the Eighth Schedule of the Constitution of India. States, especially States from different regions of India, may enter into bilateral agreements to hire teachers in large numbers from each other, to satisfy the three-language formula in their respective States, and also to encourage the study of Indian languages across the country. Extensive use of technology will be made for teaching and learning of different languages and to popularize language learning.

4.13. The three-language formula will continue to be implemented while keeping in mind the Constitutional provisions, aspirations of the people, regions, and the Union, and the need to promote multilingualism as well as promote national unity. However, there will be a greater flexibility in the three-language formula, and no language will be imposed on any State. The three languages learned by children will be the choices of States, regions, and of course the students themselves, so long as at least two of the three languages are native to India. In particular, students who wish to change one or more of the three languages they are studying may do so in Grade 6 or 7, as long as they are able to demonstrate basic proficiency in three languages (including one language of India at the literature level) by the end of secondary school.

4.14. All efforts will be made in preparing high-quality bilingual textbooks and teaching-learning materials for science and mathematics, so that students are enabled to think and speak about the two subjects both in their home language/mother tongue and in English.

4.15. As so many developed countries around the world have amply demonstrated, being well educated in one's language, culture, and traditions is not a detriment but indeed a huge benefit to educational, social, and technological advancement. India's

languages are among the richest, most scientific, most beautiful, and most expressive in the world, with a huge body of ancient as well as modern literature (both prose and poetry), film, and music written in these languages that help form India's national identity and wealth. For purposes of cultural enrichment as well as national integration, all young Indians should be aware of the rich and vast array of languages of their country, and the treasures that they and their literatures contain.

4.16. Thus, every student in the country will participate in a fun project/activity on 'The Languages of India', sometime in Grades 6-8, such as, under the *'Ek Bharat Shrestha Bharat'* initiative. In this project/activity, students will learn about the remarkable unity of most of the major Indian languages, starting with their common phonetic and scientifically-arranged alphabets and scripts, their common grammatical structures, their origins and sources of vocabularies from Sanskrit and other classical languages, as well as their rich inter-influences and differences. They will also learn what geographical areas speak which languages, get a sense of the nature and structure of tribal languages, and learn to say commonly spoken phrases and sentences in every major language of India and also learn a bit about the rich and uplifting literature of each (through suitable translations as necessary). Such an activity would give them both a sense of the unity and the beautiful cultural heritage and diversity of India and would be a wonderful icebreaker their whole lives as they meet people from other parts of India. This project/activity would be a joyful activity and would not involve any form of assessment.

4.17. The importance, relevance, and beauty of the classical languages and literature of India also cannot be overlooked. Sanskrit, while also an important modern language mentioned in the Eighth Schedule of the Constitution of India, possesses a classical literature that is greater in volume than that of Latin and Greek put together,

containing vast treasures of mathematics, philosophy, grammar, music, politics, medicine, architecture, metallurgy, drama, poetry, storytelling, and more (known as 'Sanskrit Knowledge Systems'), written by people of various religions as well as non-religious people, and by people from all walks of life and a wide range of socio-economic backgrounds over thousands of years. Sanskrit will thus be offered at all levels of school and higher education as an important, enriching option for students, including as an option in the three-language formula. It will be taught in ways that are interesting and experiential as well as contemporarily relevant, including through the use of Sanskrit Knowledge Systems, and in particular through phonetics and pronunciation. Sanskrit textbooks at the foundational and middle school level may be written in Simple Standard Sanskrit (SSS) to teach Sanskrit through Sanskrit (STS) and make its study truly enjoyable.

4.18. India also has an extremely rich literature in other classical languages, including classical Tamil, Telugu, Kannada, Malayalam, Odia. In addition to these classical languages Pali, Persian, and Prakrit; and their works of literature too must be preserved for their richness and for the pleasure and enrichment of posterity. As India becomes a fully developed country, the next generation will want to partake in and be enriched by India's extensive and beautiful classical literature. In addition to Sanskrit, other classical languages and literatures of India, including Tamil, Telugu, Kannada, Malayalam, Odia, Pali, Persian, and Prakrit, will also be widely available in schools as options for students, possibly as online modules, through experiential and innovative approaches, to ensure that these languages and literature stay alive and vibrant. Similar efforts will be made for all Indian languages having rich oral and written literatures, cultural traditions, and knowledge.

4.19. For the enrichment of the children, and for the preservation of these rich languages and their artistic treasures, all students in all

schools, public or private, will have the option of learning at least two years of a classical language of India and its associated literature, through experiential and innovative approaches, including the integration of technology, in Grades 6-12, with the option to continue from the middle stage through the secondary stage and beyond.

4.20. In addition to high quality offerings in Indian languages and English, foreign languages, such as Korean, Japanese, Thai, French, German, Spanish, Portuguese, and Russian, will also be offered at the secondary level, for students to learn about the cultures of the world and to enrich their global knowledge and mobility according to their own interests and aspirations.

4.21. The teaching of all languages will be enhanced through innovative and experiential methods, including through gamification and apps, by weaving in the cultural aspects of the languages - such as films, theatre, storytelling, poetry, and music - and by drawing connections with various relevant subjects and with real-life experiences. Thus, the teaching of languages will also be based on experiential-learning pedagogy.

4.22. Indian Sign Language (ISL) will be standardized across the country, and National and State curriculum materials developed, for use by students with hearing impairment. Local sign languages will be respected and taught as well, where possible and relevant.

CHAPTER – 2

EXTRACTS OF 331st REPORT: REFORMS IN CONTENT AND DESIGN OF SCHOOL TEXT BOOKS*

Department-Related Parliamentary Standing Committee on Education, Women, Children, Youth and Sports has presented the "Three Hundred and Thirty First Report of the Committee on "Reforms in Content and Design of School Text books". The report focuses on:

- Removing references to un-historical facts and distortions about our national heroes from the text books;
- Ensuring equal or proportionate references to all periods of Indian History;
- Highlighting the role of great historic women achievers.

The relevant highlights of the report are given below

- The report elaborates upon National Curriculum Framework that will provide roadmap for the development of new generation of textbooks providing more space to experiential learning for bringing in students the conceptual clarity and motivate students

* This report was presented by Dr. Vinay P. Sahasrabuddhe, Chairman Department-related Parliamentary Standing Committee on Education, Women, Children, Youth and Sports on 26th November, 2021

for self-learning and self-assessment to improve not only cognitive skills but also the social -personal qualities.

- New NCF for School Education will guide the development of new generation textbooks across the subject areas. The new generation textbooks across subject areas will take care of the thematic, inter-disciplinary and multi-disciplinary approaches to highlight Indian culture and traditions, national heroes including women achievers and great regional personalities besides providing coverage to different phases of Indian history.
- NCF must focus on restructuring of stages of curriculum and pedagogy as 5+3+3+4, more focus is on Early Childhood Care and Education and Foundational Literacy and Numeracy, Integration of Pre-vocational Education from classes 6 to 8, Integration of Knowledge of India across the stages, focus on the holistic development through experiential learning, flexibility in choice of subjects etc.
- The report further informs about new ways for promotion of experiential learning, art integrated learning, sports integrated learning and competency-based learning, including internships, 10 bag less days, peer tutoring, interdisciplinary and multidisciplinary projects and development of fun-based student appropriate learning tools to promote and popularize Indian arts and culture etc.
- It also highlights different pedagogies such as group discussions, mock drills, excursion trips, visits to various places, such as zoo, museum, local store or restaurant; field study, classroom interactions, etc. were also being used to support experiential learning. Also, opportunities were provided to break subject boundaries by integration of art forms (visual or performing arts, such as dance, design, painting, photography, theatre, writing, etc.), stories, pictures, fun activities or games, sports,

etc. for holistic learning of concepts of science and mathematics without burden.

- It further states that the future syllabi and textbooks will be based on goals and competencies which will lead towards mapping of core essentials with competencies hence lessening the curriculum burden and focusing on holistic learning and development. The curriculum and syllabi should provide lots of space for experiential learning and textbooks will be based on competencies rather than content.
- NEP, 2020 recommends integration of knowledge of India across the stages and subject areas in the curriculum. Under this concern, as per the directions of new National Curriculum Framework for school education, various activities including development of digital and audio-video materials will be taken up.
- Thematic, interdisciplinary and multidisciplinary approaches to highlight Indian Culture and Traditions, our National Heroes including women achievers and great personalities from different regions of the country and perspective of equity, integrity, gender parity, constitutional values and concern for environment and other sustainable development goals.
- Experiential Learning through projects and age-appropriate activities, simple language, glossary, more in-text and end-text assessment questions and reduction of curriculum load to core essentials.
- All textbooks will be visually rich with illustrations, photographs, maps, etc., the illustrations and activities will be age/class appropriate. Local flavor will be added to the core essentials in textbooks of the States, to showcase the diversity of the country.
- Local flavor will be added to the core essentials in textbooks of the States, to showcase the diversity of the country. NCERT

has been working towards bringing dictionary on Indian sign language, which will help in developing material in sign language. The upcoming books and other materials based on the new NCFSC will follow the same pursuit in future.

- More emphasis on role of women: Role of women as rulers, their role in knowledge sector, social reforms, Bhakti movement, art and culture, freedom struggle **(Jnana Prabodhini, Pune)**. Coverage of great historic women heroes belonging to different periods of Indian History including Gargi, Maitreyi, rulers like Rani of Jhansi, Rani Channamma, Chand Bibi, Zalkari Bai etc. will be taken up in the new textbooks, supplementary materials and e-content.
- National initiatives such as Swachh Bharat, Digital India, 'Beti Bachao Beti Padhao', 'Demonetization', GST etc. were integrated in the new textbooks in the review of syllabi and textbooks in 2017-18. Contents were added in history textbooks regarding knowledge, traditions and practices of India. For example, addition of material on Vikram Samvat, Metallurgy, Shivaji Maharaj, Paika revolt, Subhash Chandra Bose, Swami Vivekanand, Ranjeet Singh, Rani Avantibai Lodhi and Sri Aurbindo Ghosh.
- The objective of teaching history was to instil high self-esteem in students, National Renaissance, National unity, Social Inclusion and establish links with cultural roots. Thus following points are to be kept in mind while writing text books:
    - Depicting cultural unity
    - Linguistic heritage- importance of Sanskrit, Prakrit and Pali for national unity and international spread.
    - Linking Indian languages.
    - Civilization development -Vedic to present.

    - Comparison of scientific temper with other civilizations on scientific and objective ground.
    - History of sacrifices of various segments of Indian society for saving cultural values.
    - Social inclusion.
    - India and its cultural boundaries.
    - Civilization proofs of India in other countries of the world.
    - Religio-cultural emissaries from India should have proper place.
    - Local, national as well as international influence of any event or thought should be highlighted. **(Bharatiya Shikshan Mandal, New Delhi)**

- The representatives of **Vidya Bharti** also put forth their views on the subject and pointed out certain factual distortions about vedic tradition, incompatibility of certain facts with constitutional ideals and values in the school textbooks. They suggested a thorough review and removing of such distortions/ discrepancies from the school textbooks. They also mentioned about 'My NEP' programme launched to reach non-academic people and to make them learn about the things in the National Education Policy in a nutshell.
- Inclusion of History of North East India: Bhakti and social movements in Assam and Manipur, tribal heroes who fought against British, contribution of Arunachal and Manipur with reference to Azad Hind Fauj and 1962 war, dynasties in Assam, Manipur, Tripura, Meghalaya. **(Jnana Prabodhini, Pune)**
- Post-independence History of Indian pride also needs to be stressed: Story of ISRO, story of BARC, story of cooperative movement (Story of Amul), story of restorations (Somnath, Hampi, archaeological sites such as Lothal) etc. **(Jnana Prabodhini, Pune)**

- The Design of textbooks should be:
  - Curriculum of history can be organized in an ascending order. The scope of curriculum grows with the growth of experience sphere of students from local to global.
  - Digitization of textbooks to make them attractive and dynamic document to go beyond text/ printed form: need to add audio-visuals with QR codes.
  - Inclusion of intellectual games, simulations. VR Games modeled to let students experience the historical times (for example 'Real lives') **(Jnana Prabodhini, Pune)**
- As far as the Modern period is concerned, some leaders have received more weightage as compared to others. The role of Subhash Chandra Bose, Sardar Patel, Bhagat Singh, Ram Prasad Bismil, Lala Lajpat Rai, Khudiram Bose, Surya Sen, and even the women revolutionaries must be highlighted. The contribution of Veer Savarkar needs to be given enough weightage. **(Public Policy Research Centre, New Delhi)**
- The representatives pointed out that proportionate representation across Region, Time Period, and Events should be given in the Textbooks. South and East Indian dynasties have been highly under-represented. The history of great kingdoms like the Marāṭhas, Coḷas, and Vijayanagara as well as the early Kāśmīra dynasties, Kaliṅgas, Gaṅgas, Gajapatis, Kākatiyas, Ahoms, Ceras, Pallavas, Pāṇḍyas, Pālas, Senas, and Pratihāras either get a passing mention or not even that. The crucial role they played in our history must be elaborated. They further added that we must include these dynasties, which represent the very spirit of Bhāratīya Civilization that the Radhakrishnan Committee wanted every student to imbibe. **(Samvit Research Foundation, Bengaluru).** The following points were further added:

- Bhāratīya saṃskṛti has been widespread from Mesopotamia in the West to Japan in the East, from the Himalayas in the North to Indonesia in the South
- The Zend Avesta has significant relationship with the late Ṛigvedic period
- Our Itihāsas and Purāṇas, particularly the Rāmāyaṇa, have been an integral part of the culture of many regions of Southeast Asia.

- The representatives also added that the history curriculum hardly emphasizes the role played by women in our history. It is important for students to learn –
  - the importance our civilization has given to women and how women participated in all aspects of life over the centuries
  - the freedom and opportunities available to women in public life
  - the great achievements of women from ancient times until the present day
  - the temporary changes in status of women in the wake of invasions
  - to progressively appreciate that our paramparā has a beautiful and holistic perspective of strītva that is far beyond modern formulations.
- They further suggested that this can best be accomplished by exposing the children to factual information from the past:-
  - Introduce the three great goddesses of the Vedas – Bhāratī, Ilā, Sarasvatī. Introduce a few Veda-suktas for which women are the mantra-draṣṭāriṇīs. In the Vedic period, mention woman scholars, brahmavādinīs, and mantra-draṣṭāriṇīs, including instances of where women learnt the Vedas.

- ○ Present the dynamic role played by women in the Rāmāyaṇa and Mahābhārata. Give a complete picture of women-related references in the smṛtis.
- ○ Portrayal of women in various classical literary accounts (e.g. Kālidāsa's Mālavikāgnimitra) that indirectly shows how the society was shaping up at that time.
- ○ The critical contributions of queens in every century and every region across communities. Prominent rājamātas who played a role in shaping their children as rulers; important women warriors, scholars, poetesses, philanthropists, public personalities, sanyāsinīs, philosophers, saints, and freedom fighters

- The Committee is of the view that there should be an appropriate comparison of the portrayal of women heroes like Rani Laxmi Bai, Zalkari Bai, Chand Bibi etc vis-a-vis their male counterparts. The Committee observes that the women heroes from different regions and eras should be given equal weightage highlighting their contributions in the history textbooks.
- The Committee also observes that notable women in all fields, and their contributions, like that of Ahilyabai Holkar, Abala Bose, Anandi Gopal Joshi, Anasuya Sarabhai, Arati Saha, Aruna Asaf Ali, Kanaklata Deka, Rani Ma Guidinglu, Asima Chatterjee, Captain Prem Mathur, Chandraprabha Saikini, Cornelia Sorabji, Durgavati Devi, Janaki Ammal, Mahasweta Devi, Kalpana Chawla, Kamaladevi Chattopadhyay, Kittur Chennamma, M. S. Subbulakshmi, Madam Bhikaiji Cama, Rukmini Devi Arundale, Savitribai Phule and many others have not found adequate mention in NCERT textbooks.
- The Committee observes that generally Women are underrepresented in school textbooks, many a times shown through images in traditional and voluntary roles, leading to

formation of gender stereotypes in the impressionistic minds of students and feels that there is a need to undertake an analysis of the textbooks from the Gender perspective as well.

- The Committee observes that in the suggestions received regarding updation of NCERT books, emphasis was laid on providing equal representation to the North-East Indian States and the History. It was suggested that developmental models and economic policies should have sections dealing with and talking about the complex realities and demographics of the North-East along with the history of civilizations and tribal communities of the North-eastern region. Furthermore, the textbook content should also ensure adequate balance in representing Hill areas and Plains areas so as to recognise both communities adequately.

Subject Experts

Prof. J.S. Rajput, Former Director, NCERT in his submission before the Committee stated that Reforms in the content and design of Textbooks should focus on the following aspects:

a. Distortion of historical facts where one ruler is remembered and other equally prominent one's finds no mention.

b. Not only periods, history must be just and objective to considerations of regional imbalances, historical contributions of the communities, people and practices.

c. Social and cultural distortions must not be presented by those bound by prejudices and biases.

He stated that the content and design of textbooks is a product of Policy on Education, Curriculum Framework to be developed after its sensitive comprehension, followed by the process of preparing detailed syllabus for each textbook; for each grade /class. The quality

and content of the textbook shall depend on the quality of the authors; that include depth, seriousness, professional competence and commitment of individuals and institutions assigned the task. A good textbook can be authored only by those who are lifelong learners.

It was emphasized that National level textbooks are essential for several reasons, but it must be remembered that local element of curriculum also cannot be ignored. A class three textbook on environmental education just cannot be same in Tripura and Thiruvananthapuram. Hence, it is necessary to strengthen expertise and institutions at the State level. We need high level experts in textbook writing, evaluation, assessment, growing up, guidance, and all that children could need. now education is not only about/through textbooks, but textual materials for online learning, self-learning, digital learning, open and distance learning, and a couple of other terms that are in vogue. It has to be hybrid teaching and learning in future. Things have changed drastically in 2020, and some of the impacts shall continue in future as well.

New discoveries are taking place, new facts are coming up, and textbooks just cannot remain the same. This is worsened if the history is written with certain pre-conceived biases resulting out of politically-constrained ideological bindings. History writing in India has suffered on these unacceptable considerations, and it must be extracted - and liberated -out of gross subjectivity and ideological bias to transparent objectivity, and openness of mind, willingness to enter into dialogue with those holding diametrically opposite views. New facts have emerged around us; say; Aryan Invasion theory, Saraswati River, Ram Setu, and so many more solely because of new scientific advancements and new tools that have led to new researches. These just cannot be ignored in preparing new textbooks. ndian history writing needs a thorough professional review. As it was determined to highlight certain individuals, regimes and eras, it suffers from

serious imbalances of every possible type. He further pointed out the British tried to downgrade the great contributions of ancient India in philosophy, science, mathematics, spirituality, medicine and other fields and it was continued to be neglected in our textbooks. While considerable initiatives were taken for removing gender bias and caste discriminations, history writing remained confined to the hegemony of a select group of few academics for over five decades. The post- independence history books are deficient on 'linking Indians to India'; and this includes history, heritage and culture. In fact, this aspect needs serious informed and scholarly deliberations before textbooks are prepared in response to the NEP-2020.

The second most important aspect that no textbook writer could ignore pertains to the need for strengthening social cohesion and religious amity. Racial discrimination and caste considerations - in varied connotations – have not vanished fully even in what are known as most advanced societies. We must accept that these challenges still exist even before us; and these require an attitudinal transformation. Our Children must know that different religions are a reality, that no religion could claim superiority over any other.

Shri Hukmdev Narayan Yadav, Ex-MP, Lok Sabha emphasized the importance of the subject and suggested for detailed discussion with more stakeholders and eminent educationists. The focus should not 'be only on facts and figures while writing Indian history but it should focus on the deep essence of the nature of Indian history in order to make it more understandable.

Shri Shankar Sharan, Eminent Educationistal so deposed before the Committeeon the above subject and highlighted various topics for inclusion/ exclusion in NCERT text-books. He drew the attention of the Committee Members as to why the text-books had references to unhistorical/ distorted facts and why a section of intellectuals insisted on keeping it. Focusing on this will only help in removing such discrepancies.

Recommendations

In view of the evidences gathered throughout the process, the Committee strongly recommends that:

- While creating the content for textbooks, inputs from experts from multiple disciplines should be sought. This will ensure balance and diversity of views. It should also be ensured that books are free of biases. The textbooks should instill commitment to values enshrined in the constitution and should further promote national integration and unity.
- There is a pressing need to develop high-quality textbooks and effective teaching methods. Thus mandatory standards related to text-book content, graphics and layout, supplementary materials, and pedagogical approaches should be developed. Such standards are needed for printed as well as digital textbooks.
- There is a need to have more child-friendly textbooks. This is possible through enhanced use of pictures, graphics, QR codes, and other audio-visual materials. Children should be taught through enhanced used of games, plays, dramas, workshops, visits to places of historical importance, museums etc. as such approaches will ignite their inquisitiveness and analytical abilities.
- The initiative of Maharashtra State Bureau of Textbook Production & Curriculum Research known as Ekatmik Pathya Pustak conceived in 2018-19 to lighten the school bag is appreciable. Towards this, the Bureau has created quarter-specific integrated material for Marathi, English, Mathematics and ‘Play, Do, Learn’ for Class I students into a single book. A similar approach may be adopted by others. Such initiative will be aligned to the School Bag Policy of New Education Policy (NEP), 2020 as laid out in Section 4.33.

- Education must be provided in the light of values enshrined in the constitution which cannot be taught by mere delivery of information. The pedagogy woven around textbooks has a lasting impact on the minds of the student and hence learning-by-experiment methodology should be compulsorily used by all teachers. Such an approach will enhance positive attitude towards learning amongst students.
- The prioritization of development of foundational skills amongst primary students is required by the NEP-2020, and therefore necessitates the use of information technology and digital devices. Therefore, digital content should be created and disseminated using satellite technology to enhance our students' capabilities and potentials. Such approaches will further curriculum reform and will also help develop more effective operational models for content delivery, and learning. Introduction of modern technologies/ methodologies for the dissemination of information as part of teaching strategies should be undertaken preferably after enabling the possibility of the same uniformly in every part of the country. Schools in remote corners of the country should be suitably equipped for the same.
- The primary school textbooks should serve two purposes; provide strong foundation in core areas such as reading, writing and arithmetic, and provoke curiosity so that students can rapidly expand their knowledge in later years. This is also in alignment with NEP 2020's goal of promoting competency-based learning.
- The NCERT and SCERTs should primarily focus on providing core content through their textbooks. Detailed information and supplementary materials may be provided

through other texts, videos, reference books, A/V files, etc. Further, textbooks should be anchored in facticity. Any presentation of data or survey results should be appropriately referenced. Textbooks should be designed to provoke curiosity and analytical abilities, should be tuned to cognitive capability of the student, and should employ simple language. Further, efforts should be made to design textbooks in ways such that project-based, art-integrated, and experiential learning models can be deployed for effective education. In this way, our textbooks will promote scientific temper, innovation, and also the four Cs; Communication, Collaboration, Creativity, and Critical Thinking.

- The Ministry should explore the possibility of developing a core class-wise common syllabus for various subjects for implementation by CBSE, CICSE and various other State education Boards as this will go a long way in maintaining uniformity in educational standards of school students across the country.
- Our textbooks should highlight the lives of hitherto unknown men and women from different states and districts who have positively influenced our national history, honour, and one-ness. This may require content production teams to dig deeper into local sources of knowledge, including oral ones, and identify linkages between the local and the national. In this way, our textbooks should elicit "Unity in Diversity" of India emphasizing that diversity in India is in fact diverse manifestation of the innate one-ness or intrinsic unity.
- The textbooks should include content on world history and India's place in the same. In this regard, special emphasis must be placed on the histories of other countries of the

world. This is aligned with international guidelines which argue for study of history through a multi-perspective approach. Further, sufficient emphasis must also be placed on the connects between histories of South-East Asia and India. This would be very useful in the context of India's Look East policy.

- Our history textbooks should be continually updated, and account for post-1947 history as well. In addition, an option of conducting review of National Curricular Framework at regular intervals should be kept.
- The Department of School Education & Literacy and NCERT should carefully study how other ancient civilizations/ countries teach their own histories to their respective citizens through textbook content, and areas of emphasis. The results of such a study should be used to improve our own history textbooks and teaching methods taking into consideration history at the grassroots level preferably at the district levels. Further, the State Boards may prepare district-wise history books that will impart knowledge about local historical figures to the students.
- The NCERT should consider the suggestions received by this Committee, while framing the NCF and syllabus of the textbooks. For avoiding content overload on students, NCERT in collaboration with SCERT should identify State-specific historical figures for inclusion in respective SCFs. Efforts may also be made to incorporate and highlight the contributions of the numerous local personalities in various fields in State curriculum.
- The NCERT and SCERT should incorporate the ancient wisdom, knowledge and teachings about life and society from Vedas and other great Indian Texts/ Books in the school

curriculum. Also, educational methodologies adopted in the ancient Universities like Nalanda, Vikramshila and Takshila should be studied and suitably modified to serve as a model reference for teachers so as to benefit them in improving their pedagogical skills for imparting education in the present day context.

- Contributions of ancient India in the fields of Philosophy, Science, Mathematics, Medicine, Ayurveda, Epistemology, Natural sciences, Politics, Economy, Ethics, Linguistics, Arts, etc may also be included in the textbooks. The traditional Indian knowledge systems should be linked with modern science and presented in the contemporary context in NCERT textbooks.
- New technologies should be adopted for better pedagogy for the education of History. Further a permanent mechanism to make suitable rectifications through additions or deletions in the textbooks in a structured manner needs to be established.
- All books especially history books other than published by Government agencies used for supplementary reading may be in consonance with the structure/ content of NCERT books to avoid discrepancies. Also, Ministry of Education should develop a monitoring mechanism for ensuring the same.
- There is a need for discussing and reviewing, with leading historians, the manner in which Indian freedom fighters, from various regions/parts of the country and their contributions get place in History textbooks. This will result in more balanced and judicious perception of the Indian freedom struggle. This will go a long way in giving due and proper space to the freedom fighters hitherto

unknown and oblivious in the freedom movement. Review of representation of community identity based history as of Sikh and Maratha history and others and their adequate incorporation in the textbooks will help in a more judicious perspective of their contribution.

- In order to address the underrepresentation of Women and girls in school textbooks or them being depicted only in traditional roles, a thorough analysis from the view point of gender bias and stereotypes should be undertaken by NCERT and efforts be made to make content portrayal and visual depiction gender inclusive. The textbooks should have greater portrayal of women in new and emerging professions, as role models with a focus on their contributions and pathway of achieving the same. This will help in instilling self-esteem and self confidence among all, particularly girls. Also, while examining the textbooks, other issues like environment sensitivity, human values, issues of children with special needs etc can also be looked up for adequate inclusion in the School textbooks.
- The significant role played by women in the freedom movement and in various other fields needs adequate representation in the textbooks as it would go a long way in understanding the issues in a better way for the next generation of students.
- One of the major social ills afflicting our society in the present times is the malaise of drug addiction cutting across the class divide. It has far-reaching adverse effects on the socio-economic structure of the country, and that concerted efforts are required to be made by the government agencies as well as the civil society to combat this menace. As part of these efforts, the ill effects of such addiction must be

adequately and suitably highlighted in strong words, in the content of school text books to caution the impressionable young minds of students against falling prey to luring tactics of anti-social elements and resulting in waywardness. Similarly, the textbooks should have separate elements spreading awareness against internet addiction and other such aspects that are harmful to the society.

- Taking into account the voluminous number of suggestions received from teachers, students, Institutions for updating the syllabus of NCERT textbooks incorporating various subjects, an internal Committee be set up by Ministry of Education and NCERT to examine the suggestions so received and incorporate the same in curriculum as deem fit.
- All NCERT and SCERT textbooks must be published in all Eighth Schedule languages of the Constitution of India, besides Hindi and English. Further, efforts for developing textbooks in local languages (those not part of the Eighth Schedule) be also made. These will help the children in understanding the subjects better as the content will be in their mother tongue.
- To supplement the textbook content, field visits/ excursions should be introduced as a compulsory part of learning experience. As an initiative in this regard, textbooks can introduce a "Box Format" near the name of the place being mentioned stating the importance of that place whether religious, historical, etc. promoting the readers to visit it. This would further promote North-South and East-West integration.

CHAPTER – 3

NEP & DEVELOPING NEW TEXT BOOKS*

Prof. Chand Kiran Saluja
Director, Sanskrit Promotion Foundation, New Delhi

Prof. Chand Kiran Saluja emphasizes upon the various aspects of New Education Policy- 2020 such as building a culture of reading across the country. NEP-2020 has focused upon the development of curriculum, syllabus and textbook and it envisions a new way of learning which is not merely text book focused. Earlier, NCF 2005 had also mentioned that learning should be active rather than textbook centric only. Textbooks as a single source of education are not enough; they are important but are not only a teaching material. Therefore, a large number of packages should be developed at State and District levels with adequate provision for cluster and school level modifications and supplementary materials. To understand a textbook one needs to understand the curriculum and the aims of education. The present-day classroom practices are, in almost all schools of the country, totally dominated by

* Based on the Keynote Address delivered by Prof. Chand Kiran Saluja in the Prparatory Workshop on Textbooks: Indian Knowledge System and Languages organized by VBUSS on 3rd & 4th February, 2022 and Keynote Lecture in the Two-day National Workshop on Sanskrit in the light of NEP 2020 & Indian Knowledege Systems organized by Central Sanskrit University, Delhi and Shri Lal Bahadur Shastri National Sanskrit University, Delhi on 4th & 5th June 2022.

the textbook. As a result, it has acquired an aura and a standard format. What is needed is not a single textbook but package of teaching learning method and material that could be used to engage the child in active learning. The textbook thus becomes a part of this package and not just a teaching learning material e.g., it connects the past with the present and should lead to experiential learning which means taking classroom to the field and vice versa. Therefore, a large number of packages should be developed at state and district levels with adequate provision for cluster and school level modifications and supplementary materials. This essentially means establishing proper coordination between the textbook designing committees at national and regional levels. The establishment of NCERT and SCERT are the part of this purpose only. The cluster system envisaged in the NEP, 2020 is also a part of this exercise. The availability of a number of alternative TLM packagesof approved quality to the increased choice of the teachers may go a long way inintroduction of IKS. To understand the textbook, one must understand the relationship between the curriculum and aims of education. There is a difference between curriculum and syllabus. The syllabus is something that is taught to the student in the classroom but curriculum involves vast level of activities including the syllabus. In simple terms, the curriculum starts from the moment a student enters the school environment and continues to be involved into till the end of the school hours and thereafter too in the form of doing various activities given by the teachers.

Part I of the NEP, 2020 document outlays various objectives of education.

Textbooks are to be prepared based on certain pre-suppositions in relation to imparting of education and these presuppositions are guided by social,physical and psychological aspects of learners.

- The presentation of the textbook should be organized keeping certain things in mind such as what should be

the topic of a lesson, how should study be conducted, how should vocabulary related to the lesson be organized etc.

- The objective of the textbook should not aim at merely addressing the curiosity in the minds students alone but also to create more curiosity among them. Therefore, the preparation of the textbooks should aim at invoking curiosity in the minds of learners.
- Textbook is an instructional material. It is not only for teaching but for learning as well. Therefore, textbooks should be designed keeping teaching-learning textual material based on a teaching model in mind.
- We must collect material for the preparation of textbooks first. As envisaged in the NEP, 2020, such material useful for the preparation of textbooks should be able to establish proper explanation of the idea to be taught, should be able to invoke thinking process among children, the textbook should be able to develop critical faculty among students and they should highlight Indianness or Indian values embedded in them.
- A Teaching Model essentially means designing educational activities and situations (classroom situations to learn).
- Constructive Teaching Learning Situation: NEP 2020 in its part 4 maintains that textbooks should not be an exercise of merely providing answers to the questions but students should be enabled to find out answers to the questions in their minds. Constructive approach used in NEP document means students should be equipped to find out answers that are already in their minds through the means of textbooks. NEP document says education should move towards less content and more towards learning about how to think

critically and solve problems, how to be creative and multidisciplinary, and how to innovate, adapt and absorb new material in novel and changing fields.

- Pedagogy must evolve to make education more experiential, holistic, integrated, inquiry driven, discovery oriented, learner-centric, discussion based, flexible and of course, enjoyable.
- Education should evolve into a process that recognizes, accepts anddevelops the potential of the learner.
- This must also be born in mind that while teaching, a teacher is not merely teaching in the classroom but he/she is also learning from the experiences of his/her students which he/she can bring in use for teaching the nextbatch of students. Part 4 of the NEP 2020 also emphasizes on art oriented and play oriented ways of teaching-learning process. Art cannot be understood only in terms of narrow understanding like drawing but seeing and perceiving things with different aspects associated with a particular issueis also an art.
- Textbooks should be prepared by drawing connections between cause and effect related to a particular issue as well.
- Activities prescribed for students should not be merely individual student centric but they should also develop group behavior among them. The NEP too has said that such activities will help students to keep in tune with the developments of the 21st century and should imbibe constitutional values among students, e.g., fundamental duties, environmental concerns etc.
- Approach to preparing textbooks should not be followed in isolationbut must have an inter-disciplinary

approach for example, textbook preparing committees on science, social sciences and languages should come together and device strategies in this regard.

- Textbooks for students should enable them not to learn what's being taught in the classroom for that moment or year alone but they should develop the sense of learning things continually.
- Thus, textbook should inculcate the thoughts and ideas on social justice, equality, scientific development, and national unity, cultural preservation of India, developing wholesome personality, developing resources to their fullest and using them in sustainable ways.
- Section 4.31 of the NEP provides for developing textbooks at national level keeping local issues and local aspects in the center stage. It lays emphasison the constructive approach based on the discussions, explanations and utility of the learnt knowledge in practical life. It also talks of including supplementary material in the textbooks. It also talks of including bunch of books derived from the national and local sources.
- The reduction in content and increased flexibility of school curriculum renewed emphasis on constructive rather than rote learning. This must be accompanied by parallel changes in school textbooks. All textbooks shall aim to contain the essential core material (together with discussion, analysis, examples and applications) deemed important on a national level, but at the same time contain any desired nuances and supplementary material as per local contexts and needs. Wherever possible schools and teachers will also have choices in the textbooks they employ from among a set of textbooks

that contain the requisite national and local material - so that they may teach in a manner that is best suited to their own pedagogical styles as well as to their students and communities' needs.

- Section 4.32 of the NEP provides for coordination between NCERT and SCERT to develop textbooks in various languages spoken in India. They must derive from the sources across regions in India. "The aim will beto provide such quality textbooks at the lowest possible cost -namely,at the cost of production/printing - in order to mitigate the burden of textbook prices on the students and on the educational system. This maybe accomplished by using high-quality textbook materials developed by NCERT in conjunction with the SCERTs; additional textbook materials could be funded by public-philanthropic partnerships and crowd sourcing that incentivize experts to write such high-quality textbooks at cost price.
- States will prepare their own curricula (which may be based on the NCFSE prepared by NCERT to the extent possible) and prepare textbooks (which may be based on the NCERT textbook materials to the extent possible), incorporating State flavour and material as needed. While doing so, it must be borne in mind that NCERT curriculum would be taken as the nationally acceptable criterion. The availability of such textbooks in all regional languages will be a top priority so that all students have access to high-quality learning. All efforts will be made to ensure timely availability of textbooks in schools. Access to downloadable and printable versions of all textbooks will be provided by all States/UTs and NCERT to help

conserve the environment and reduce the logistical burden."

- Section 4.33 provides for "Concerted efforts, through suitable changes in curriculum and pedagogy, will be made by NCERT, SCERTs, schools, and educators to significantly reduce the weight of school bags and textbooks.
- In this regard, it's important to look at 1992 Committee Recommendations on how should the textbooks be also the 2005 NCF recommendation on the curriculum.
- Textbooks should include topic, role of the concerned topic, syllabus, self-study material, pictorial representations, structuralism, experiential learning, communication, students' participation, empowering teachers, culture, constitutional values, skills required for the 21st century, research aptitude, supplementary books etc.
- Education should be the process of humane learning presupposing a specific social nature and a process by which children grow into the intellectual life for those around them.
- Education should enable the child to look at the environment around her/ his in a holistic manner and does not compartmentalize any topic into science and social science.
- Therefore, an attempt should be made in the textbook so that it will helpa child to locate every theme in physical, social and cultural contexts critically so that the child can make informed choices in his/her life.
- The challenge in relation to writing a textbook at national level lies in the fact that it should reflect the

multicultural dimensions of the Indian society. Every effort should be made to include every community in the country giving due space to their culture and way of life so that all of themfeel important.

- The position paper by the textbook preparation committees previously constituted had observed that- While writing textbooks…..“who is the child we are addressing was the big question. Does a child study in the big of school of the metro city or the school in the slums, a small-town child, one in village school or one in the remote mountainous areas? One also needed to tackle the difference of gender, class, culture, religion, language, geographical locations etc. These are some of the issues addressed in the book, which the teacher will also have to handle sensitively in her own ways.” While preparing textbooks these issues of concern must be deliberated over.
- There is need to inculcate the habit of reading among our students and for that to happen the books must be prepared in a way that they become attractive for them.
- We need to pay attention to the section 4.35 of the NEP in this regard. It says, “The progress card of all students for school-based assessment, which is communicated by schools to parents, will be completely redesigned by States/UTs under guidance from the proposed National Assessment Centre, NCERT, and SCERTs. The progress card will be a holistic, 360-degree, multidimensional report that reflects in great detail the progress as well as the uniqueness of each learner in the cognitive, affective, and psychomotor domains. It will include self-assessment and peer assessment, and progress of the child in project-based

and inquiry- based learning, quizzes, role plays, group work, portfolios, etc., along with teacher assessment. The holistic progress card will form an important link between home and school and will be accompanied by parent-teacher meetings in order to actively involve parents in their children's holistic education and development. The progress card would also provide teachers and parents with valuable information on how to support each student in and out of the classroom. AI-based software could be developed and used by students to help track their growth through their school years based on learning data and interactive questionnaires for parents, students, and teachers, in order to provide students with valuable information on their strengths, areas of interest, and needed areas of focus, and to thereby help them make optimal career choices." These issues must be kept in mind while preparing textbooks.

- The interdisciplinary approach of seeking knowledge is not new to us in India. The Sushrutsamhita has quite elaborately spoken about it in the following words-

एकंशास्त्रमधियानो न विद्याछास्त्रनिश्चयं
तस्माद बहुश्रुताः शास्त्रंविजनीयचिकित्स्काः
शास्त्रंगुरुमुखोदीर्णमादायोपास्य चासकृत
यः कर्मकुरुतेवैद्यः स वैद्योन्य तू तस्कराः
(सुश्रुत संहिता सूत्रस्थानम 4. 6-8)

- Our education should make students competent, experienced and capable enough to expand their knowledge on their own. While writing books, the interests of all students of society belonging to different gender, class, culture,

religion and geographic locations should be kept in mind.

- The textbooks should be structured primarily in the five parts, viz. 1. Curriculum or syllabus as per our educational needs and objectives. 2. Collection of the material and its sequencing or sorting for the intended purpose, for example, the collected material can used for designing syllabus of various classes. 3. Evaluation of the utility of the syllabus or curriculum. 4. Presentation of the collected material in the textbooks and 5. background checking meaning whether there is any need for further improvement in the designed books and its syllabus (पतिपृष्ठि). It has been very beautifully said in the Indian knowledge traditions in the following shloka of Shukarhasyopanishad-

श्रवणंतु गुरोः पूर्वं मननंतदनन्तरम्।
निदिध्यासमित्येतत् पूर्णबोधस्य कारणम्।।
(शुकरहस्योपनिषद्)
श्रवण > मनन > निधिध्यासन

Section II

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 के अनुरूप हिंदी की नई पाठ्य पुस्तकों का निर्माण

4

प्रो. कैलाशचन्द्र शर्मा

अध्यक्ष, विद्या भारती उच्च शिक्षा संस्थान

नई शिक्षा नीति में बहुत सी ऐसी नई बातें बतायी गयी हैं जो आज के सन्दर्भ में बहुत जरूरी हैं। हमें उन बदलावों को लाने के लिए उन पर गंभीर चिंतन करना होगा।

मसलन भारत देश में छात्रों के लिए शिक्षा का करिकुलम किस प्रकार का होना चाहिए? पाठ्य पुस्तकों में किन-किन विषयों को रखा जाना चाहिए? जिससे देश के युवाओं को आसानी से रोजगार मिल सके और वे अपनी सभ्यता संस्कृति से भी जुड़े रहें। हमें ज्ञात है कि भारत वर्ष की पुरातन शिक्षा पद्धति और शिक्षा व्यवस्था अत्यंत उत्कृष्ट रही है, किंतु जान-बूझकर हमारी शिक्षा परंपरा का दोहन करके हमारे मठों को तोड़ा गया और एक षड्यंत्र के तहत हम पर पश्चिमी शिक्षा को हमारे देश के विद्यालयों-विश्वविद्यालयों पर थोप दिया गया।

यदि किसी देश को चिरकाल तक गुलाम बनाए रखना है तो उसकी जड़ों को खोखला कर देना चाहिए अर्थात् उसका बौद्धिक स्तर इतना कमजोर कर दिया जाए कि उसे इस बात का एहसास ही न हो कि वह मानसिक एवं शारीरिक रूप से आपका गुलाम है।

अंग्रेजी सत्ता और कुछ कुर्सी के लोभियों ने भारत के साथ यही किया। उन्होंने भारत की शिक्षा व्यवस्था को इतना कमजोर व लाचार बना दिया कि हम आज अन्य देशों पर ही निर्भर हैं। आज भी हम अपने ही देश में भारतीय भाषा की अपेक्षा पश्चिमी भाषा अंग्रेजी को महत्त्वपूर्ण मानते हैं।

ज्ञातव्य है कि जिस समय मैकाले ने यह कहा था कि भारत की शिक्षा प्रणाली को बदलने की आवश्यता है, उस समय भारत में अनुमानतः ढाई-लाख विद्यालय

थे। अर्थात् देश के कोने-कोने में विद्यालय थे। जहाँ सभी भारतवासियों को सामान्य रूप से शिक्षा ग्रहण करने का अवसर मिलता था। उन विद्यालयों में भारतवर्ष के संपूर्ण ज्ञान-विज्ञान बड़े उत्साह से पढ़ाया जाता था। दुनिया भर से उस ज्ञान-विज्ञान को पढ़ने लोग भारत देश में आते थे।

उन्होंने हमारी शिक्षा व्यवस्था को बदलने के साथ भाषा पर भी कुठाराघात किया। भारत के सभी प्रान्तों में अंग्रेजी से पूर्व जिन भाषाओं में ज्ञान दिया जाता था, उन सभी को धीरे-धीरे नष्ट कर दिया गया और भारतीय जनमानस के मन में यह बैठा दिया गया कि अन्य भाषाओं के मुकाबले अंग्रेजी ही सर्वोच्च भाषा है। आगे चलकर इसे ही प्रगति की भाषा कहा जाने लगा। यदि कोई भारत से बाहर जाकर अंग्रेजी में व्याख्यान देता है तो उसे विद्वान कहा जाने लगा। पर वास्तव में क्या अंग्रेजी ही विद्वता की द्योतक है? क्या भारतीय भाषाओं में बात करने वाला व्यक्ति विद्वान नहीं हो सकता? अन्य देशों की भांति भारत देश की अपनी अलग और विशिष्ट पहचान नहीं होनी चाहिए? क्या अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारत की अपनी अलग भाषा नहीं होनी चाहिए? यदि यह सब होना चाहिए, तो अब प्रश्न उठता है कि आखिर यह सब होगा कैसे? इसके लिए हमें हमारी आचार्य शिक्षा पद्धति की फिर से शुरुआत करनी होगी और अपनी एक भाषा को अंतरराष्ट्रीय स्तर तक ले जाना होगा। साथ ही अपनी भाषाओं एवं मातृ भाषा में ज्ञान का अर्जन करना प्रारंभ कर देना होगा, क्योंकि केवल भाषा ही सम्प्रेषण का माध्यम है। भाषा ही आगे चलकर संस्कृति की वाहक और संस्कृति की परिचायक बनती है।

हम अब तक अपनी किसी एक भाषा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर पहचान नहीं दिला सके हैं। हिंदी भाषा के सम्बन्ध में भारत के कुछ प्रांत यह कहते हैं कि हिंदी राष्ट्रभाषा है, तो क्या तमिल राष्ट्रभाषा नहीं है? कन्नड़ राष्ट्रभाषा नहीं है? हम सभी के लिए यही हितकारी है कि जितना शीघ्र हो सके हमें इस विवाद को यहीं समाप्त कर देना चाहिए। हम सबको ज्ञात है कि भारत की अन्य भाषाओं के मुकाबले हिंदी भाषा ही भारत या विश्व में सबसे अधिक बोली या समझी जाती है। यदि एक भाषा को राष्ट्रीय कहने से भारत की अन्य भाषा के लोगों को उनकी अपनी मूल भाषा अराष्ट्रीय लगती हो तो यह उनका भ्रम है। भारत की सभी भाषाएं संविधानमूलक हैं, हमारे लिए उनका सम्मान करना भी आवश्यक है। किंतु हमें हिंदी भाषा को भी अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर पहुँचाना है और इसके लिए कुछ ठोस कदम उठाने होंगे।

हम सबके आपसी सहयोग से हमारे शिक्षा संस्थान ऐसे बनकर तैयार हों कि सभी छात्र-छात्राओं का सर्वांगीण विकास हो सके। भारतीय पाठ्यक्रमों को इस प्रकार से तैयार किया जाना चाहिए, जिससे हमे भारतीय संस्कृति एवं ज्ञान परंपरा का सरलता से बोध हो सके तथा ज्ञान के विविध विषयों की एक नई आधारभूमि तैयार कर सकें और यह सब नई शिक्षा नीति के साथ ही संभव हो सकता है।

5

प्रो. गोविन्द प्रसाद शर्मा

अध्यक्ष, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास

वर्तमान समय में जो शिक्षा हमें मिल रही है वह उपनिवेशवाद की देन है, किंतु ऐसा नहीं है कि इसका विरोध अभी शुरू हुआ है। इसका विरोध तो पराधीन भारत के समय से हो रहा है। उस दौर के राष्ट्रीय आन्दोलन इसके विरोध की आधारभूमि माने जा सकते हैं। इनमें श्री अरविन्द, गांधी, रवीन्द्रनाथ ठाकुर, लोकमान्य तिलक हों या राष्ट्रीय आन्दोलन को दिशा देने वाले कोई भी नेतृत्व हो, उन्होंने औपनिवेशिक शिक्षा का पुरजोर विरोध किया है। औपनिवेशिक शिक्षा का अकादमिक जगत् में तब भी विरोध होता था और आज भी हो रहा है, लेकिन अकादमिक जगत् में इसका विरोध संगोष्ठी, सेमिनार और सम्मेलनों आदि में प्रस्ताव पास करने तक ही सीमित रहा। क्योंकि हमें अब तक ऐसा कोई अवसर या मंच नहीं मिल सका था, जहाँ हम स्वत: अपनी भाषा और शिक्षा को राष्ट्रीय दिशा देने के लिए कोई ठोस कार्य कर सकें। किंतु अब ऐसा नहीं है, नई शिक्षा नीति के तहत हम अपनी भाषा और शिक्षा को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर एक अलग एवं विशिष्ट पहचान दिलवा सकते हैं और यह सब हम सबके आपसी सहयोग से ही संभव हो सकेगा।

ऐसा नहीं है कि भारतीय भाषा एवं शिक्षा नीति में बदलाव करने के लिए पहले प्रयास नहीं किए गए हैं। अपितु इससे पूर्व भी भारतीय भाषा, शिक्षा नीति एवं शिक्षा अनुरूप व्यापार नीति पर विचार-विमर्श किए गए और आयोग बनाए गए। कोठारी आयोग उन्हीं प्रयासों का एक परिणाम है। इस संदर्भ में कोठारी कहते हैं कि- "हमारी शिक्षा का प्रेरणा स्रोत यूरोप है।" आज हमें वह प्रेरणा 'यूरोप' की जगह केवल 'भारत' से लेने की जरूरत है। अर्थात् हमारी शिक्षा का प्रेरणा स्रोत भारत ही हो यह सुनिश्चित करना होगा। इसके बाद हम देखेंगे कि शिक्षा का स्वरूप स्वयं बदल जाएगा।

पुरानी शिक्षा को बदलने के लिए सन् 2020 में हमें मौका मिला, तो क्यों न इस अवसर का लाभ उठाया जाए। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति हमारे समक्ष आई, इसने संपूर्ण परिदृश्य को बदलकर रख दिया। इस शिक्षा नीति का विजन वास्तव में है क्या यह समझने की जरूरत है? यह कहती है कि- "भारत की शिक्षा भारतीय ज्ञान परंपरा से विकसित होगी।" आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि 'भारतीय ज्ञान परंपरा' शब्द का प्रयोग सन् 2020 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति के दस्तावेज के अलावा या इससे पूर्व के दस्तावेजों में कहीं नहीं मिलता।

1942 में ब्रिटेन के राजदूत और कुछ मंत्रीगणों ने विचार किया कि भारत को शारीरिक न सही मानसिक रूप से गुलाम बनाकर रखा जा सकता है। इसके लिए उन्होंने यह लक्ष्य बनाया कि भारत के लोग अंग्रेजी कल्चर, अंग्रेजी भाषा, रहन-सहन, आचार-विचार, खान-पान, रीति-रिवाज, परंपराओं आदि के घेरे से बाहर नहीं आने चाहिए। यदि इन्हें इस परिधि में बांधे रखना है तो पश्चिमी शिक्षा प्रणाली से इन्हें जोड़े रखना होगा और उन्होंने यही किया। पश्चिमी शिक्षा से मुक्ति पाने का और मानसिक रूप से पश्चिमी प्रभाव से मुक्त होने का समय अब आ गया है। यह तभी संभव होगा जब हमारी समस्त शिक्षा प्रणाली पश्चिमी प्रभाव से मुक्त रहे। इसीलिए नई शिक्षा नीति का खुले हाथों से स्वागत करना चाहिए ताकि हमारे ज्ञान, मान-सम्मान और भारतीय ज्ञान परंपरा का नया उदय हो सके और हम विश्वपटल पर अपनी अलग एवं विशिष्ट पहचान स्थापित कर सकें। वैचारिक दृष्टि से हम बहुत पहले से इस विषय पर चर्चा करते आए हैं। 1996 की एक समिति में कहा गया था कि किसी भी देश की संस्कृति की जड़ें उस देश की शिक्षा में होनी चाहिए और उसका वैचारिक दृष्टिकोण विकास की ओर होना चाहिए। देश की समृद्धि में संस्कृति के भाव सिंचित होते रहने चाहिए। यदि हमारी शिक्षा अपने देश की संस्कृति के साथ नहीं जुड़ सकती, तो उस शिक्षा का होना या नहीं होना एक समान है।

ज्ञातव्य है कि शिक्षा राष्ट्रीय होती है और ज्ञान वैश्विक। यदि किसी देश की शिक्षा में राष्ट्रीयता के भाव नहीं हैं, तो वह उस देश के लोगों के लिए, वहां की सभ्यता-संस्कृति के लिए आदर व सम्मान का भाव पैदा नहीं कर सकेगी इसीलिए हमें शिक्षा में नए विचारों के साथ राष्ट्रीयता के भाव को स्थान देना होगा। इसके अलावा यदि ज्ञान की बात की जाए, तो ज्ञान वैश्विक है। इसे विश्व के किसी भी कोने से प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन ज्ञान के संदर्भ में यह भ्रम कदाचित् नहीं

रहना चाहिए कि हम ही सर्वोच्च और ज्ञान के स्रोत हैं। एक चींटी को छोटे छेद से निकलना आता है, किंतु हाथी को नहीं। यहाँ दोनों के अपने अलग-अलग गुण एवं विशेषताएँ हैं। यदि हम इस दृष्टि से ज्ञान के विभिन्न बिंदुओं को ग्रहण करते हैं तो निःसंदेह ज्ञान के शिखर को छू सकते हैं और विश्वपटल पर अपनी अलग पहचान स्थापित कर सकते हैं।

6

प्रो. कुमुद शर्मा

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिन्दी को केंद्र में रखकर हिंदी का पाठयक्रम बनाना है, उसकी पुस्तकें लिखी जानी हैं। भाषा के तमाम विवादित पक्षों पर बहुत से आयोगों, और विद्वानों द्वारा कई बार चिंतन किया गया है, पर उसका सही मायनों में जो परिणाम आना चाहिए था वह नहीं आ सका। शिक्षा तंत्र को लेकर भी यही बात कही जा सकती है। हमारा जो शिक्षातंत्र आज तक चला आ रहा था वह औपनिवेशिक भारत के लिए तैयार किया गया था। जाहिर है वह लार्डमैकाले की शिक्षा पद्धति थी जिसका उद्देश्य कुछ और था।

अभी हाल-फिलहाल दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा एक संगोष्ठी आयोजित की गई, जिसमें मुकुल कानिटकर जी का एक भाषण बहुत चर्चित हुआ। उस आयोजन में संगोष्ठी के विषय को लेकर एक दुविधा बनी हुई थी कि यह कैसा विषय है आखिर? विषय- स्वाधीनता से स्वतंत्रता की ओर था। तब सभी ने सोचा कि स्वाधीनता और स्वतंत्रता का तो एक ही अर्थ है फिर यह कैसा विषय है? लेकिन जब माननीय कानिटकर जी ने भाषण दिया तो एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था जो इस बात से सहमत न हो कि विषय बड़ा सटीक है।

उनके भाषण का सार यह था कि एक लंबे अनवरत संघर्ष यात्रा के बाद देश स्वाधीन तो हो गया लेकिन स्वतंत्र नहीं हो पाया। हमारे पास जो शिक्षा तंत्र, न्याय तंत्र है वह अंग्रेजों का दिया हुआ है। जो अंग्रेजी भाषा थोपी गई है वह मानसिक गुलामी की प्रतीक है। औपनिवेशिक भारत की तमाम समस्याएं आज भी भिन्न रूप में हमारे समक्ष हैं। आज हम भूमंडलीकरण के युग में हैं जिसकी अपनी अलग तरह की चुनौतियां हैं। इसके लिए मैं एक उदाहरण देना चाहूंगी। 1991 में हमारा

देश भूमंडलीकरण की प्रक्रिया में शामिल होता है और लगभग 1999 के आसपास अमेरिका के तत्कालीन विदेश मंत्री हेनरी किसिंगर आयरलैंड के कॉलेज में जाते हैं और एक भाषण देते हैं। उसका सार यह होता है कि यह जो भूमंडलीकरण है वह अमेरिकी दबदबे का परिणाम है। जिससे अमेरिका ने बहुत धन कमाया है। पूंजी की उपलब्धता वहीं से हुई है। नए तकनीकी उपकरण उसके द्वारा बनाए गए। पहले दौर के भूमंडलीकरण का नेतृत्व ब्रिटेन ने किया था। इस नए दौर के भूमंडलीकरण का नेतृत्व अमेरिका कर रहा है। ऐसे में यह तमाम देशों के लिए अनिवार्य हो जाएगा कि वह अमेरिका की शैली और उसकी रुचियों का अनुसरण करें। यह जो उनका भाषण था एक साम्राज्यवादी देश के वर्चस्व की शैली में दिया गया बयान था।

नव उपनिवेशवाद आज के दौर की हमारी चुनौती है। साम्राज्यवाद की धूल आज भी नए तरीके से हमारे समक्ष चुनौती के रूप में प्रस्तुत है। भूमंडलीकरण आज हमें और आपको एक नागरिक नहीं रहने दे रहा है। हम आज मनुष्य भी नहीं हैं, नागरिक भी नहीं हैं, हम या तो विक्रेता हैं या खरीदार हैं। इन दोनों भूमिकाओं के बीच हम बाजार में खड़े हैं और इसी भूमंडलीकरण ने आपकी शिक्षा को भी बाजार की चीज में तब्दील कर दिया है।

'नॉलेजइज पावर' स्लोगन उछाला गया। ज्ञान ही शक्ति है मगर गौर करने वाली बात यह है कि कौन सा ज्ञान शक्ति है? वही ज्ञान शक्ति है जो मंडी में आपको मोटा पे-पैकेज दे सकता। आज उसी ज्ञान की उपयोगिता है। इस प्रक्रिया में जो आपकी भाषा है वह भी मंडी की चीज हो गई है। आपके कॉलेज, फैशन मैगजीन के कवर, आपके मुहावरे सब पर इसका प्रभाव दिखाई पड़ता है। यह एक बदला हुआ परिदृश्य है और इस बदले हुए परिदृश्य में आपको नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति की बहुत जरूरत थी इसलिए यह ऐतिहासिक और क्रांतिकारी कदम है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति धीरे-धीरे और बहुत मंथन के बाद तैयार हुई है। बहुत सारे सम्मेलन हुए बहुत सारी संगोष्ठियाँ हुई और देश भर के विद्वानों से राय ली गई। उसके बाद यह तैयार की गई और जब यह तैयार हुई तो उसका स्वागत किया जाना चाहिए। स्वागत के एक नहीं बहुत सारे कारण हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति समिति ने वैश्विक जरूरतों और अपने देश की सामाजिक, सांस्कृतिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर और भविष्य की आकांक्षाओं को ध्यान में रखकर इसे तैयार किया है। यानि की हमारी ऐतिहासिक जमीन है, हमारी जो वर्तमान चुनौतियां हैं, हमारे

भविष्य की जो आकांक्षाएं हैं उनको ध्यान में रखकर इसका निर्माण किया गया है।

नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति में तीन बातें बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। भारत की केंद्रीय शिक्षा व्यवस्था और व्यवसाय केंद्रित विषय को न्याय संगत, जीवंत ज्ञान समाज में बदलना। इसमें भारतीय ज्ञान परंपरा मूल है। ज्ञान को हमारे यहां तीसरी आंख कहा गया है। हम सब के पास दो आंखें हैं जो वह दिखाता है जो हम देखते हैं लेकिन क्या है जो तीसरी आंख है? जो तीसरी आंख है वह आपको नजरिया देता है, जो जीवन आपको मिला है वह टेक्स्ट है, यह जीवन एक पाठ है और ज्ञान आपको बताता है कि उस पाठ का आपको कैसे उपयोग करना है। इस जीवन को आपको कैसे देखना है? किसी ने कहा है कि शिक्षा जीवन के लिए उसी तरह है जैसे संगमरमर के लिए मूर्तिकला। संगमरमर होता है आप उससे मूर्ति बनाते हैं जब आप मूर्ति बनाते हैं तो उसके साथ कारीगरी का सौंदर्य होता है और कारीगर उस सौंदर्य बोध के साथ मूर्ति को बनाता है उसमें प्राण डाल देता है। तो जो शिक्षा है उसका मकसद यह है कि वह भविष्य को गढ़े और भविष्य को ऐसा गढ़े जिससे मालूम हो कि जीवन कैसे सुंदर हो सकता है। मनुष्य को सौंदर्य बोध का एक नजरिया हो। वह जीवन को पढ़ना सीख पाए।

हमारे यहां शिक्षा क्या है? दरअसल शिक्षा जीवन के परिष्कार की प्रणाली है। वह संस्कार की प्रक्रिया है और वह जीवन भर चलती है और हर जगह चलती है। शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह बता सके कि क्या अच्छा है क्या सही है क्या गलत है।

इस दृष्टि से देखा जाए तो यह सारी बातें नई शिक्षा नीति में समाहित की गई हैं। जो पुरानी शिक्षा व्यवस्था है वह तो दूसरी दृष्टि से तैयार की गई थी, लेकिन अब हम शिक्षा का नया तंत्र विकसित करेंगे और भारत की केंद्रीय शिक्षा व्यवस्था होगी। इस भारत के केंद्रीय शिक्षा व्यवस्था से विद्यार्थी जब पढ़ करके निकलेगा तो वह अपने देश का चेहरा पहचान सकेगा। उस शिक्षा का पाठ्यक्रम ऐसा होगा, ऐसी पुस्तकें होंगी कि जिसमें वह अपने देश के स्वभाव को पहचान सकेगा, देश के हित को पहचान सकेगा।

भारत की केंद्रीय मूल व्यवस्था की बात करें कि उसमें क्या है तो उसके मूल में जीवन को खंड-खंड करके स्वीकार नहीं किया गया बल्कि जीवन को अखंड भाव से स्वीकार किया गया है। वह सबका समावेश करके चलना सिखाती है न कि किसी का बहिष्कार करना। नई शिक्षा नीति में भी यही नीति अपनाई गई है।

सबको साथ लेकर चलने का यह समावेशीकरण पाठ्यक्रम में दिखना चाहिए। इसके लिए बहुत सारी बातें यहां पर रखी गई हैं। पर एक बड़ा सवाल है कि इसको लागू कैसे किया जाए? भारतीय भाषाओं के बीच कैसे सामंजस्य को स्थापित किया जाए? समरसता, समानता, यह जो मूल बातें हैं वह होनी चाहिए और जहां तक हिंदी की बात है तो हिंदी का तेवर या हिंदी का पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि आप भाषा साहित्य से ज्यादा भाषा पर जोर दें। विश्वविद्यालय, संस्थानों के बीच छात्र आते हैं तो वहां से जब छात्र पढ़कर निकलें तो वह वैश्विक नागरिक भी बन सकें और भारतीय नागरिक भी। इसके साथ-साथ अपने परिवार का पालन-पोषण भी कर सकें।

जहां तक भाषाओं की बात है तो भाषा कोई भी हो भारतीय शिक्षा नीति हमारी भाषाओं के स्वाभिमान को जगाने की संकल्पना से जुड़ी हुई है। इसमें बहुत अच्छी बात कही गई है कि हम अनेकता में एकता की बात करते हैं। किसी ने कहा भी था कि एक ही ज्योति से तो हम सब पैदा हुए हैं हम सब एक हैं। हम एक होते हुए भी जीवन के वैविध्यपूर्ण संदर्भ को समझते हैं और इसी तरह हम भारत के विभिन्न भारतीय भाषाओं को समझते हुए आगे बढ़ें।

हिंदी भाषा का पाठ्यक्रम है तो उसमें पढ़ाया जाना चाहिए कि कबीर अगर हिंदी के बड़े कवि हैं तो अन्य भाषाओं के बड़े कवि कौन हैं? तेलुगु में कौन बड़ा कवि और साहित्यकार है? अगर हमारे यहां मीरा हैं तो और अन्य भाषाओं में मीरा के समकक्ष कौन है? समरसता का यह सूत्र हमें विद्यार्थियों को बताना होगा। लेकिन वह सूत्र क्या है? वह एक ही है- हमारे सांस्कृतिक प्रतीक। पर इसके पीछे जो अप्रोच होनी चाहिए वह यह होनी चाहिए कि हम जब हिंदी भाषा का पाठ्यक्रम तैयार करें तो भाषाओं की दृष्टि से भी और जातिगत दृष्टि से भी समावेशी नजरिया विकसित करें।

भारतीय भाषाओँ और उनकी संस्कृति पर सबसे ज्यादा खतरा जो इस समय है वह भूमंडलीकरण की वजह से है इसके चलते हमारी जो स्थानीय भाषाएं और हमारी स्थानीय संस्कृति हैं उनका क्षरण नहीं होना चाहिए। हम एक दूसरे की संस्कृतियों से जुड़ें, मिलें और उनसे सीखें भी लेकिन उसमें उनका खुद का अस्तित्व भी बचा रहना चाहिए।

हिंदी भाषा और साहित्य से निकला हुआ जो विद्यार्थी हो और वह अपने इतिहास को, अपने अस्तित्व को समझ सके। सबसे बड़ी बात यह है कि राष्ट्र को हम पहचान सकें। राष्ट्रबोध, राष्ट्र की एकता, राष्ट्र की सुरक्षा से बड़ा कुछ नहीं है।

देश के तमाम ऐसे विश्वविद्यालयों में ऐसे लोग हैं जो राष्ट्रीयता की बात करते हैं लेकिन राष्ट्रीयता है कहाँ? राष्ट्रीयता तो व्यतीत मूल्य हो गई है। लेकिन हमें अपने पाठ्यक्रमों के माध्यम से बताने की जरूरत है कि राष्ट्रीयता कभी भी व्यतीत मूल्य नहीं हो सकती राष्ट्रीयता अप्रत्यक्ष रूप से हमेशा रहेगी। वह इतिहास को दायित्व बोध के रोल में ले आती है। वह कर्तव्यबोध के रूप में आती है, जब वह व्यतीत मूल्य हो जाएगी उस समय देश खतरे में आ जाएगा और देश को बचाने की बहुत जरूरत है। मेरी यह चिंता है कि जब हम पाठ्यक्रम को देखते हैं चाहे वह हिंदी भाषा का पाठ्यक्रम हो, चाहे साहित्य का पाठ्यक्रम हो या किसी अन्य का उनमें भारतीयता बोध जरूरी है।

हम स्त्री अध्ययन में स्त्री विमर्श की बात करें तो उसमें उन स्त्रीवादी लेखिकाओं को भी पढ़ाया जाता है जो बोलती हैं कि गर्भधारण करना पारंपरिक है। मेरा सवाल है कि मातृत्व को लेकर हम क्यों विमर्श नहीं करते। महादेवी वर्मा, सुभद्रा कुमारी चौहान, कृष्णा सोबती जैसी राइटर भी मातृत्व को खारिज नहीं कर पाई, उन्होंने दोनों की विसंगतियाँ बतायीं–मातृत्व और पत्नित्व। आज भी मॉडर्न से मॉडल लड़की भी मातृत्व के महत्त्व को मानती है।

पाश्चात्य देशों के लोग हमारी जमीन पर आ रहे हैं और हम आयातित मुहावरों को अपने साथ लेकर चल रहे हैं यह गजब की विडंबना है। पाश्चात्य आलोचना में ऐसी बहुत सी चीजें हैं जो रस सिद्धांत में पहले से ही मौजूद हैं। हमारी ही चीज बाहर गई और उसमें अपना लेबल लगाकर, पैक कर फिर हमें भेज दिया। यह कोई नई बात नहीं थी, हमें बहुत संभल कर चलना होगा। कहाँ हमारी जमीन है और कहाँ दूसरे की है और कहाँ हमें टिकना है यह सारी बातें हमें ध्यान रखनी पड़ेगी।

दूसरी बात यह है कि जब हिंदी का पाठ्यक्रम बने तो हिंदी के पाठ्यक्रम में कुछ ऐसा हो कि भिन्न-भिन्न प्रदेशों के लोग हिंदी के साथ-साथ अन्य स्थानीय भाषाओं के लिए भी प्रेरित हों। वहां से भी वह सामंजस्य स्थापित कर पाएं। वह जितनी ज्यादा भारतीय भाषाओं को समझेंगे, उनके रिश्तों को समझेंगे। उनके बीच का जो रिश्ता है वह हिंदी और अन्य भाषाओं के बीच रिश्ता है। रचनात्मकता का सूत्र है वही आपका सांस्कृतिक बोध है, चेतना है।

किसी ने कहा है कि जीवन ताश का एक घर है और आप कहाँ पैदा होते हैं आपके बस में नहीं है, किस परिवार में पैदा होते हैं यह आपके बस में नहीं है। अगर आपके पास विवेक नहीं है तो शिक्षा ऐसी होनी चाहिए कि वह विवेक आपके

भीतर पैदा कर सके। जीवन को कैसे जिया जाए, कैसे सद्भाव से सबको साथ लेकर चला जाए। सुख-दुख में सबको साथ लेकर कैसे चला जाए? यह विवेक पैदा किया जाए। तो यह विवेक अगर आपके भीतर नहीं है तो आपके भीतर तर्कशक्ति नहीं है। आपके पास अगर अच्छे पत्ते भी आते हैं तो जीवन का खेल नहीं समझ पाएंगे। और आपकेपास सही नजरिया और सही अप्रोच है तो बुरे पत्ते भी आएं तो आप जीवन का खेल समझ पाएंगे। तो पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि आपको पता रहे कि जीवन में आपको कौन-सी राह पकड़नी है। किस मार्ग पर रोशनी है।

हम लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में हैं और लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था में तमाम चुनौतियाँ होती हैं। हमने इतिहास देखा है उनकी स्मृतियां देखी हैं और इस लोकतांत्रिक शासन व्यवस्था के भीतर संविधान इन मूल्यों की गारंटी देता है। कहीं ना कहीं यह बात है कि सबको गरिमापूर्ण जीवन जीने का अधिकार है। केवल आपको ही नहीं बल्कि इसके साथ आपके परिवार, आपके समाज, आपके देश सबको ऐसी शिक्षा मिलनी चाहिए जो एक समावेशी स्वरूप में हम सभी को आगे बढ़ा सके और वैश्विक नागरिक भी बना सके। तब पाठ्यक्रम ऐसा होना चाहिए जो हमें वैश्विक स्तर की तमाम चुनौतियों, समस्याओं का सामना करना सिखा सके। तो कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि नई शिक्षा नीति का उसके साथ तालमेल बैठे और हमारी सांस्कृतिक प्रक्रिया में राष्ट्रीय सामाजिक सरोकारों की जो भावना रही है उससे भी हमारे विद्यार्थी हमेशा जुड़े रह सकें।

7

प्रो. चन्दन चौबे

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

राष्ट्रीय शिक्षा नीति में हिंदी भाषा को लेकर, भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिंदी को लेकर कुछ बिंदु प्रस्तावित किए जा सकते हैं।

मैं पिछले दिनों एनसीईआरटी की एक बैठक में था और वहाँ 'नेशनल कोर्स कैरिकुलम फ्रेमवर्क' 2005 पर बातचीत हो रही थी। स्कूली शिक्षा पर उसके बाद कोई बात नहीं हुई। जो सज्जन हमारे साथ थे उन्होंने कहा कि कुछ ऐसी शब्दावली है जिन शब्दावलियों में अपनी वैचारिकी चलती है। जैसेः एक शब्दावली है 'राष्ट्र निर्माण'। सब कहते हैं 'राष्ट्र निर्माण' होना चाहिए, मगर राष्ट्र निर्माण कैसे होना चाहिए? पाठ्यक्रम में राष्ट्र निर्माण कैसे हो? पद और शब्द कैसे होंगे? अपने विद्यार्थी को आप कैसे पढ़ाएंगे? यह कोई नहीं बताता। अंग्रेजी में एक शब्द है 'एंड यूजर प्रॉब्लम' बेशक आप धुनाई में मग्न रहें, पर आपका ध्यान कताई पर जरूर रहना चाहिए।

थियरी ऑफ कोर कोम्पिटेंस है। शब्द जब प्रायोगिक नहीं होते यानी जब आप 'एंड यूजर थियरी' में नहीं जाते। कक्षाओं में विद्यार्थी उसको कैसे पढ़ेगा या फिर जो प्राइमरी स्कूल या माध्यमिक विद्यालय का विद्यार्थी है वह उसका प्रयोग कैसे करेगा? विद्यार्थी और शिक्षक उसको कैसे ट्रांसलेट करेंगे इस पर विचार जरूर होना चाहिए। बड़े शब्द अगर व्यावहारिक ना हों तो थोथे हो जाते हैं।

समाज की तरफ से एक रिप्रेजेंटेटिव के तौर पर उस कमिटी के सामने मैं भी पेश हुआ था। उन्होंने कहा आपकी चिंताएँ क्या हैं? तो मैंने बोला कि हमारी चिंता यह है कि हिंदी के विभाग बचे नहीं रहेंगें? तो उन्होंने पूछा कि फिर क्या किया जाना चाहिए की वो बचे रहें? मैंने कहा साहित्य के विभागों को बदलना होगा।

साहित्य के विभागों को भाषा के विभाग में बदलना होगा और भाषा के विभाग को लिपि के विभाग में बदलना होगा। सिर्फ 'नैन नचाय कही मुसुकाय लला फिर आइयो खेलन होरी' इस पर विभाग नहीं चलेंगें। कोई भाषा अपने सामर्थ्य से चलती है और वो सामर्थ्य उसकी आर्थिक ताकत है। अंग्रेजी कोई हम इश्क में नहीं सीखते हैं। अंग्रेजी का सामर्थ्य है कि वो आप को रोजगार देती है। आपकी भाषा में भी वो सामर्थ्य और ताकत भरना होगा। उसके लिए आपको पाठ्यपुस्तक ऐसा तैयार करना होंगा जो उस सामर्थ्य को बनाये। मित्रों इस संदर्भ में भारतीय ज्ञान परंपरा आपको एक रास्ता दिखाती है। हमारे जितने मत मतांतर हैं चाहे दर्शन हो, न्याय, सांख्य, योग, मीमांसा और वेदांत साथ ही जैन, बौद्ध और चारवाक् यह हमारे प्रश्नाकुलता की देन हैं।

आपको पता है कर्म मीमांसा को ही पूर्व मीमांसा और वेदांत को उत्तर मीमांसा कहा गया है। पूर्व मीमांसा यानि कर्म मीमांसा। ज्ञान को अर्थ और काम के निमित्त बताने का तर्क है। स्वातंत्रोत्तर भारत में जो शिक्षा के संस्थान बने वो आर्म्स चेयर थिंकिंग के संस्थान हैं, निहायत गप्पबाजों के अड्डे हैं। हमारी शिक्षा नीति को हिंदी शिक्षण को कर्मण्य बनाना होगा। ज्ञान की जागतिक भूमिका को तय करना होगा और यह ज्ञान की जागतिक भूमिका क्या है? एक उदाहरण है- कर्म मीमांसा पढ़ते वक्त सत्यकाम का एक उदाहरण आता है। सत्यकाम जब गौतम ऋषि के पास गए तो ऋषि ने उनके परिचय के लिए कुलशील पूछा। सत्यकाम ने कहा मुझे सिर्फ अपनी माता का नाम पता है मेरी माता का नाम जबाला है। गौतम ऋषि ने कहा कोई बात नहीं आप इन गायों को चराने ले जाइए। यह आपकी प्रतिभा की परीक्षा है। सत्यकाम उन गायों को ले कर गए, उनका पालन-पोषण किया, गोधन का संवर्धन किया। लौटे तो उनके साथ संवर्धित गोधन था। गौतम ऋषि खुश हुए तो बोले तुम ब्रह्मज्ञानी हो। ज्ञान क्या है? ज्ञान अर्थोपार्जन है। एक चिर प्रश्नाकुल भारतीय मन एक 'आर्ग्युमेंटेटिव इंडियन' का जो मन है वह हमारी भारतीय ज्ञान परंपरा की देन है इसलिए 'अहं से शुरू हुई यात्रा हम' तक जाती है। तुम कौन हो? मैं वही हूँ जो तुम हो। यह जो 'वही-वही' का भाव है। वह प्रश्नाकुलता से निकला हुआ भाव है इसलिए मैं कहता हूँ कि हिंदी के पाठकों को प्रश्नाकुल बनाना है। यह प्रश्नाकुलता भारतीय ज्ञान परंपरा से निकली हुई प्रश्नाकुलता है।

पूर्वोत्तर के अरुणाचल में 22 जनसमुदाय और लगभग उनके 186 उप-समुदाय हैं। जिनमें बहुत से समुदायों की भाषा खत्म हो गई है जिस वजह से उनकी आस्था

भी खत्म हो गई। धर्म तभी बचा रहेगा, संस्कृति तभी बची रहेगी जब तक भाषा बची रहेगी और भाषा तभी बची रहेगी जब उसमें आर्थिक ताकत या बोथ वेयर प्रोसेसेस है। दूसरा हिंदी के पाठ्यक्रमों को जब आप बनाएं तो लोककथा, लोकपरंपरा, घरों की कहानियों को महत्त्व दें।

आम तौर पर हिंदी के पाठकों के साथ होता है कि फलाने जी फलाने जी की किताबों को महान कह देते हैं और लोग उसे महान बनाने का खेल चलाने लगते हैं। यहाँ पर किसी ने कह दिया और चार किताबें लिख दी और किसी और दो लोगों से लिखवा ली और फिर सब लोग कहने लगे वाह-वाह-वाह। ऐसे तो नहीं होगा हिंदी का विकास।

मणिपुर में एक जनजाति है कोम। कोम जनजाति ने अपनी पांथिक आस्था बदल ली है। हमारे सामने एक प्रश्न था कि कोम जनजाति में हम कैसे जाकर बात करें? फिर कोम लोगों के लोककथाओं का संग्रह किया। उनकी जो लोककथाएँ हैं उनका जो मूल्यबोध हैं वह सूर्य है, चंद्र है, नदी है। हमें लोक कथाओं पर ध्यान देना होगा। लोक कथाओं को अपने पाठ्यक्रम में स्थान देना होगा।

तीसरा, एक बार मैं जवाहरलाल नेहरू पासीघाट महाविद्यालय में प्रेमचंद पर बोल रहा था। प्रेमचन्द पर बोलते-बोलते मैं प्रेमचंद की कहानियाँ कौन-कौन सी हैं उसमें जो सारी चीजें थीं उस पर बोल गया। दो-चार बच्चे जो आगे की तरफ बैठे हुए थे, वो मेरी बात पर ध्यान ही नहीं दे रहे थे। जब चाय का समय हुआ तो मैंने उनसे पूछा तुम लोगों ने तो मेरी बातों पर ध्यान ही नहीं दिया। तो उन्होंने कहा सर क्या सुनें, ये जितनी समस्याएं आप बता रहे थे स्त्री, सूद यह हमारे समाज की कोई समस्या नहीं है। यह सब तो गंगा के मैदानी भाग में होता होगा, हमारे यहाँ नहीं है। यानि आप 'स्थानिक मूल्यबोध' को ध्यान रखते हुए पाठ्यक्रम में स्थानिक जरूरतों से संबंधित पुस्तकों को लगाएं।

हिंदी वालों को यह भ्रम रहता है यह राष्ट्र उन्हीं का है। वास्तव में हिंदी का पाठ्यक्रम कलकत्ता को पार नहीं करता। ब्रह्मपुत्र के पार भी हिंदी के पाठ्यक्रम को जाना चाहिए। शंकरदेव, माधवदेव, बदलापदमाता, देतयारीयाता इनके नाम कहीं हिंदी के पाठ्यक्रमों में है ही नहीं। मणिपुर का इतना बड़ा लोक कलाओं का संग्रह है पर वह भी कहीं नहीं दिखता है।

अगर हिंदी इस देश की राष्ट्रभाषा बनना चाहती है तो राष्ट्र भी तो हिंदी में होना चाहिए। या बस 'बल्लीमारान से दरीबे तक' मेरी तेरी कहानी दिल्ली में' ऐसा नहीं चलेगा। हिंदी को अपना क्षितिज उदार करना होगा।

आज के दौर में काव्यशास्त्र पढ़ाने वाले लोग नहीं मिल रहे और जो पढ़ाते भी हैं, उनसे पूछ लीजिए भरतमुनि के बारे में कुछ बता दीजिए, भामह के बारे में बता दीजिए या दंडी के बारे में बता दीजिए तो वह नहीं बता पाएंगे। वह प्रोफेसर सिद्धांत पढ़ा देंगे पर उनके बारे में नहीं जानते। आपको इन ऋषि और काव्यशास्त्रीय विमर्शों के व्याख्याकारों का परिचय पढ़ाना होगा। यह लोग कौन थे? कहाँ के थे? यह हम में से बहुतों को नहीं मालूम। अगर कह दिया जाए कि अभिनवगुप्त के सिद्धांत के बारे में छोड़िये अभिनवगुप्त के बारे में बताइए तो लोग नहीं जानते।

जो समाज अपनी स्मृति को भूल जाते हैं उन समाजों की दास्ताँ को आते हुए देर नहीं लगती। स्मृति को बचाना है तो आपको स्मृति के उन कोने-अंतरों में जाना होगा जिनको अभी तक आप समझे नहीं हैं।

ज्ञान परंपरा का एक घोषित गढ़ विश्वविद्यालय है। विश्वविद्यालयों में ज्ञान नहीं है विश्वविद्यालय तो षडयंत्र के अड्डे बन गए हैं, अघोषित अड्डे।

एक दिन मुझसे रीतामणि जी ने कहा की असम में तो हर कोई नाचता है, 'बिहू' के संदर्भ में ऐसी बात हो रही थी। आपको पाठ्यक्रमों में मुखौटा कला, गायन-बायन, आपके मठों में जो ज्ञान है यानि जो आपके मेन इंस्टीट्यूशन का नॉलेज है जो संस्थागत नॉलेज है उसको इसमें स्थान देना होगा और अंत में यह कहना चाहूंगा कि एक बहुत रोचक सा पहलू है हिंदी का एक बड़ा कवि हुआ है जो समाज का कवि नहीं है और जो हिन्दी समाज का कवि है पर हिंदी वाला उसे अपना कवि नहीं मानता, यह अद्‌भुत है। पर तुलसीदास, कबीरदास, सूरदास बड़े कवि हैं। शंकरदेव असमिया जीवन और पाठ्यक्रम दोनों के बड़े कवि हैं। यह समाज और संस्थाओं का द्वैध है उसका संस्थाओं को मूल्यांकन करना होगा। जो संस्थान समाज की आवश्यकता पर नहीं चलें ऐसे संस्थान न ही हों तो ज्यादा अच्छा है। स्वतन्त्रता के बाद जो संस्थान बनें हैं वह समाज की आवश्यकताओं से कटे हुए संस्थान हैं। राष्ट्रीय शिक्षा नीति ने एक अवसर दिया है कि छोटेख़्छोटे प्रयासों से बड़ा बदलाव लाया जा सके। इस अवसर के आलोक में हम अपने समाज और संस्कृति की जरूरतों पर ध्यान दें ऐसा अवसर बार-बार नहीं आता। राजनीतिक सत्ता ज्ञान की सत्ता का विकल्प नहीं होती, राजनीतिक सत्ता की उम्र बहुत कम होती है। ज्ञान की सत्ता दीर्घजीवी होती है। आपका विरोधी आप से ताकतवर है, आपको पूरी आजादी नहीं है कि आप उससे घृणा करें। पर उसकी ताकत के कारणों को भी समझें वह सिर्फ शब्द भाषा नहीं है वह 'रीगरस इंटलेक्चुअल एक्सरसाइज' जिसको

हम लैक करते हैं। मैं एक पत्रिका चलाता हूँ, मैं एक थिंक टैंक भी देखता हूँ। पांच लोग हिंदी में लेख लिखने वाले नहीं मिलते। तो ऐसा क्या कारण है कि हम इतने पीछे रह गए इस पर भी आत्मावलोकन करना बहुत जरूरी है। यह समझना जरूरी है कि 'रीगरस इंटलेक्चुअल एक्सरसाइज' जिसमें हमारा विरोधी माहिर हैं हम उससे कुछ सीख सकें।

८

प्रो. रवि टेकचंदानी

दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

हिंदी और सिंधी के बीच गहरा सम्बन्ध है। यह सम्बन्ध भारतीय भाषाओं के मध्य ऐक्य भाव से विद्यमान है। इसी भाव को सहेजे हुए है- नई शिक्षा नीति। यह बात केवल हिंदी और सिन्धी पर लागू नहीं अपितु सभी भारतीय भाषाओं पर भी लागू होती है। नई शिक्षा नीति शिक्षा, भारतीय ज्ञान परंपरा, पाठ्यक्रम निर्माण और भाषा शिक्षण इन सभी बिंदुओं को विस्तार प्रदान करती है। अर्थात् "प्राचीन और सनातन भारतीय परंपरा के ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में यह नीति तैयार की गई है।" इस शिक्षा नीति के अनेक मायने हैं, इसकी आधारभूमि पाकर भारतीय ज्ञान परंपरा अधिक समृद्ध होगी। ज्ञातव्य है कि ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय ज्ञान परम्परा में सदा सर्वोच्च स्थान प्राप्त था, इसे यों ही सहेजे रखना आवश्यक है।

समय बदलता है तो परिस्थितियाँ बदलती हैं, परिस्थियों के बदलाव के चलते हमारे देश, दुनिया व समाज में बदलाव आना स्वाभाविक है। इसी बदलाव के फलस्वरूप शिक्षा नीति में बदलाव आना भी कोई चौंकाने वाली बात नहीं है। प्राचीन भारत में शिक्षा नीति का लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा स्कूल के बाद जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञान अर्जन नहीं बल्कि आत्मज्ञान एवं मुक्ति के रूप में माना गया है। ऐसे ही विचारों को आत्मसात किये हुए है यह नई शिक्षा नीति।

वर्तमान समय में भारतीय शिक्षा नीति मैकाले की शिक्षा नीति पद्धति पर आधारित है। इस विषय पर एक बार गहन मंथन करने की आवश्यकता है कि मैकाले की इस शिक्षा नीति से हमने क्या खोया और क्या पाया है। इस संदर्भ में यदि कुछ कहा जाए तो यह कुछ लोगों को कठोर वाक्य लग सकता है कि- उनकी

शिक्षा नीति भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में 'निरर्थक' रही है। यदि यह शिक्षा नीति निरर्थक नहीं रही होती, तो आज हम अपनी कक्षाओं में पढ़ते हुए अपने ही क्षेत्र, सभ्यता एवं संस्कृति के बारे में अनभिज्ञ क्यों रहते?

आज हम पश्चिमीकरण के प्रभाव से इतने प्रभावित हैं कि हम अपने देश और भारतीय ज्ञान परंपरा के विविध आयामों से अनजान हैं। हम अपनी सभ्यता, संस्कृति एवं भारतीय ज्ञान परंपरा को भूलते जा रहे हैं और पश्चिमी देशों की ओर अपना रुख कर जा रहे हैं। इसका सबसे बड़ा कारण मैकाले की शिक्षा नीति को माना जा सकता है।

इसी शिक्षा नीति के कारण हम अपने मूल से कट गए, किंतु हमें अपने मूल की ओर पुनः लौटना है और यह तभी हो सकता है, जब हमें अपनी भारतीय ज्ञान परंपरा का ज्ञान होगा। इस ज्ञान की ओर नई शिक्षा नीति के तहत ही लौट सकते हैं। अन्यथा हमारी दृष्टि में सब व्यर्थ है। भारतीय ज्ञान परंपरा में वे सभी उपादान शामिल हैं जो किसी भी देश को समृद्ध एवं सशक्त बनाते हैं।

हमें लन्दन, अमेरिका, फ्रांस, जर्मनी जैसे देशों का ज्ञान है। उनके खान–पान, रहन–सहन यहाँ तक कि फसलों तक का ज्ञान है। लेकिन अपने गांव या शहर के आसपास कौन–सी फसल या पैदावार होती है? उसका ज्ञान हमें नहीं हो सका। इसके क्या कारण हैं कि हम अपनी सभ्यता, संस्कृति, ज्ञान बोध और भाषा से कट से गए हैं। कभी इसका आत्म–मंथन करोगे तो पाओगे कि हमारी पुरानी शिक्षा नीति ही कहीं न कहीं, किसी न किसी रूप में जिम्मेदार है। 2024 में जब हमें इसे बदलने का अवसर मिल रहा है, तो इस अवसर का लाभ उठाना चाहिए और नई शिक्षा नीति का हृदयतल की गहराई से स्वागत करना चाहिए।

डॉक्टर, इंजिनियर, आईएएस, अधिकारी बनना जीवन का साधन तो हो सकता है, किंतु साध्य नहीं। अर्थात् लक्ष्य प्रमुख है, साधन नहीं इसीलिए भारत पोषित इस शिक्षा नीति में जिन जीवन मूल्य को रेखांकित किया गया है, हमें उसे समझने की आवश्यता है। इस बात को पुष्ट करने के लिए दो शब्दों को लेते हैं– पहला 'स्किल' और दूसरा 'वैल्यू'। हमारा कौशल बढ़ सकता है लेकिन हमारे मूल्य तो हमारी परम्पराओं से ही पोषित होते हैं। कौशल और मूल्य दोनों बिंदु अलग हैं दोनों तथ्य अलग हैं और चिंतन शैली अलग है।

इस बात को स्पष्ट करने के लिए गुरु द्रोण का उदाहरण पर्याप्त है। अर्जुन और अश्वत्थामा के मूल्य में अंतर था, यह सभी जानते हैं। अर्जुन का जीवन मूल्य

अलग था और अश्वत्थामा का जीवन मूल्य अलग, लेकिन जब गुरु द्रोण ने ज्ञान और ब्रह्मास्त्र देने का निर्णय किया तो उन्होंने अपने योग्य शिष्य को चुना न कि पुत्र अश्वत्थामा को। उन्होंने अर्जुन को इसीलिए चुना क्योकिं उन्हें इस बात का आभास था कि दोनों में से अर्जुन योग्य है। स्पष्ट है कि गुरुभाव और पितृभाव में गुरुभाव श्रेष्ठ है। यही ज्ञान परंपरा भारतीय ज्ञान का मूल है।

इस नई शिक्षा नीति ने अध्यापक के सम्मान को लौटाने की बात कही है। पिछली शिक्षा नीति हमारे मूल बिंदु को पकड़ नहीं पाई। हमारे अंत:करण में गुरुत्व का भाव जागृत होना आवश्यक है, जिससे हमारा व्यवहार गलत न हो। हमें गुरुत्व के भाव को बदलने की जरूरत है, इससे शिष्य के भाव में परिवर्तन स्वत: ही आ जाएगा।

हमारे अनमोल बिंदु तमिल के संगम काव्य में, गुजराती के आख्यानों में, सूफी ज्ञानमार्गी काव्यों में मिलेंगे। उनका उल्लेख नई शिक्षा नीति के तहत पाठ्यक्रम में शामिल होना चाहिए। जब सिंधी की पाठ्य पुस्तकें बनें तो उसमें हिंदी, तमिल के शब्द आयें। यह अपेक्षा सिर्फ हिंदी भाषा से नहीं है, अपितु सभी भारतीय भाषाओं से है। जब भारतीय भाषाओं के उदाहरणों का एक समुच्चय साथ मिलेगा तो भारतीय चिंतन परंपरा का नया स्वरूप हमारे सम्मुख होगा, अन्यथा अकेले ही चलते रहेंगे।

1893 की एक घटना है जब विवेकानंद ने यह कहा था कि आप सभी अपने धर्म और लोगों को महत्त्व देते हैं, अपनी मान्यताओं को महत्त्व देते हैं और दूसरों से तुलना का भाव रखते हैं। किसी को ऊँचा किसी को नीचा कहते हैं। किंतु यह तुलनात्मक भाव हमें स्वीकार नहीं है। हम भारतीय तुलना के भाव से कभी आगे नहीं बढ़ेंगे। इसीलिए हमें सभी धर्म, सम्प्रदायों के लोगों को एक समान भाव से देखना चाहिए।

यह नव-विमर्श जो आ रहे हैं, वे कहाँ से आ रहें है और हम आँख बंदकर उन्हें स्वीकार करते आ रहे हैं। क्या इस पर विचार करना आवश्यक नहीं है? यह विमर्श का मुद्दा होना चाहिए। हमारे विमर्श को क्या किसी ने अपने पाठ्यक्रम में स्थान दिया? नहीं। यह भारत का विमर्श है और हमें इसे पढ़ने की जरूरत है। तत्काल प्रभाव से जो नए वाद उभरकर आते हैं, हमें उन्हें एकदम से अपनाने के बजाय, उस प्रभाव से बाहर निकलना चाहिए। हमारे यहां जो भाव हैं, वे भारतीय परिवारों के भाव हैं। भारत के जो अपने जीवन मूल्य हैं, वह उनका भाव है। अब तक कुछ घटनाओं के आधार पर ही साहित्य में प्रवृत्तियाँ पढ़ाई जाती रही हैं, इस

युग से लेकर उस युग तक इस पर भी पुनः चिंतन करने की आवश्यता है। हम भारतीय संदर्भ में 'हिंदी साहित्य में माँ का रूप' जैसा एक नया विमर्श क्यों नहीं शुरू कर सकते। हमारे साहित्य में माँ को किस प्रकार से चित्रित किया गया है? क्या हम इस विषय पर चर्चा नहीं कर सकते हैं? भारत में माँ के प्रति जो सम्मान का भाव रहता है, जो उसमें आत्मीयता का भाव रहता है, वह कहीं और मिल सकता है क्या?

हम सब जगह गाते फिरते हैं कि– 'अनेकता में एकता हिन्द की विशेषता' मेरे विचार से इसे पुनः परिभाषित करने की आवश्यकता है। अनेकता में एकता का बोध हमारा है ही नहीं। हमारा बोध है– 'एकता में विविधता'। हम ऐक्य से विविध हुए हैं। उदाहरणतः आप देख लीजिए जिन घर–परिवारों में देवी–देवताओं के मंदिर होते हैं उन परिवारों में बच्चे से लेकर बुजुर्ग, कोई मित्र–बंधु या सखी–सहेली जिस दिन कह देते हैं कि– 'बहन जी, माता जी आप ये वाला चित्र भी रख लो। क्या हम मना करते हैं? हम तत्काल प्रभाव से उसे भी अपने मंदिर में समाहित कर लेते हैं। यह समाहित करने का जो भाव है यही तो 'Inclusion' का भाव है। 'Inclusion' का यह भाव अन्य देशों के मुकाबले भारत में अधिक दिखाई देता है। भारतीय दृष्टि एकात्म के भाव से लबालब है। सिर्फ हमें अपनी 'भारतीय परम्परा' के आलोक में काम करने के साथ सभी को इससे परिचित करवाने की आवश्यकता है। इसके लिए हमें बेहतर पाठ्यक्रम का निर्माण करना होगा।

भारत के हिंदी के पाठ्यक्रम को बनाते समय उसे साहित्यिक विधाओं के साथ–साथ अन्य विषयों पर बात करनी भी जरूरी है। जैसे– भारत की जो चिकित्सा पद्धति है, वह यदि हिंदी में पढाई जाए, तो इससे हिंदी भाषी लोगों को भी लाभ होगा और हमारी ज्ञान परंपरा को बढ़ावा मिलेगा।

इसके अलावा अन्य विषयों को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित करने की आवश्यकता है। यदि सम्पूर्ण भारत के मनीषियों के दृष्टिकोण को साहित्यिक ज्ञान सम्पदा से जोड़कर हिंदी में शामिल कर लिया जाए तो यकीन मानिये हिंदी का फलक इतना विस्तृत होगा कि किसी ने सोचा भी न होगा। अब वह हम पर निर्भर करता है कि हिंदी के इस फलक को विस्तृत करना है या इसे इसी तरह से संकुचित बनाए रखना है।

नई शिक्षा नीति में द्विभाषिकता पर भी जोर दिया जा रहा है। इसके अंतर्गत हमें दो भाषाओं में अध्यापन करने का अवसर प्राप्त होता है। अर्थात् जो लोग हिंदी को

पढ़ना चाहते हैं वे हिंदी पढ़ें इसके अलावा अन्य भाषाओं के ज्ञान को भी वे हिंदी भाषा के माध्यम से समझ और ग्रहण कर सकेंगे। इस प्रकार की शुरुआत करने से तमाम भारतीय भाषाओं का विस्तार होगा।

एक बार किसी पत्रकार ने अटल बिहारी वाजपेयी जी से पूछा कि आप तो हिंदी भाषी हैं, तो सिंधी में इतनी रूचि क्यों भला? तो उन्होंने कहा कि– 'हिंदी मेरी माँ है और सिंधी मेरी मौसी'। अब यह दो भाषाओं के मध्य जो बहनापा है यह कहीं ओर मिलेगा क्या? यदि हिंदी पाठ्यक्रम के शब्दभंडार को बढ़ाना है, तो अन्य भारतीय क्षेत्रों के शब्दों को भी हिंदी भाषा में शामिल करने की आवश्यकता है, संवाद और सम्भाषण को अधिक महत्त्व देने की जरूरत है। भाषा को, संवाद को साथ लेकर आएंगे तो उसे सरलता से समझा जा सकता है। संभाषण के बल पर किसी भी भाषा को तेजी से सीखा जा सकता है। अतः अंग्रेजी के माध्यम से जहाँ भी पढ़ने–पढ़ाने की व्यवस्था की जा रही हो, हमें उसे नकारने की आवश्यकता है।

9

प्रो. हितेंद्र पटेल

रवीन्द्र भारती विश्वविद्यालय, कोलकाता

भारत में हिंदी के देश की संपर्क भाषा के रूप में उभरने की कथा बहुत जटिल है। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में कोलकाता के बांग्ला बुद्धिजीवियों ने १८७० के दशक में इस धारणा को पुष्ट किया कि देश की भाषा के रूप में हिंदी को स्थान मिलना चाहिए। अगले सत्तर वर्षों में विभिन्न कारणों से हिंदी का महत्त्व बढ़ा। इस प्रक्रिया में गांधी जी द्वारा हिंदी को राजनीति की भाषा के रूप में देखे जाने का महत्त्व सबसे अधिक है। लेकिन तीस के दशक में देश की भाषा के रूप में जब गांधी जी ने यह स्पष्ट कर दिया कि देश की भाषा हिंदी होगी उर्दू के समर्थकों ने इसका विरोध किया।

इस विरोध के बावजूद जब देश आजाद हुआ तो पूरे देश में इस भाव का विस्तार हुआ कि हिंदी देश की सबसे बड़ी भाषा है और सरकार इसे ही राष्ट्रीय भाषा के रूप में मान्यता देगी। यह भाव कुछ वर्षो तक टिका लेकिन साठ के दशक में यह बिल्कुल स्पष्ट हो गया कि देश की शक्तिशाली भाषा अंग्रेजी होगी, हिंदी नहीं।

यह सब जिस कारण से हुआ उसकी एक ऐतिहासिक समीक्षा जरूरी है।

भारत में हिंदी के सबसे बड़ी भाषा के रूप में उभरने की कथा को दो स्तरों पर समझना होगा। यह औपनिवेशिक युग की देन नहीं है। लोक की भाषा के रूप में सदियों पहले भक्ति काल में भारतीय भाषाएं प्रचलन में आईं। इस अर्थ में सभी प्रमुख भाषाएं आपस में जुड़ी हुई हैं। उनका इतिहास भी जुड़ा हुआ है। भारतीय भाषाओं के इस आंतरिक संपर्क पर राहुल सांकृत्यायन का दृष्टिकोण सबसे महत्त्वपूर्ण है।सिद्ध-सामंत युग के कवि और भक्त कवियों के वचन प्रवाह को ऐतिहासिक रूप से जोड़ते हुए उन्होने बाद की हिन्दी को कई शताब्दी पीछे से जोड़ने की कोशिश की थी। दुर्भाग्य से हिन्दी के बारे में उनके विचारों का सटीक मूल्यांकन नहीं हो

सका और आज भी हिन्दी के इतिहास को अपभ्रंश से जोड़कर देखने की उनकी दृष्टि पर समुचित चर्चा हिन्दी साहित्य के पढ़ने वालों के लिए पाठ्य पुस्तकों में नहीं मिलती। औपनिवेशिक दृष्टि के प्रभाव के कारण अपने अतीत को लेकर विद्वानों के पूर्वाग्रहों को देखकर वे बहुत व्यथित होते थे। एक बार दिल्ली विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के कार्यक्रम में उन्होने कहा–

"मैं नहीं चाहता कि आप मेरी मान्यता को ग्रहण करें, किन्तु मैं इतना अवश्य चाहता हूँ कि आप इतिहास के पृष्ठ पलटें। अंग्रेजों द्वारा लिखा गया इतिहास हमारे देश का दूषित, त्रुटित और पक्षपात रंजित इतिहास है। मैं इस इतिहास पर सिद्ध साहित्य को नहीं परखता। क्या आप बता सकते हैं कि सिद्धों की विशाल परंपरा से कौन सा अंग्रेज इतिहासकार परिचित है? किसने पूर्वख्रमध्ययुग पर प्रामाणिक दृष्टि से लिखा है। आप इन इतिहास ग्रन्थों को पढ़कर कण्हपा या किसी सिद्ध या नाथपंथी योगी का परिचय नहीं पा सकते क्योंकि इनकी दृष्टि सन–सम्वतों में सिमटी रह जाती है। मैं देखता हूँ कि गौतम बुद्ध के बाद देश में तीन–चार बार क्रांतियाँ हुई हैं। किन्तु किसी क्रांति को जनमानस की व्यापक क्रांति के रूप में हमारे इतिहास लेखकों ने अंकित नहीं किया। महेशों और नरेशों का इतिहास लिखने वाले क्या जानें कि जनमानस को जागृत करने वाले विलासी नरेश नहीं होते, साधु, महात्मा और सिद्ध होते हैं। जो राज्य सत्ता से कहीं अधिक प्रभाव जनता पर डालते हैं। आप लोग पहले इतिहास की दृष्टि को स्वच्छ करें इतिहास के पृष्ठों पर पड़ी धूल को साफ करें और तब इतिहास पढ़ने का उपक्रम करें। मैं सिद्धों और नाथों का समर्थक नहीं हूँ किन्तु इतिहास में उनके महत्त्व की कथाओं को पाकर यह कहने को बाध्य हुआ हूँ।"

हिंदी के भारत की प्रतिनिधि भाषा के रूप के साथ नवजागरण और राष्ट्रीय आंदोलन के संपर्क को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए। हिंदी को राष्ट्रीय भाषा के रूप में प्रतिष्ठित करने में गुजराती (दयानंद, गांधी) और बंगाली (केशव चंद्र सेन, भूदेव मुखोपाध्याय) का योगदान अधिक रहा है।

यह सच है कि 1870 से 1940 के दशक के बीच हिंदी देश में संपर्क की भाषा के रूप में प्रतिष्ठित हुई और एक सम्मति बनी कि आजाद भारत में हिंदी राष्ट्रभाषा बनेगी।

ऐसा नहीं हुआ। संविधान में और सरकारी दस्तावेजों में हिंदी राष्ट्रभाषा बनी लेकिन विशेष कारणों से अंग्रेजी को ही प्रश्रय दिया जाता रहा। ऐसा होने के कारण पर ध्यान दिया जा सकता है।

दरअसल भारत में औपनिवेशिक काल में अंग्रेज शासन तंत्र के ऊपरी स्तर पर थे लेकिन उनके साथ भारतीय उच्च वर्ग का एक हिस्सा काम करता रहा जो अंग्रेजों के समर्थन और विरोध दोनों की राजनीति करता रहा। यह विशेष वर्ग अंग्रेजों के सांस्कृतिक प्रभाव में बना रहा। अंग्रेज जब गए तो लोकतांत्रिक प्रक्रिया के अंतर्गत लोगों को आगे आना चाहिए था, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। शक्ति अंग्रेजों के हाथ से निकलकर उन भारतीयों के हाथ में आ गई जो यूरोपीय मानसिकता के निकट थे। प्राचीन भारतीय परंपरा की आंतरिक शक्ति के प्रति उनकी आस्था नहीं थी। इस प्रभाव के कारण ही हिंदी को पिछड़ी भाषा के रूप में ही देखा जाता रहा। भारत में सांस्कृतिक डी कॉलिनाइजेशन हो नहीं सका। अंग्रेजी का वर्चस्व और अधिक बढ़ गया।

प्रेमचंद के समय से साठ के दशक तक हिंदी साहित्य तो बहुत समृद्ध होता रहा लेकिन ज्ञान उत्पादन के क्षेत्र में हिंदी को बहुत सारी बाधाओं का सामना करना पड़ा। यह बात कही जाती रही कि रचनात्मक भाषा के रूप में हिंदी ठीक है लेकिन विचार की भाषा तो अंग्रेजी ही है।

हिंदी के पाठ्य क्रम में सबसे बड़ी समस्या यह है कि इसका विकास ठीक से नहीं किया गया। यह विद्यार्थियों को ठीक से समझ में नहीं आता कि हिंदी का विकास कैसे हुआ। भारतेंदु के समय में हिंदी नई चाल में ढली कहने के साथ लगभग यह भाव प्रतिष्ठित हुआ है कि हिंदी को हिंदी के लिखने पढ़ने वालों ने बनाया और चलाया। सच यह है कि हिंदी का विकास लोक जगत से जुड़ी परिघटना है। इस भाषा का विकास लोक भाषा के रूप में हुआ जिसे विकसित करने में लोगों के साथ संत, भक्त, व्यापारी और पर्यटक आदि का योगदान भी है। औपनिवेशिक युग में भाषा के प्रश्न को उलझा दिया गया। देश में भाषा की समस्या उन्नीसवीं शताब्दी के पहले कभी नहीं रही। भाषा के साथ एक भूगोल भी चलने लगा और इतिहास, देश और क्षेत्रीय अस्मिताओं के बीच बहस को हवा मिली।

अगर आधुनिक युग के हिन्दी के इतिहास को भी ठीक से देखा जाए तो मोटे तौर पर यह कहना गलत नहीं होगा कि आधुनिक हिंदी का विकास राष्ट्रीयता के विकास के साथ हुआ। जैसे–जैसे देश में राष्ट्रीयता की चेतना का प्रसार हुआ हिंदी बढ़ती गई। इस बात को याद रखने से हिंदी पाठ्य क्रम के साथ भारत के इतिहास लेखन का एक जोड़ भी बनता है।

लोक परम्परा से जोड़कर लोक हित की भावना और राष्ट्रीयता की चेतना को पाठ्यक्रम में प्रतिबिंबित करना इस दिशा में मददगार हो सकता है।

यह कैसे हो, इस पर विचार करते हुए यह कहा जाना चाहिए कि देश को एकता के सूत्र में पिरोने में हिंदी की क्या भूमिका है। देश को बांटकर देखने की प्रवृत्ति अंग्रेजों की थी। इसके कारण स्पष्ट हैं। उनको शासन करना था और भारतीयों के बीच के अंतर को बढ़ाने में उनको लाभ था। लेकिन यहीं बात खत्म नहीं होती। दरअसल भारत को विभाजित करके देखने की इस औपनिवेशिक प्रवृत्ति को भारतीय शिक्षा से इस तरह जोड़ दिया गया कि आधुनिक शिक्षा पाया हुआ व्यक्ति अपने ही देश को पराई दृष्टि से देखने लगा। इस आधुनिक शिक्षा में आई दृष्टि का ही प्रभाव था कि अंग्रेजों के जाने के बाद भी उसी दृष्टि को अंग्रेजी शिक्षा से दीक्षित भारतीयों ने बनाए रखा। देश की सांस्कृतिक एकता और परंपरा के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण को शिक्षा में स्थान दिए बिना भारतीयता की सही समझ संभव नहीं। इतिहास और साहित्य की शिक्षा इसमें सहायक हो सकते हैं, यह बात ध्यान देने की है।

भारत सांस्कृतिक रूप से एक साभ्यतिक राष्ट्र (सिविलाइजेशनल नेशन) रहा है। राजनीतिक रूप से भले ही लगातार एक न रहें लेकिन धार्मिक, सांस्कृतिक व्यवहार और साहित्यिक धरातलों पर इस देश के विभिन्न हिस्सों में एकता रही है। इस एकता को देश के लोग समझते हैं। इस एकता के सूत्र को स्वामी विवेकानंद ने ठीक से समझा था। बंगाल के इस महान व्यक्ति ने देश की यात्रा की, राजस्थान के राजा का पूर्ण सहयोग पाया और सुदूर दक्षिण में कन्याकुमारी में भारत की एकता को ठीक से समझा! दक्षिण के संतों का उत्तर में प्रभाव और पूरे देश के मंदिरों में पूजित देवी देवताओं की कथाओं में भी एकता के सूत्र हैं इसको समझना बहुत कठिन नहीं है।

भारत की ज्ञान परम्पराओं को भी इतिहास और साहित्य दोनों धरातलों पर समझना होगा। प्राचीन काल के ग्रंथों, बौद्ध और जैन ग्रंथों से होते हुए मध्यकालीन संत कवियों की रचनाओं में देश का संचित इतिहास सुरक्षित है। जरूरत है इस महान साहित्यिक संपदा को राष्ट्रीयता की चेतना से देखने की। मध्यकालीन साहित्य में इस्लामी प्रभाव के दौर में भी हिन्दी साहित्य की मूल प्रवृत्तिख्रलोक से जुड़ाव की– बाधित नहीं हुई और कालजयी रचनाएँ सृजित हुई।

इस देश ने एक अद्‌भुत प्रकार की समावेशी संस्कृति का विकास किया है जिसमें हर धर्म और आचार व्यवहार के लोगों को शामिल किया जाता रहा है। इस कारण से यहां धार्मिक आधार पर संघर्ष दीर्घस्थायी नहीं रहे। इस कारण से साहित्यिक परंपराओं में बहुत लेन देन रहा है। इस बात का ध्यान भी रखना होगा

कि इस लेन देन ने हमारी साहित्यिक परंपरा को बहुत ही व्यापक बनाया है। एक ही समय में परस्पर विरोधी विचारों को स्थान दिया जाता रहा है। इस दृष्टि से विचार करते हुए देखते हुए भारतीय साहित्यिक परंपराओं को देखना उचित होगा।

इस संदर्भ में जो एक बात गौर करने की है कि भारतीय विचार और साहित्यिक परंपराओं के साथ अन्य देशों का, खासकर पूर्व एशिया के देशों के साथ घनिष्ठ संबंध प्राचीन काल से ही रहा है। 1920 और 1930 के दशक में के सी नाग और अन्य लोगों ने ग्रेटर इंडिया की धारणा को प्रचारित करने का प्रयास किया था। भारतीय दर्शन और साहित्य की व्यापकता और प्रसार को हम पाठ्य पुस्तकों में ला सकें इसके लिए प्रयास की जरूरत है। क्या यह किसी को याद है कि जावा और सुमात्रा में भारतीय प्रभाव का कितना गौरवशाली इतिहास रहा है?

भारत के साथ तिब्बत, पूर्व एशिया के अन्य देशों के साथ संपर्क को पाठ्यक्रम में स्थान मिलना चाहिए। राहुल सांकृत्यायन ने जिस पीड़ा से भारतीय दृष्टि के अभाव की चर्चा की थी वह समझने की जरूरत है।

भारतीयता की पहचान और उसकी दृष्टि से अतीत को देखने और साहित्यिक परम्पराओं को ध्यान में रखकर साहित्य का पाठ्यक्रम तैयार होना चाहिए।

अंत में एक और बात को ध्यान में रखने की जरूरत है।

हिंदी और भारतीयता के वैश्विक प्रसार के इस युग में हिंदी के भारतीय डायसपोरा के कारण वैश्विक भाषा के रूप में हिंदी का प्रभाव क्षेत्र बढ़ा है। विश्व के लगभग हर हिस्से में हिंदी साहित्य रचा जा रहा है और प्रवासी हिंदी साहित्य खूब पढ़ा जा रहा है। हिंदी के पाठ्यक्रम में निश्चित रूप से प्रवासी हिंदी साहित्य को भी स्थान मिलना चाहिए। आज जब वैश्विक स्तर पर हिंदी का प्रसार बढ़ रहा है, जरूरी है कि हिंदी पढ़ने वाले विद्यार्थी यह समझें कि उनके साहित्य का एक ग्लोबल स्वरूप है। हिंदी के प्रति उपेक्षा का भाव रखने वाले पश्चिमोन्मुखी शक्तियों ने हिंदी को उत्तर भारत के सवर्ण की भाषा के रूप में देखने की दृष्टि को प्रचारित कर रखा है। हिंदी आंदोलन को और उनसे जुड़े लोगों की निंदा करना उन्हें बहुत प्रिय है इसलिए जो भारत को कमजोर करने की जो छुपे हुए कारण है उनकी भी पड़ताल की जानी चाहिए।

आज हमें सभी विषयों को औपनिवेशिक दृष्टि से मुक्त होकर देखने की आवश्यकता है। पाठ्यक्रम की भाषा दुरूह न हो, हिंदी में नहीं हो सकता, इस प्रकार के दुष्प्रचार से हमें बचने की जरूरत है। साथ ही हिंदी में अहिंदी भाषी प्रदेश में

लिखे जा रहे हिंदी साहित्य को भी पाठ्यक्रम में सम्मिलित किया जाना चाहिए इससे भारतीय ज्ञान परम्परा को उचित स्थान मिलेगा। हिंदी साहित्य की पाठ्यपुस्तकों में भारतीयता की व्यापक दृष्टि से बहुत गंभीरता से पाठ्य सामग्री को शामिल करने की जरूरत है जिससे हिंदी और मजबूत होगी भारतीय ज्ञान परम्परा का विस्तार होगा।

10

प्रो. पूनम कुमारी

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली

भारतीयता क्या है? कोई एक परंपरा, विचार, दर्शन ग्रंथ भारतीयता को परिभाषित नहीं कर सकते, भारतीयता विविध परंपराओं, दर्शनों, विचारों ग्रंथों के समुच्चय से भारतीयता का निर्माण होता है और इन सबके मूल में तो **''सर्वे भवंतु सुखिनः, सर्वे संतु निरामयाः, सर्वे भद्राणि पश्यन्ति मां कश्चित् दुःख भाग भवेत, वासुदैव कुटुम्बकम''** की अवधारणा भारतीयता की पहचान के केंद्र में रखी जा सकती है।

यहां हम लोग 9, 10, 11, 12 के NCERT के पाठ्यपुस्तकों को केंद्र में रख कर बदलाव पर चिंतन करने जा रहें हैं। यहाँ थोड़ा सा आपका ध्यान एक और महत्वपूर्ण आयाम की ओर जाना चाहिए कि किस प्रकार अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए विशेष ऐजेंडे के तहत भारतीयता के नेरेटिव को बदलने की, उसे एक विशेष तरह से प्रस्तुत करने की साजिश रची गई। दो, तीन पुख्ता उदाहरणों से इसे हम देख सकते हैं। रिज्ले के 1891 की जनगणना के बारे में अधिकांश लोग जानते हैं।

रिज्ले ने अपनी जनगणना आख्या में बताया कि भारतीय समाज विभिन्न जातियों में बंटा हुआ है, भारत के देशी जीवन का फ्रेमवर्क ऐसे ही समूहों से बना हुआ है। इस बात को ध्यान में रखकर ही कानून प्रशासन चलाना चाहिए। लेकिन उसी समय एक और जनगणना रिपोर्ट आई (विलियम क्रुक की ''दी ट्राइब्स एंड कास्टस् ऑफ नॉर्थ वेस्टर्न इंडिया प्राविन्सेज'' 1896 में ''जाति भारत की कोई अनोखी व्यवस्था नहीं, सर्वव्यापी पेशा प्राप्ति समाजिक व्यवस्था का भारतीय रूप है। तथाकथित मूल विभाजन (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शुद्र) का वास्तविक तथ्यों से कोई संबंध नहीं है। ये टर्म्स किन्हीं वास्तविक निश्चित जन समूहों को संकेत नहीं करते।

लेकिन बात यहीं खत्म नहीं हो जाती है। अंग्रेजी शासकों ने रिज्ले महोदय की रिपोर्ट को तो प्रदर्शित किया। लेकिन विलियम क्रुक्स की रिपोर्ट को सार्वजनिक नहीं किया। ये रिपोर्ट पुनः 1975 में उस समय भी इस पर बहुत ध्यान नहीं दिया जा रहा है कि जाति को लेकर अंग्रेजों ने नैर्तेत्य सेट किया था उसके जाल में हम किस तरह फंसते चले गए। स्वतंत्रता के पश्चात भी उसी नकारात्मक को लेकर आगे बढ़ते रहें। आज जब भारतीय समाज में जातियों के पथ को जानने की कोशिश की जा रही है तो ऐसी बातें निकल कर सामने आ रही है जो आंखे खोल देने वाली है। क्रुक ने अपनी रिपोर्ट में सीधे सीधे कहा कि सभी का नस्ली मूल एक सा ही है और समूची भारतीय जाति व्यवस्था पेशों के आधार पर विकसित और संचालित होती रही है, रक्त के आधार पर नहीं। जाति भारत की कोई अनोखी व्यवस्था नहीं सर्वव्यापी पेशा पारित सामाजिक व्यवस्था का भारतीय रूप है।

ये बात सिर्फ विलयम क्रुक नहीं कह रहे थे। निकोलस डर्क्स अपनी पुस्तक– **''कास्टस् आफ माइंड : कोलोनियलिज्म एंड दि मेकिंग ऑफ मॉर्डन इंडिया 2001 में कहते हैं''** जिस रूप में आज हम जाति व्यवस्था को जानते हैं, इस रूप में जाति एक आधुनिक परिघटना है, दूसरा जन्म भारत और पश्चिमी औपनिवेशिक शासन के ऐतिहासिक संपर्क के कारण हुआ। डेली स्रोत भी इसी बात को कह रहे थे। रिपोर्ट मर्दमाशुमारीः मुंशी हरदयाल सिंह, मुंशी देवी प्रसाद ने भी यही कहा कि जाति आज जिन श्रेणियों में विभक्त है वैसी पहले नहीं थी।

कहने का आशय यह है कि जाति का जो खाका अपने नेरेटिव को सिद्ध करने के लिए अंग्रेजों ने खींचा हम उसी को ढोते जा रहे हैं, पहले क्या था ये जानने की कोशिश नहीं की।

ब्रिटिशर का ऐजेंडा क्या था इस पर एक ओर उदाहरण देते हुए मैं हिंदी साहित्य पर आती हूँ। ग्रियर्सन सुप्रसिद्ध भाषाविद् हैं, हिंदी साहित्य में उनके योगदान को नहीं भूला जा सकता। लेकिन क्रिश्चियनटी के प्रचार प्रसार में उन्होंने जो कहा है उसे भी जानने की जरूरत है और उसके पीछे के उद्देश्य को समझने की जरूरत है षरिलिजन ऑफ एंसिएंट इंडियाष नामक अपने लेख में उन्होंने स्पष्ट कहा है कि भारत में ईसाइयत के प्रचार प्रसार में भारतीय दर्शन के ब्रह्म के सगुण और निर्गुण दोनों रूपों की स्वीकृति सबसे बड़ी बाधा है।

इसलिए ग्रियर्सन ने अपने हिंदी साहित्य के इतिहास में भक्ति काव्य को स्पष्ट रूप से दो भागों में बांटा है सगुण और निर्गुण, जबकि सगुण और निर्गुण में विभेद

जितना स्पष्ट है उतना ही स्पष्ट है उनकी एकता, जोर एकता पर होना चाहिए था। लेकिन जोर विभाजन पर दिया गया।

9, 10, 11, 12 के NCERT के हिंदी सिलेबस पर मैंने 9, 10, 11, 12 की किताबें खरीदी और देखा कि अपने प्राचीन गौरव और संस्कृति को बच्चों को अवगत कराया जाना जरूरी है। इससे सम्बंधित पथ होने चाहिए। वास्तव में हमारी संस्कृति क्या थी। प्राचीन भारत में स्त्रियों की कैसी स्थिति थी वाद- विवाद, विमर्श की क्या परम्परा थी आदि।

11

प्रो. ममता वालिया

प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, भीमराव अम्बेडकर कॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय

भारत बहुजातीय, बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक एवं बहु मत-मतांतरों वाला देश है। यही कारण कि ऊपरी तौर पर भारत और भारतीयता से अपरिचित लोग भारत को एक राष्ट्र नहीं बल्कि कई राज्यों के समूह के रूप में देखते हैं। ऐसी सोच रखने वाले नहीं जानते कि तमिल, तेलगू, कन्नड़, मलयाली, गुजराती, बांग्ला, पंजाबी, उडिया, असमिया- आदि भाषाएँ अपनी-अपनी क्षेत्रीय विशिष्टताओं के बावजूद एकसूत्र में बंधी हैं। रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद एवं स्मृतियों आदि के साथ-साथ कालिदास, माघ, शूद्रक, भवभूति, अश्वघोष प्रभृति रचनाकारों की साहित्यिक विरासत सभी भारतीय भाषाओं को उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त हुई हैं। भरतमुनि, मम्मट, भामह, दण्डी, पाणिनी- आदि आचार्यों के काव्यानुशासन सभी भारतीय भाषाओं के लिए 'लाइटहाउस' अथवा पथ-प्रदर्शक की भूमिका निभा रहे हैं।

'साहित्य में 'भारतीयता' के सूत्र तलाशने से पहले 'भारतीयता' को जानना बेहद जरूरी है। दरअसल भारतीयता उस विचार या भाव को कहा जा सकता है जिसमें भारत से जुड़ने का बोध होता हो। इसे इस तरह भी कह सकते है कि भारत से जुड़ाव ही भारतीयता है। ऐसे में वे लोग जो शिक्षा में भारतीयता का विरोध करते हैं, उनकी मंशा पर संदेह होना स्वाभाविक है। भारतीयता प्रत्येक भारतवासी की 'आइडेंटिटी' है और यह बेहद जरूरी है कि हम अपनी जड़ों, अपनी पहचान, अपनी आइडेंटिटी को जानें। पुरानी पीढ़ी के लोगों को औपचारिक शिक्षा-व्यवस्था के माध्यम से भले ही सांस्कृतिक-आध्यात्मिक गौरवबोध का ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ हो लेकिन संयुक्त परिवार प्रणाली के कारण हमारी पुरानी पीढ़ियों ने दादा-दादी, नाना-नानी आदि की गोद में

भारतीय सांस्कृतिक विरासत को जाना नैतिक मूल्यों का पाठ पढ़ा–सीखा और जीवन में आत्मसात् भी किया लेकिन वर्तमान पीढ़ी जिनके जीवन में दादा–दादी, नाना–नानी की बजाय सोशल मीडिया, वीडियो गेम्स, वेबसीरीज आदि अहम् भूमिका निभा रहे हैं, को 'भारतीय' बनाए रखने के लिए भारतीय शिक्षा नीति और उसके तहत बनाए जाने वाले पाठ्यक्रमों पर विशेष ध्यान दिया जाना बेहद जरूरी हो गया है। किसी भी देश की शिक्षा नीति का निर्धारण करते समय उस देश के जीवन–दर्शन और सांस्कृतिक धरोहर को केंद्र में रखा जाना बेहद जरूरी है।

प्राचीन भारतीय जीवन–दर्शन धर्म से अनुप्राणित था। जीवन के सभी क्षेत्र यथा–समाज, राजनीति, अर्थतंत्र एवं संस्कृति आदि धर्म से संचालित एवं नियंत्रित थे। ध्यान देने योग्य बात यह है कि 'धर्म' से अभिप्राय सम्प्रदाय या पंथ नहीं था लेकिन जब भी शिक्षा में भारतीय जीवन–दर्शन पर आधारित पाठ्यक्रम के निर्माण की बात होती है तो वामपंथी विचारधारा के आलोचक इसे शिक्षा के 'भगवाकरण' की साजिश करार करते हुए, शिक्षा में इसके समावेश में बाधा उत्पन्न करते है। संस्कृत और संस्कृति की बात उन्हें परेशान करती है। भारतीय संस्कृति 'वसुधैव कुटुम्बकम्' के भाव से अनुप्राणित है। पश्चिम के 'ग्लोबलाइजेशन' में मुनाफा कमाने और केवल अपना विकास और विस्तार की कामना निहित है। मार्शल मैक्लुहान ने जिस 'ग्लोबल विलेज' की संकल्पना की थी, उसके मूल में पूरे विश्व को अपना माल बेचने की चाहत थी जबकि भारतीय संस्कृति का 'वसुधैव कुटुम्बकम्' उदात् भाव से समस्त सृष्टि से आत्मीय सम्बन्ध स्थापित करते हुए 'सर्वे भवन्तु सुखिनः'– सभी सुखी रहे, की कामना करता है। ऐसी उदात् संस्कृति वाले राष्ट्र की शिक्षा में भी ऐसे जीवन–दर्शन का समावेश किया जाना अत्यंत आवश्यक है। प्राचीन भारतीय शिक्षा का उद्देश्य 'पुरुषार्थ चतुष्ट्य' पर केन्द्रित था। इसमें शिक्षा और जीवन का उद्देश्य एक ही था। जीवन की तरह शिक्षा में भी धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष– चारों को महत्त्व दिया गया। इस बात को समझने के लिए भारतीय गुरुकुल शिक्षा प्रणाली को जानना जरूरी है। गुरुकुल में छात्रों को पुस्तकीय ज्ञान के साथ–साथ कृषि, पशु–पालन, पाक–कला, युद्ध–कला आदि का व्यावहारिक ज्ञान भी सिखाया जाता था। प्रायः यह शिक्षण–कर्म प्रकृति की गोद में होता था। इस शिक्षा–पद्धति में अमीर–गरीब का अंतर नहीं होता था। कृष्ण और सुदामा, ने एक ही गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण की थी। दोनों की मैत्री इस बात का प्रमाण है कि शिक्षा ग्रहण करते समय गुरुजनों नें आर्थिक असमानता के अंतर को परे करते हुए उन्हें विविध विषयों का ज्ञान प्रदान

किया होगा। वर्तमान शिक्षा प्रणाली में गुरुकुल प्रणाली की इस विशेषता का ग्रहण करने की सख्त जरूरत है। इतना ही नहीं समृद्ध परिवारों के 'कान्वेंट' स्कूल की शिक्षा प्राप्त करने वाले बच्चे बड़े होकर सुविधाजीवी और निरंकुश प्रवृत्ति के बन जाते हैं। देश की भावी पीढ़ी को गुरुकुल प्रणाली की परिपाटी पर शारीरिक श्रम के महत्व से भी परिचित कराया जाना बेहद जरूरी है। प्राचीन भारतीय शिक्षा पद्धति विद्यार्थी को आध्यात्मिक उन्नति के साथ-साथ शारीरिक श्रम के महत्त्व से भी अवगत कराती थी। शिक्षा में सैद्धांतिक पक्ष से ज्यादा व्यावहारिक पक्ष पर जोर था। आर्थिक और सामाजिक समानता-प्राचीन शिक्षा संस्थानों की विशेषता थी। गुरुकुल में शिक्षण-कर्म करने वाले ऋषि-मुनि अपने शिष्यों के अभिभावक, मार्गदर्शक, और मित्र आदि की भूमिका में शिक्षा प्रदान करते थे। यह शिक्षण-कर्म सेवा भाव से किया जाता था, इसमें व्यावसायिकता का पूर्णतया अभाव था।

भारतीय मनीषा ने जिन शाश्वत मूल्यों से सम्पूर्ण विश्व को परिचित कराया, आज हमारी शिक्षा पद्धति में उनका अभाव सा दिखता है। यूं तो इसके लिए 1000 वर्षों की गुलामी और विदेशी आक्रान्ताओं का दोष रहा है लेकिन इसमें भी सबसे ज्यादा लार्ड मैकाले की शिक्षा-नीति को इसके लिए जिम्मेदार माना जा सकता है। मैकाले का दृढ़ विश्वास था कि यदि भारत को हमेशा के लिए गुलाम बनाए रखना है तो इसके लिए स्वदेशी सांस्कृतिक बोध से सम्पन्न शिक्षा-व्यवस्था के ढाँचे को नष्ट करना होगा। कहते हैं मैकाले के नई शिक्षा नीति लागू करने के समय भारत के करीब-करीब 7 लाख गुरुकुल थे, जो संस्कृत भाषा में शिक्षण-प्रशिक्षण कर रहे थे। इन गुरुकुलों में आध्यात्म एवं धर्म-दर्शन के साथ-साथ चिकित्सा, आयुर्वेद, रसायन शास्त्र, धातु शास्त्र, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र तथा खगोलविद्या का भी अध्ययन-अध्यापन हो रहा था। मैकाले को ब्रिटिश साम्राज्यवाद में यह शिक्षण-पद्धति सबसे बड़ी बाधक दिख रही थी। मैकाले जानता था भारत की आध्यात्मिक सांस्कृतिक विरासत को समाप्त करने के लिए उसकी पुरातन शिक्षा नीति में बदलाव जरूरी है। 1858 ई. में 'इंडियन एजूकेशन एक्ट' लागू करके मैकाले ने भारत की समावेशी शिक्षण व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया। इस एक्ट के कारण सभी संस्कृत भाषा में शिक्षा प्रदान करने वाले गुरुकुलों पर प्रतिबंध लगा दिया गया। शिक्षा के माध्यम के रूप में संस्कृत भाषा की अनिवार्यता भी समाप्त कर दी गई। शिक्षा का माध्यम संस्कृत या हिंदी की जगह अंग्रेजी भाषा बन गई। मैकाले ने शिक्षा नीति में 'अधोगामी निस्पंदन के सिद्धांत' (Downward Filtration Theory) को अपनाते

हुए भारत के उच्च और मध्यम वर्ग के एक छोटे से हिस्से को शिक्षित करने का लक्ष्य रखा। अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा प्राप्त करने वाला यह वर्ग महज रंग-रूप में भारतीय था, लेकिन उसकी भाषा, भेषज, वेशभूषा, संस्कृति, तौर-तरीके और सबसे ज्यादा उसकी सोच, पूरी तरह से अंग्रेजियत से प्रभावित थी। इस शिक्षा नीति में भारत और भारतीयता के प्रति हीनता की भावना को बढ़ावा मिला। भारतीय सभ्यता और भारतीय संस्कृति के प्रति भारतीयों में हीनता का भाव पैदा होने लगा। इस शिक्षा नीति के तहत महज संस्कृत और हिंदी ही नहीं बल्कि अन्य भारतीय भाषाओं को भी व्यर्थ और अनुपयोगी साबित करने का कुचक्र रचा गया। अंग्रेजी शिक्षा नीति लागू करते समय मैकाले ने यह विश्वास जताया था कि यदि उनकी यह शिक्षा नीति भारत में 50 वर्ष भी भारत में सफलतापूर्वक लागू रही तो भारत अगले 500 वर्षों तक अंग्रेजों का गुलाम रहेगा। मैकाले का यह विश्वास किसी हद तक सही प्रतीत हो रहा है। अंग्रेजों को भारत छोड़कर गए 75 वर्ष बीत गए लेकिन हम भारतीयों का मानस आज भी मानसिक रूप सें अंग्रेजों का गुलाम ही है। हमारा खान-पान, वेशभूषा, गीत-संगीत, रीति-रिवाज, आचार-विचार- सभी पर अंग्रेजियत हावी है। प्रश्न उत्पन्न होता है कि जब जापान की शिक्षा में जापानी भाषा और संस्कृति, चीन देश की शिक्षा में चीनी भाषा और चीनी संस्कृति और इसी क्रम में जर्मनी, कोरिया, इंग्लैंड आदि देशों में वहां की भाषा और संस्कृति को सम्मिलित किया जाता है तो फिर भारतीय शिक्षा पद्धति में भारतीय भाषाओं और संस्कृति की उपेक्षा क्यों की जाए? इसके साथ ही पाश्चात्य अंधानुकरण करते हुए भारतीय शिक्षा का व्यवसायीकरण भी कर दिया गया है। किसी हद तक देश का भौतिक विकास महत्वपूर्ण है किंतु शिक्षा का उद्देश्य महज सुख-सुविधाओं और वैभव विलास के साधन जुटाना नहीं होना चाहिए। चारित्रिक विकास या आध्यात्मिक उन्नति के अभाव में यह भौतिक विकास बिना प्राण के देह के समान होगा। पाश्चात्य शिक्षा पद्धति इसी भौतिकवादी दृष्टिकोण से संचालित है और हमने आजादी के 75 वर्षों के बाद भी हमारी शिक्षा नीति मैकाले के प्रभाव से मुक्त नहीं हो पाई। हिंदी के प्रसिद्ध कवि भारतेन्दु हरिश्चंद्र शिक्षा नीति की इस विसंगति पर चिंता प्रकट करते कहा था :-

निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,
बिनु निज भाषा-ज्ञान के, मिटत न हिय को सूल।
अंग्रेजी पढ़ि के जदपि, सब गुन होत प्रवीन,
पै निज भाषा-ज्ञान बिन, रहत हीन के हीन।

इन पंक्तियों में भारतेंदु हरिश्चंद्र का निज भाषा को उन्नति से जोड़ने का उद्देश्य महज उस भाषा विशेष और उसके साहित्य को पढ़ने भर से नहीं है बल्कि उनका मंतव्य निज भाषा में समस्त ज्ञान-विज्ञान का अध्ययन करने से है। निज भाषा की उपेक्षा की कुछ ऐसी ही पीड़ा अज्ञेय ने भी अभिव्यक्त की थी। अपने एक निबंध में अज्ञेय अंग्रेजी माध्यम से शिक्षा ग्रहण करने की व्यथा को इस प्रकार लेखनीबद्ध करते हैं –

> **''मुझे सब कुछ मिला, पर सब बेपैंदी का। शिक्षा मिली, पर उसकी नींव भाषा नहीं मिली, आजादी मिली, पर उसकी नींव आत्मगौरव नहीं मिला, राष्ट्रीयता मिली, लेकिन उसकी नींव अपनी ऐतिहासिक पहचान नहीं मिली .... मुझे अस्तित्व मिला पर अस्ति नहीं, अवस्था मिली पर आस्था नहीं। .... क्यों नहीं मुझे वह शिक्षा दी जाती, जिससे कि मैं अपनी आत्मा को खोज सकूं। क्यों नहीं मुझे वह भाषा दी जाती जिससे कि मैं व्यक्तित्व पा सकूं .... क्यों नहीं मुझे वह इतिहास मिलता जिससे मैं अपनी इयत्ता पहचान सकूँ, निरे पूर्वापर को परम्परा बनाकर अर्थ दे सकूँ।''**
>
> (असंतोष की पहली पीढ़ी अज्ञेय/नेशनल बुक ट्रस्ट/पृ. 33)

अज्ञेय के लिए सांस्कृतिक अस्मिता ही भारतीयता की पर्याय थी। इन भारतीय भाषाओं में शिक्षा की आवश्यकता पर और भी बहुत से भाषाविदों, समाजशास्त्रियों और साहित्यकारों ने बल दिया है लेकिन शिक्षा नीति और पाठ्यक्रमों के निर्माण में अभी तक कुछ ठोस कार्य देखने को नहीं मिल रहा। शिक्षा नीति का निर्धारण करते समय भारतीय मानस और भारतीय सांस्कृतिक अस्मिता को ध्यान में रखा जाना जरूरी है। भारतीय मानस का आकर्षण त्याग के लिए है, राजसत्ता प्राप्ति के लिए नहीं। इस देश में राजा और सेनापति समाज के आदर्श नहीं रहे। राम भी राम तभी बने जब पिता के दिए वचन को पूरा करने के लिए उन्होंने 14 वर्षों के कष्टमय जीवन को सहर्ष स्वीकार किया। कृष्ण ने भगवान होते हुए भी गांधारी के श्राप को विनम्रतापूर्वक शिरोधार्य किया। हमारे आदर्श वहीं हैं, जिन्होंने अपने जीवन को त्याग और साधना के लिए समर्पित किया है। विद्यार्थियों को ज्ञान के साथ-साथ ऐसे उदात् चरित्रों और उनके जीवन-मूल्यों से भी अवगत कराया जाए ताकि देश के भावी नागरिकों का चरित्र-निर्माण भी हो सके।

संक्षेप में कह सकते है कि बाहरी संस्कृतियों और भाषाओं को जानने-समझने और सीखने में कोई बुराई नहीं है लेकिन उन्हें जानने और सीखने के क्रम में अपनी भाषा और संस्कृति की उपेक्षा की जाए, यह सर्वथा निंदनीय है। इन दिनों भारत सरकार नई शिक्षा नीति के प्रारूप और पाठ्यक्रमों की दिशा में कार्य कर रही है। इस नई शिक्षा नीति से यही अपेक्षा है कि हमारी शिक्षा नीति पहली शिक्षा नीतियों की तरह अंग्रेजी शिक्षा पद्धति की अनुकृति न बने। पाठ्यक्रमों में प्रायोगिक एवं व्यावहारिक पक्ष पर ज्यादा बल दिया जाए। प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च शिक्षा तक व्यक्तित्व निर्माण का सतत् प्रयास किया जाए। भारतीय विचारकों और ज्ञान-परंपरा से भी भारतीय विद्यार्थियों को परिचित कराया जाए। प्राचीन संकल्पना और आधुनिकता - दोनों के ताने-बाने से भारतीय शिक्षा नीति का निर्माण किया जाए। विद्यार्थियों को आधुनिक गणित के साथ वैदिक गणित, आधुनिक खगोलशास्त्र के साथ-साथ वैदिक कालीन खगोलशास्त्रीय ज्ञान की समृद्ध परंपरा से अवगत कराया जाए। यदि कृषि व्यवस्था से जुड़े किसी पाठ्यक्रम में आधुनिक कृषि तकनीकें शामिल की जा रही है तो उसमें जैवीय खेती की प्राचीन परम्परा को भी पाठ्यक्रम का हिस्सा बनाया जाए। राजनीति और अर्थशास्त्र में विदेशी विचारकों के साथ चाणक्य प्रभृति महान विचारक के चिंतन से भी विद्यार्थियों का परिचय कराया जाए। इतिहास में तो भारतीय इतिहास के उज्ज्वल पक्ष की सर्वथा उपेक्षा हुई है। मुगलों और यूरोपियन इतिहास को महिमामंडित और भारतीय इतिहास को तुच्छ और हेय करके पढ़ाया जाता रहा है। वामपंथियों ने इतिहास के साथ सबसे ज्यादा खिलवाड़ की है। हमारी कई पीढ़ियाँ महाराणा रंजीत सिंह को डाकू, चंद्रशेखर आजाद जैसे क्रांतिकारियों को आतंकवादी और अकबर को 'दि ग्रेट' पढ़-पढ़कर बड़ी हो गई। मुगल शासकों के अत्याचारों और दमन को हमसे छिपाया जाता रहा है। 21वीं शताब्दी की भारतीय पीढ़ियों को समय रहते इतिहास की कड़वी सच्चाईयों और स्वर्णिम अतीत- दोनों से परिचित कराने की जरूरत है। अंत में सबसे महत्वपूर्ण शिक्षा के माध्यम के रूप में भारतीय भाषाओं का प्रयोग किया जाए। शिक्षा के ढाँचे में आमूल-चूल बदलाव इतना आसान नहीं है लेकिन असंभव भी नहीं है। अपने लेख का समाहार राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त की पंक्तियों से करना चाहूँगी -

> जिनकों न निज भाषा तथा निज राष्ट्र का अभिमान है,
> वह नर नहीं पशु निरा और मृतक समान है।

निश्चित रूप से पशुवत और मृतक समाज जीवन कभी भी स्वीकार्य नहीं होगा। निज भाषा और निज राष्ट्र के सम्मान में ही हमारे मान-सम्मान का संरक्षण है।

12

प्रो किरण हजारिका

प्राचार्य, तंगखत कॉलेज, डिब्रुगढ़, असम

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के क्रियान्वयन में सर्वप्रथम कर्नाटक सरकार ने सक्रियता दिखाई है। स्कूली और प्राइवेट शिक्षा में जो हिंदी की स्थिति रही है। मुझे लगता है उसमें वाकई सुधार होने की बहुत गुंजाईश है और आने वाले समय में सरकार पूरी कोशिश भी करेगी ऐसी उम्मीद है। अभी शिक्षा विभाग द्वारा प्राथमिक शिक्षा से लेकर उच्च स्तर तक संपूर्ण पाठ्यक्रम एक पोर्टल पर आने वाला है। सभी भाषाओं एवं सभी प्रांतीय भाषाओं में जिसमें लगभग 15 भाषाओं में कार्य पूरा भी हो चुका है बाकी बहुत जल्द पूरा होने की उम्मीद है।

उच्च शिक्षा में हम किस प्रकार के पाठ्यक्रम और प्रोफेशनल शिक्षा, वोकेशनल शिक्षा और शिक्षा शिक्षण सिखाएं। इन तीनों को हम समान रूप से किस प्रकार से उच्च शिक्षा में लागू कर सकते हैं। आज तक हमने बी.एड की पढाई की है वो केवल स्कूल की पढाई के लिए अनिवार्य की है। एक बार प्रोफेसर बनने के बाद एक-आध पोस्ट रखते हैं और एक आध प्रेजेंटेशन कराते हैं और कुछ यह सब भी नहीं कराते इसीलिए भारतीय ज्ञान परंपरा का पूर्णरूप से साक्षात्त्कार और इसके लिए अभी प्रयास जारी है ताकि अभी इंटीग्रेटेड उच्च शिक्षा शिक्षण में यह जरूरी किया जा सके। साथ ही जो मल्टीप्लडिस्प्लीनरी सिस्टम लागू होने जा रहा है। अब हमें अवसर मिला है, तो हमें हर एक भाषा के साथ-साथ अन्य भाषाओं के ज्ञान से भी परिचित होना होगा।

वर्तमान प्रचलित लोककथा, लोकजीवन में प्रचलित मूल्यों के ज्ञान का आंकलन भी पाठ्यक्रम में होना चाहिए। हमारी भारतीय शैक्षिक पृष्ठभूमि की समृद्ध परंपरा रही है। उस समय भी हमारा देश विश्वगुरु रहा है। आज भी ऑक्सफोर्ड

व अन्य विश्वविद्यालओं के विद्वान हमारे ही विद्वानों की कोटेशन कोट करते हैं। हमारे विद्वानों को कमतर आँका जाता है, जबकि एक समय था जब हमारी शिक्षा पद्धति विश्वविख्यात थी। देश-विदेश से बच्चे यहां पढ़ने आया करते थे। नालंदा विश्वविद्यालय इस बात का सबूत है जिसे आक्रांताओं ने तोड़ा। हमारी प्राचीन शिक्षा पद्धति घर-घर, गांव-गांव के व्यक्तियों को जोड़ने की क्षमता रखती है। The communication system which was developed during that time that was wonderfull. शिक्षा में उस समय जो प्राणतत्व था वो आज की शिक्षा में नहीं है। जो उस समय विश्वविद्यालय थे जो 2500 साल पहले बने थे उस समय भी हमारे देश में कई हमलावर आये हमारी शिक्षा व्यवस्था को ध्वस्त कर दिया। हमारी संस्कृति की ख्याति इतनी थी कि सभी संस्कृतियाँ उसमें समाहित हो सकती थीं। हमारी शिक्षा व्यवस्था को कई बाहरी देशों ने क्षति पहुंचाई। आक्रांताओं के बाद अंग्रेजों ने भी हमारी शिक्षा व्यवस्था को अपने लाभ के लिए फेरबदल किये। 1835 के आसपास 28 साल के मैकाले भारत आते हैं और इंडियन सिविल एडमिनिस्ट्रेशन पास करके भारत में एक ऐसी शिक्षा व्यवस्था लागू करते हैं, जिसमें भारतियों का खून अंग्रेजी हो जाए। देखा जाए तो आज हम ब्रिटिश बन गए हैं, इंग्लिश कपड़े पहनते हैं, इंग्लिश बोलना पसंद करते हैं। हमने कई बार शिक्षा नीति में संशोधन किया, लेकिन हर बार असल कम नकल ज्यादा रही। हमारी संस्कृति, हमारी सभ्यता, पालिसी सब इमीटेशन यानि हमारे देश में मौलिक कुछ नहीं था क्या? इसके बाद वामतंत्र ने हमारे सिस्टम को सबसे अधिक क्षति पहुंचाया है। इसी सिस्टम को खत्म करने के लिए वाजपेयी जी की सरकार ने प्रयास किया। पाठ्यक्रम में बदलाव लाने का प्रयास 2007 में किया गया था। जिस शिक्षा पद्धति में देश का ज्ञान नहीं वो देश कभी सफल नहीं हो सकता और हमारी शिक्षा पद्धति, हमारी संस्कृति से अनभिज्ञ है।

जापान, अमेरिका अन्य देशों की शिक्षा व्यवस्था में अपने इतिहास के बारे में सब पढ़ाया जाता है। परन्तु हमारे देश में हम अपने ही महापुरुषों के बारे में सही से नहीं जानते। बच्चों को अपने इतिहास और विद्वानों से परिचित कराने के लिए नई शिक्षा नीति में कई बदलाव किये जा रहें हैं जिससे शिक्षा व्यवस्था दुरुस्त होगी। भारत की सभी भाषाओं में कंटेंट मिलना चाहिए। राइट ब्रदर्स ने भारत का सेम्पल चुराकर विमान बनाया था। जर्मनी ने हमारे प्राच्य का इतिहास ट्रांसलेट करके इतनी तरक्की की है, वेदों की कहानी, रामायण, महाभारत पढाई जानी चाहिए, संस्कृति भी विज्ञान है उसे भी पढ़ाया जाना चाहिए। हमारे पास तो पहले से ही पंचांग का

ज्ञान है, चिकित्सा का भी ज्ञान है, हमें आयुर्वेद का भी ज्ञान देना चाहिए। इस नई शिक्षा नीति में बहुत संभावनाएं हैं। हमारे बच्चे अब अपनी परंपरा और महापुरुषों के ज्ञान से समृद्ध हो पाएंगे।

13

प्रो. मैथिली राव

उपनिदेशक, शोधार्थी प्रशिक्षण एवं प्रबंधन केंद्र, प्रोफेसर हिन्दी विभाग, जैन (अभिमत पात्र विश्वविद्यालय), हिन्दी पाठ्यक्रम की समीक्षा : कर्नाटक के सन्दर्भ में

अध्ययन काल में शिक्षा के उद्देश्यों को पूर्ण करने का यदि कोई माध्यम है तो वो है पाठ्यक्रम। किसी भी स्तर पर, शिक्षण से संबंधित, सभी संबद्ध विषयों को, तर्कपूर्ण रीति से, सीखते हुए एक स्तर से दूसरे की ओर अग्रसर होने के लिए पाठ्यक्रम अनिवार्य है। शिक्षा एवं शिक्षण व्यवस्था की यह चुनौती है कि व्यक्ति को मात्र किसी व्यावहारिक ज्ञान में पारंगत न करते हुए, कौशल भी प्रदान करे तथा इन सब से बढकर समाज एवं राष्ट्र के प्रति अपना सक्रिय योगदान दे। कौन-सा विषय कितना, कितनी गहराई के साथ तथा कब पढ़ाना चाहिए - इसका एक सुनिश्चित ब्यौरा पाठ्यक्रम द्वारा ही प्राप्त होता है।

परिभाषा

अर्थवत्ता के दृष्टिकोण से अंग्रेजी में पाठ्यक्रम के लिए दो शब्दों का प्रयोग किया जाता है- सिलेबस तथा करिक्युलम। हिन्दी में इसका अनुवाद है- पाठ्यक्रम एवं पाठ्यचर्या। माध्यमिक शिक्षा आयोग के अनुसार- ''पाठ्यक्रम का अर्थ केवल उन सैद्धान्तिक विषयों से नहीं है जो विद्यालयों में परम्परागत रूप से पढ़ाये जाते हैं, बल्कि इसमें अनुभवों की वह सम्पूर्णता भी सम्मिलित होती है, जिनको विद्यार्थी विद्यालय, कक्षा, पुस्तकालय, प्रयोगशाला, कार्यशाला, खेल के मैदान तथा शिक्षक एवं छात्रों के अनेक अनौपचारिक सम्पर्को से प्राप्त करता है। इस प्रकार विद्यालय का सम्पूर्ण जीवन पाठ्यक्रम हो जाता है जो छात्रों के जीवन के सभी पक्षों को प्रभावित करता है और उनके संतुलित व्यक्तित्व के विकास में सहायता देता है।''[1]

ऑक्सफोर्ड शब्दकोश में सिलेबस की परिभाषा है ''किसी पाठ्यक्रम में निर्धारित विषयों की सूची; पाठ्यक्रम-विवरण, पाठ्य-विवरण'' तो करिक्युलम को परिभाषित करते हुए कहता है कि 'विद्यालय, महाविद्यालय या विश्वविद्यालय में पढ़ाए जाने वाले समस्त विषय; पाठ्यचर्या, पाठ्यक्रम; पाठ्यक्रम विशेष का पाठ्य विवरण।'

कैंब्रिज शब्दकोश के अनुसार सिलेबस **'एक योजना है जो किसी विशेष पाठ्यक्रम में अध्ययन किए जाने वाले विषयों या पुस्तकों का विवरण, विशेष रूप से एक पाठ्यक्रम जो परीक्षा की ओर ले जाता है।'**

मेरियम वेब्स्टर ने अपनी परिभाषा में एक नये तत्व, परीक्षा, को जोड़ते हुए कहा है के सिलेबस का तात्पर्य है **'एक प्रवचन, ग्रंथ, या अध्ययन के पाठ्यक्रम या परीक्षा की आवश्यकताओं के लिए एक सारांश, एक रूपरेखा'।** करिक्युलम के विषय में उसका कहना है कि वह **'एक शैक्षणिक संस्थान द्वारा पेश किए जाने वाले, सभी विषयों का समग्र पाठ्यक्रम।'** इस दृष्टिकोण से विज्ञान के करिक्युलम में गणित, भौतिकी, सांख्यिकी का सिलेबस संलग्न है।

हिंदी में सिलेबस के लिए पाठ्यक्रम तथा करिक्युलम के लिए पाठ्यचर्या का प्रयोग किया गया है। सभी परिभाषाओं का सार यह है कि एक पाठ्यक्रम, शिक्षा या प्रशिक्षण में शामिल किए जाने वाले विषयों की रूपरेखा और सारांश है। यह वर्णनात्मक होता है। एक पाठ्यक्रम अक्सर या तो एक शिक्षण बोर्ड द्वारा निर्धारित किया जाता है, या उच्चतर शिक्षा स्तर पर शिक्षक/प्रोफेसर द्वारा तैयार किया जाता है जो पाठ्यक्रम की गुणवत्ता का पर्यवेक्षण या नियंत्रण करता है। आमतौर पर प्रत्येक छात्र को अपनी श्रेणी के प्रथम सत्र के दौरान या उससे पहले दिया जाता है ताकि उसके उद्देश्य और उन्हें प्राप्त करने के साधन स्पष्ट हों।[2]

एक पाठ्यक्रम में आमतौर पर सभी विषयों की व्यापक एवं विशिष्ट जानकारी होती है। उदहारण. पाठ्यक्रम में क्या शामिल किया जाएगा इसकी रूपरेखा; परीक्षण के माध्यम एवं तिथियों की एक अनुसूची, परियोजना का विवरण एवं उसके लिए नियत तारीख; पाठ्यक्रम के लिए ग्रेडिंग नीति; विशिष्ट कक्षा नियम आदि। परीक्षा केवल पाठ्यक्रम में शामिल जानकारी के आधार पर ज्ञान का परीक्षण कर सकती है। अतः एक ही बोर्ड के सभी शिक्षकों द्वारा एक ही पाठ्यक्रम को लागू करने के कारण, चाहे वो किसी भी विद्यालय में, कहीं भी पढ़ा रहा हो, उसे यह पता होता है कि कब क्या पढ़ाया जाना चाहिए, परीक्षा कब होगी, उसका प्रारूप क्या

होगा, क्या आवश्यक है क्या अनावश्यक आदि। इससे शिक्षण में एक सामान्यीकरण आ जाता है। उदाहरण. केंद्रीय विद्यालय, जवाहर नवोदय विद्यालय, दिल्ली पब्लिक स्कूल आदि।

शिक्षा का दर्शन

दर्शन पाठ्यचर्या-विकास के केंद्र में है। यह शिक्षकों को विश्वासों, तर्कों और धारणाओं को तैयार करने और मूल्य निर्णय लेने में मदद करता है। दर्शन का ज्ञान एक व्यापक दृष्टिकोण विकसित करता है, और यह स्पष्टीकरण देने में भी मदद करता है कि विद्यालय क्या है, कौन-से विषय महत्त्वपूर्ण हैं, छात्रों को कैसे सीखना चाहिए, और किन सामग्रियों और विधियों का उपयोग किया जाना चाहिए। अपनी समग्रता में, शिक्षा के बारे में निर्णय लेने के लिए, दर्शन प्रारंभिक बिंदु प्रदान करता है।

किसी भी शैक्षिक कार्यक्रम में पाठ्यक्रम के निर्धारण के लिए भी दर्शन से प्रेरणा प्राप्त होती है। मरियम-वेबस्टर डिक्शनरी दर्शन को ''ज्ञान, सत्य, सही और गलत के बारे में बुनियादी विचारों का अध्ययन'' मानते हैं। . . और जीवन के अर्थ की प्रकृति। प्रायः दर्शन के स्पष्ट हो जाने से, पाठ्यक्रम का निर्धारण करने में संलग्न शिक्षक पूर्वाग्रह से मुक्त होकर यह कार्य कर सकता है। दर्शन का ज्ञान होने पर पाठ्यक्रम की अर्थवत्ता, उसकी विशेषता, उपयोगिता आदि को स्पष्ट एवं निश्चित किया जा सकता है। इस प्रकार, दर्शन हमारी विचार प्रक्रिया को स्पष्ट करने में मदद करके पाठ्यक्रम प्रवृत्तियों और पाठ्यक्रम विकास प्रक्रिया का एक महत्त्वपूर्ण निर्धारक बनकर प्रस्तुत होता है।

दर्शन की दो व्यापक श्रेणियां हैं: पारंपरिक और आधुनिक दर्शन। उन श्रेणियों में से प्रत्येक में, आदर्शवाद, यथार्थवाद, व्यावहारिकता, और अस्तित्ववाद जैसे प्रमुख दर्शन हैं, साथ ही उन प्रमुख दर्शन से उत्पन्न होने वाले शैक्षिक दर्शन भी हैं। इनमें पारंपरिक श्रेणी में स्थायित्ववाद (Perennialism) और अनिवार्यता (Essentialism) शामिल हैं, जबकि प्रगतिवाद (Progressivism) और पुनर्निर्माणवाद (Reconstructionism) आधुनिक दर्शन के अंतर्गत आते हैं।[3]

आदर्शवाद

यूनानी दार्शनिक प्लेटो द्वारा प्रस्तावित आदर्शवाद को सबसे पुरानी दार्शनिक प्रणालियों में से एक माना जाता है। आदर्शवाद इस बात की वकालत करता है कि विचार ही

वास्तविक और स्थायी हैं, अर्थात विचार ही एकमात्र सच्ची वास्तविकता है तथा उसकी मान्यता है कि मनुष्य एक आध्यात्मिक प्राणी है। इस दर्शन के अनुसार, शिक्षा एक व्यक्ति के विकास की प्रक्रिया है जो उसके चेतन और आध्यात्मिक स्व के विकास के साथ जुड़ा है। सीखने की अंतिम जिम्मेदारी शिक्षार्थियों की होती है। विद्यालय चरित्र विकसित करने, ज्ञान बढ़ाने और सौंदर्यात्मक आस्वादन की क्षमता को विकसित करने की भूमिका निभाता है। छात्रों की यह अपेक्षा होती है कि शिक्षक एक आदर्श, मित्र और मार्गदर्शक हो।[4]

यथार्थवाद

यथार्थवाद की विचारधारा के प्रस्ताव एवं विकास का श्रेय यूनानी दार्शनिक अरस्तू को मिलता है। इस दर्शन के अनुसार, जो पदार्थ या वस्तुएँ हम देखते हैं, वे स्वयं अस्तित्व में हैं, अर्थात वे मनुष्य के साथ या उसके बिना पूरी तरह से मौजूद हैं। दूसरे शब्दों में, पदार्थ मानव मन की रचना नहीं है। इस दर्शन के अनुसार पदार्थ स्वतंत्र हैं, ब्रह्मांड में कानून और व्यवस्था कायम है तथा विश्व के सिद्धांत सत्य हैं जिसका अन्वेषण वैज्ञानिकों ने किया है। इस प्रकार, दुनिया का वस्तुनिष्ठ ज्ञान होना संभव है। हमारी इंद्रियां भी ज्ञान का स्रोत हैं। दर्शन इस बात की भी वकालत करता है कि मूल्य वस्तुनिष्ठ रूप से मौजूद हैं; वे निरपेक्ष और शाश्वत हैं।[5]

यथार्थवाद के शैक्षिक निहितार्थ निम्नलिखित हैं

- शिक्षा का परम उद्देश्य है प्रकृति और ब्रह्मांड के आंतरिक कार्यों के ज्ञान की उपलब्धि।
- विरासत में मिली संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुंचाना शिक्षा का अनिवार्य उद्देश्य है।
- पाठ्यचर्या के विषयों में संस्कृति के कुछ तत्त्व होने चाहिए।
- महत्त्वपूर्ण सिद्धांतों और सैद्धांतिक अंतर्दृष्टि की खोज तथा बौद्धिक कौशल विकसित करने के लिए छात्रों को, विषयों को सीखना चाहिए।

इस दर्शन के आधार पर प्रत्येक शिक्षार्थी के लिए एक, अलग, मुख्य पाठ्यक्रम होना चाहिए।

व्यवहारवाद

व्यावहारिकता के मुख्य प्रस्तावक जॉन डेवी (1859-1952) थे। उनके अनुसार सामाजिक प्रगति के लिए व्यावहारिक सिद्धांत के आधार पर प्रश्न उठाना आवश्यक है। उनका मानना था कि सफल वैज्ञानिक पूछताछ के तर्क और दृष्टिकोण यदि उचित रूप से परिकल्पित किए जाएं तो नैतिकता और राजनीति पर उसका सफल अनुप्रयोग किया जा सकता है। व्यावहारिकता के समर्थक आदर्शवाद और यथार्थवाद द्वारा समर्थित पारंपरिक शिक्षा प्रणाली की विफलताओं या कमियों के खिलाफ प्रतिक्रिया प्रकट कर रहे थे। उनकी आलोचना थी कि -

- पारंपरिक पाठ्यचर्या सामग्री में बहुत सारी अर्थहीन और अनावश्यक सामग्री शामिल थी।
- पारंपरिक पाठ्यक्रम ने उपयोगिता पर आधारित शिक्षा नहीं दी।
- पाठ्यक्रम कठोर था और प्रत्येक शिक्षार्थी की व्यक्तिगत जरूरतों को पूरा नहीं करता था।

व्यवहारवादियों ने पाठ्यक्रम निर्धारण की प्रक्रिया में वास्तविकता को सहायक माने जाने की वकालत की। उनके अनुसार समस्याओं का समाधान निकालने के लिए, इस सिद्धांत को एक उपकरण के रूप में इस्तेमाल किया जाना चाहिए। इसलिए दर्शन व्यावहारिक उपयोगिता पर आधारित है। इसलिए सत्य वही है जो हमारे लिए सार्थक एवं उपयोगी है। सत्य वही है जिसका परीक्षण, सत्यापन किया गया हो और जो समस्याओं को हल करने में प्रभावी पाया गया हो।[6]

व्यावहारिकता के शैक्षिक निहितार्थ क्या हैं?

इस सिद्धांत के अनुसार यदि अनुभव ज्ञान का स्रोत है, तो यह शिक्षा का भी स्रोत है। हम क्रियान्वयन से सीखते हैं। हालांकि, हर अनुभव शिक्षाप्रद नहीं होता है; अनुभव उत्पादक होना चाहिए, यानी विकास में योगदान देना चाहिए। अतः भविष्य की समस्याओं से निपटने के लिए शिक्षार्थियों की क्षमता विकसित करना यानी समस्याओं को हल करने के लिए बुद्धि का विकास करना ही शैक्षिक उद्देश्य होना चाहिए। व्यावहारिकता का प्रस्ताव है कि पाठ्यक्रम का निर्माण दैनिक जीवन से उत्पन्न होने वाली समस्याओं पर आधारित हो। इसलिए विद्यालय, घर और समुदाय का विस्तार है। शिक्षक को एक संसाधक और मार्गदर्शक एवं प्रेरक होना चाहिए तथा शिक्षण

को बाल केन्द्रित होना चाहिए। व्यवहारवादियों के लिए, सभी विषय महत्त्वपूर्ण हैं। हालाँकि, विज्ञान को अधिक समर्थन दिया जाता है क्योंकि उनके अनुसार इसके माध्यम से छात्र नए ज्ञान का पता लगाने में सक्षम होता है।

अस्तित्ववाद (existentialism)

इसके अनुसार एक व्यक्ति अपने जीवन की शैली को चुनने के लिए स्वतंत्र है और उसका भाग्य उसके नियंत्रण में है। इस प्रकार एक व्यक्ति चुनाव करने और उनके लिए जिम्मेदार होने के लिए स्वतंत्र है। वास्तविकता, इसलिए, व्यक्तिपरक है। जिन मूल्यों को व्यक्ति अपनी धारणा के अनुसार स्वतंत्र रूप से चुनता है उनपर जोर दिया जाना चाहिए।

शिक्षा के दृष्टिकोण से यह सिद्दांत ज्ञान एवं व्यक्तिगत चयन की क्षमता पर बल देता है। इसलिए, मानव स्थिति के ज्ञान और सिद्धांतों एवं चयन करने की क्रिया को अर्जित किया जाए। पाठ्यचर्या में विषय वस्तु की एक विस्तृत श्रृंखला होनी चाहिए जिसमें से शिक्षार्थी चुन सकते हैं। अर्थात ऐच्छिक, और ऐसे विषयों का समावेश जिनसे मानवीय भावनाएं, सौंदर्यशास्त्र तथा अन्य दार्शनिक विषय संलग्न हों। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि दर्शन शिक्षार्थियों को उनके सीखने और उनके विश्वास का विस्तार करने के लिए मुक्त कर सकता है। इस प्रकार, शिक्षकों के अनुसरण के लिए कोई मानक मार्गदर्शिका नहीं होनी चाहिए, यह देखते हुए कि शिक्षार्थी अद्वितीय हैं।

अब तक चर्चा किए गए प्रमुख दर्शन के आधार पर, विभिन्न विद्वानों द्वारा कुछ शैक्षिक दर्शन विकसित किए गए थे। शैक्षिक दर्शन की दो व्यापक श्रेणियां हैं: पारंपरिक और आधुनिक दर्शन। पारंपरिक शैक्षिक दर्शन में स्थायित्ववाद और पदार्थवाद शामिल हैं; जबकि आधुनिक शैक्षिक दर्शन में प्रगतिवाद और पुनर्निर्माणवाद शामिल हैं।[7]

स्थायित्ववाद (Perennialism)

यह सिद्धांत आदर्शवाद और यथार्थवाद से आकर्षित है तथा इसकी मान्यता है कि शिक्षा सभी के लिए समान होनी चाहिए। ये सत्य निरपेक्ष और सार्वभौमिक है। दर्शन यह मानता है कि महान पुस्तकों से प्राप्त स्थायी अध्ययन और ज्ञान सभी छात्रों को पढ़ाया जाना चाहिए। अन्य विषयों पर जोर दिया गया है जिसमें साहित्य, दर्शन और धर्मशास्त्र शामिल हैं क्योंकि उनकी ष्मन को तेज करनेष की क्षमता है।[8]

पदार्थवाद (essentialism)

पदार्थवाद पारंपरिक विषयों, पढ़ने, लिखने और गणित पर केंद्रित है। इस दर्शन का उद्देश्य छात्रों को अकादमिक ज्ञान और चरित्र विकास के ष्आवश्यकष् के साथ स्थापित करना है।

पदार्थवादी का शैक्षिक उद्देश्य बौद्धिक शक्तियों का विकास करना है, साथ ही सक्षम व्यक्तियों को शिक्षित करना है। इसलिए स्कूलों को छात्रों की व्यक्तिगत समस्याओं और सामाजिक जरूरतों को पूरा करने के लिए पथभ्रष्ट नहीं किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम निर्माण के लिए सांस्कृतिक विरासत की जरूरतों पर विचार किया जाना चाहिए। अनिवार्य कौशल विशेष रूप से पढ़ने, लिखने और अंकगणित (तीन रुपये) और शैक्षणिक विषयों जैसे अंग्रेजी, विज्ञान और गणित को विषय-वस्तु की अवधारणाओं और सिद्धांतों की महारत पर जोर देने के साथ शिक्षा प्रक्रिया में प्राथमिकता दी जाती है।

स्थायित्ववाद की तरह, पाठ्यक्रम विषय-केंद्रित है और एकीकृत विषयों के विपरीत अलग-अलग संगठित विषयों पर जोर देता है। इस मामले में शिक्षक को उसके विषय क्षेत्र में एक अधिकारी माना जाता है।[9]

प्रगतिवाद

प्रगतिवाद व्यावहारिकता से उत्पन्न शैक्षिक दर्शनों में से एक है। इसलिए व्यावहारिकता के बारे में हमने पहले जो चर्चा की वह प्रगतिवाद के लिए सही है। डेवी के योगदान के अलावा, इस क्षेत्र के अन्य विद्वानों में मोंटेसरी, कॉर्नेलियस और रूसो शामिल हैं। उनका अध्ययन और शोध शिक्षार्थियों के लिए सबसे उपयुक्त प्रकार और पाठ्यक्रम की प्रकृति की पहचान करने के लिए तैयार किया गया था।

प्रगतिवादी शिक्षा लोकतांत्रिक स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक जीवन को बढ़ावा देना चाहती है। अन्य प्रमुख जोर एक बच्चे या शिक्षार्थी केंद्रित पाठ्यक्रम पर है। इसलिए पाठ्यचर्या शिक्षार्थियों की अन्य विशेषताओं के साथ-साथ शिक्षार्थियों की रुचियों, आवश्यकताओं, योग्यताओं और आकांक्षाओं पर आधारित है।

प्रगतिशील शिक्षा पाठ्यक्रम ने शिक्षण/अधिगम प्रक्रिया के लिए पाँच दृष्टिकोणों पर बल दिया, अर्थात्:

- पाठ्यचर्या गतिविधियों की शिक्षक-शिष्य योजना,
- लचीला पाठ्यक्रम और व्यक्तिगत निर्देश, और

- शिक्षार्थी केंद्रित शिक्षण और सीखने की पद्धति।
- शिक्षार्थी की व्यक्त रुचियों और चिंताओं के अनुरूप अध्ययन सामग्री का चयन। गैर-औपचारिक पाठ्यक्रम गतिविधियाँ और खेल, संबंधित शौक और अन्य सह-पाठयक्रम क्षेत्रों जैसे क्षेत्रों में शारीरिक प्रशिक्षण।
- शिक्षा के इस रूप का उद्देश्य एक सीखने का माहौल प्रदान करना है जो बच्चों को अधिकतम आत्म-दिशा की अनुमति देता है और शिक्षण / सीखने की प्रक्रिया में शिक्षक के वर्चस्व को कम करता है।

प्रगतिवाद के संबंध में, बाल-केंद्रित पाठ्यक्रम पर जोर दिया जाता है, जिसके लिए एक लचीले और व्यापक पाठ्यक्रम की आवश्यकता होती है। व्यावहारिक कौशल पर भी जोर दिया जाता है।[10]

पुनःनिर्माण

पुनर्निर्माणवादी एक मानवशास्त्रीय-समाजशास्त्रीय दर्शन पर कायम हैं जो स्कूलों को समाज के पुनर्निर्माण में सबसे आगे रखेगा। पुनर्निर्माणवाद प्रगतिवादियों के काम के एक आलोचनात्मक दृष्टिकोण से विकसित हुआ, जो कभी-कभी सामाजिक जरूरतों की कीमत पर बच्चे की जरूरतों पर ज्यादा जोर देते हैं।

पुनर्निर्माणवादियों के शैक्षिक उद्देश्य समाज में सुधार और पुनर्निर्माण करना है, साथ ही परिवर्तन और सामाजिक सुधार के लिए शिक्षा भी है। इस प्रकार, समकालीन सामाजिक समस्याओं का अध्ययन पाठ्यचर्या विषयवस्तु का केंद्र बिंदु बन जाता है।

पुनर्निर्माणवादियों का मानना है कि इन समस्याओं को हल करने के लिए संसाधन उपलब्ध हैं और शिक्षा पेशा इसे संभव बनाने के लिए भावी पीढ़ियों को तैयार करने और संगठित करने के लिए उत्प्रेरक हो सकता है। हालांकि, वे बच्चों को शिक्षा देने से बचने की कोशिश करते हैं; बल्कि, वे तर्कसंगत चर्चा और मुद्दों के आलोचनात्मक विश्लेषण में उनका नेतृत्व करना चाहते हैं।

पुनर्निर्माणवादी कई शिक्षण सामग्री का उपयोग करते हैं, और वे विषय वस्तु को शामिल करने पर विचार करते हैं जो चिंता के मुद्दे के केंद्रीय कारण की सेवा के लिए उपयोगी होगा। पाठ्यचर्या की योजना में अक्सर विभिन्न हितधारक शामिल होते हैं जिनमें शिक्षार्थी, माता-पिता और समुदाय के नेता शामिल हैं।[11]

विषय वस्तु के सिद्धांत

शैक्षिक दर्शन के आधार पर: बारहमासीवाद, अनिवार्यता और प्रगतिवाद, विषय वस्तु के कुछ सिद्धांतों को उन्नत किया गया है। सिद्धांत, जैसा कि नीचे बताया गया है, पाठ्यक्रम में विषय वस्तु के प्रकार और उद्देश्य को उजागर करता है।

- सिद्धांत 1: विषय वस्तु को स्वयं के लिए पढ़ाया जाना चाहिए।
- सिद्धांत 2: विषय वस्तु को उपयोग के लिए पढ़ाया जाना चाहिए।
- सिद्धांत 3: विषय वस्तु केवल बौद्धिक प्रक्रियाओं, कौशल, दृष्टिकोण और प्रशंसा को पढ़ाने का एक माध्यम है।[12]

सिद्धांत 1: विषय वस्तु को स्वयं के लिए पढ़ाया जाना चाहिए

इस सिद्धांत के समर्थकों का मानना है कि हर चीज का आंतरिक मूल्य होता है। उनका मानना है कि प्रत्येक विषय का अपने आप में मूल्य होता है।

स्वाभाविक रूप से कुछ विषय दूसरों की तुलना में अधिक मूल्यवान होते हैं, इसलिए नहीं कि वे दूसरों की तुलना में अधिक उपयोगी होते हैं, बल्कि इसलिए कि उनका आंतरिक मूल्य अधिक होता है। इस स्थिति के अनुसार, छात्र कभी बीजगणित, लैटिन या शारीरिक शिक्षा जैसे विषयों का उपयोग करेगा या नहीं, इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि शिक्षार्थी को उन विषयों का अध्ययन करना चाहिए जिनका मूल्य सबसे अधिक है। पाठ्यचर्या विकासकर्ता का कार्य उन विषयों की पहचान करना है जो अधिक मूल्यवान समझे जाते हैं।

सिद्धांत 2: विषय वस्तु को उपयोग के लिए पढ़ाया जाना चाहिए

इस सिद्धांत के समर्थकों का मानना है कि किसी विषय का मूल्य उसके उपयोग पर निर्भर करता है। यह स्थिति दार्शनिक विश्वास से प्राप्त होती है कि मूल्य परिचालन सहायक है।

मूल रूप से, यह एक अनिवार्यतावादी की स्थिति है। इस मान्यता के अनुसार पाठ्यचर्या की योजना बनाने में उन अध्ययनों को प्राथमिकता दी जानी चाहिए जिन्हें सीखने वाले को सबसे अधिक जानने की आवश्यकता होगी। इस दृष्टि से ये विषय आवश्यक हैं।

सिद्धांत 3: विषय वस्तु केवल बौद्धिक प्रक्रियाओं, कौशल, दृष्टिकोण और प्रशंसा को पढ़ाने का एक माध्यम है

इस सिद्धांत के समर्थक मुख्यत: प्रगतिवादी हैं। उनका मानना है कि बदलते मूल्यों की इस बदलती दुनिया में, इसके आंतरिक मूल्य के लिए कोई विषय वस्तु आवश्यक नहीं है; और यह बताना बहुत कठिन है कि कौन-सी विषय-वस्तु सबसे अधिक क्रियाशील होने की संभावना है। इसलिए, प्रगतिवादियों का मानना है कि यह विषय वस्तु नहीं बल्कि शिक्षा की प्रक्रिया है जो मायने रखती है। उनके विचार में विषय वस्तु केवल एक माध्यम है जिसके द्वारा छात्रों को स्वतंत्र व्यक्ति बनने के लिए अथवा आवश्यक कौशल सिखाने के लिए तैयार किया जाता है।

पाठ्यक्रम निर्धारण की प्रक्रिया को ऐसी सैद्धांतिक रूपरेखा दी जा सकती है जिससे के समिति के सदस्यों के लिए यह स्पष्ट हो जाए की वे किस प्रकार का पाठ्यक्रम चाहते हैं। परन्तु पाठ्यक्रम के निर्धारण में अनेक सांस्कृतिक, सामाजिक, राजनीतिक तत्व होते हैं जो प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में उसे प्रभावित करते हैं। इस स्थिति में समिति के सदस्यों के लिए यह याद रखना अनिवार्य है कि उनका ये पाठ्यक्रम छात्रों को, उनके विकास को, जो बौद्धिक, सामाजिक, भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक, कुछ भी हो सकता है, प्रभावित करता है।

अत: शिक्षकों के लिए, शिक्षा के दर्शन से अवगत होना अनिवार्य हो जाता है। यह शिक्षकों को विश्वासों, तर्कों और धारणाओं को तैयार करने और मूल्य-निर्णय लेने में मार्गदर्शन करता है। यह उत्तर देने में एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करने में भी मदद करता है कि कौन से विद्यालय और कौन से विषय महत्त्वपूर्ण हैं, छात्रों को कैसे सीखना चाहिए और किन सामग्रियों और विधियों का उपयोग किया जाना चाहिए। हालाँकि, यह सिर्फ एक शुरुआती बिंदु है। चूंकि पाठ्यक्रम में एक मजबूत राजनीतिक तत्व शामिल है, इसलिए शिक्षकों के रूप में हमारे लिए यह महत्वपूर्ण है कि हम यह पहचानें कि कौन-सा दर्शन पाठ्यक्रम का आधार है और यह तय करना है कि छात्रों को शिक्षित करने में पाठ्यक्रम के माध्यम से कैसे समाज में सदस्य और नेता बनेंगे।

कर्नाटक में हिन्दी पाठ्यक्रम मूल्यांकन

किसी भी पाठ्यक्रम के चार पहलू होते हैं :

1. प्रयोजन 2. विषय 3. शिक्षा की शैली 4. मूल्यांकन

एक सफल पाठ्यक्रम में इन चार तत्वों में स्पष्टता होना अनिवार्य है। इन चारों के मध्य एक अंत:संबंध है तथा एक की स्प्ष्टता के लोप में पाठ्यक्रम असफल हो जाता है।

पाठ्यक्रम के आलोचनात्मक मूल्यांकन के कुछ प्रचलित आधार निम्नलिखित हैं

अ. उद्देश्यों के आधार पर: उद्देश्य किसी वस्तु का लक्ष्य या अंतिम बिंदु होता है जिसके लिए कार्यों को निर्देशित किया जाता है। उद्देश्य आम तौर पर एक यात्रा के अंतिम बिंदुओं को इंगित करते हैं। वे निर्दिष्ट करते हैं कि आप कहां होना चाहते हैं या प्रक्रिया के अंत में आप क्या हासिल करना चाहते हैं। एक शैक्षिक उद्देश्य वह उपलब्धि है जिसे एक विशिष्ट शैक्षिक निर्देश बनाने या पूरा करने की अपेक्षा की जाती है। यह किसी भी शैक्षिक निर्देश का परिणाम है। यह वह उद्देश्य है जिसके लिए कोई विशेष शैक्षिक उपक्रम दिया जाता है। पाठ्यक्रम, शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने का एक साधन है। यदि लक्ष्य और साधन मेल नहीं खाते हैं, तो वांछित परिणाम केवल एक स्वप्नदोष होगा। पाठ्यक्रम की उपयोगिता इस तथ्य पर निर्भर करती है कि इसमें शामिल विषय, संबंधित शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति में, सहायक हैं या नहीं। इस संदर्भ में, पाठ्यक्रम का मूल्यांकन करना आवश्यक होगा।

संज्ञानात्मक डोमेन (बौद्धिक क्षमता, यानी ज्ञान, या 'सोचनाश)

क्रैथवोल का प्रभावशाली डोमेन (भावनाएं, भावनाएं और व्यवहार, यानी, रवैया, 'महसूस करना')

साइकोमोटर डोमेन (शारीरिक कौशल, यानी, कौशल, या श्करना')

पाठ्यक्रम का चयन छात्रों के अपेक्षित बौद्धिक स्तर के अनुसार होना चाहिए। वो या तो सैद्धांतिक हो सकता है या व्यावहारिक या दोनों। विज्ञान के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलुओं को समान महत्त्व प्राप्त है। यदि पाठ्यक्रम केवल सैद्धांतिक है, तो यह पाठ्यक्रम को किताबी और सारगर्भित बना देगा। इसके कारण, विभिन्न विषयों की सामग्री का विश्लेषण करना होगा कि इसमें कितना सैद्धांतिक पहलू है और इसमें क्या व्यावहारिक संभावनाएं मौजूद हैं इसे समझना आवश्यक है।

आ. परीक्षा केन्द्रित: विद्यार्थी और शिक्षक दोनों के लिए किसी विषय का महत्व परीक्षाओं में उसके महत्त्व के आधार पर निर्धारित किया जाता है। किसी विषय पर जोर देने की मात्रा शिक्षकों और छात्रों दोनों के लिए परीक्षा के दृष्टिकोण से विषय के मूल्य के साथ बदलती रहती है। इसने इस हद तक प्रभावित किया है कि प्रत्येक विषय के लिए आवंटित अंकों की संख्या पाठ्यक्रम में ही दी गई है।

इ. छात्र केन्द्रितः पाठ्यक्रम केवल सामान्य छात्रों के लिए ही नहीं होना चाहिए, बल्कि इसमें प्रतिभाशाली और पिछड़े छात्रों के लिए भी उचित प्रावधान होने चाहिए। इस दृष्टिकोण से भी पाठ्यक्रम का विश्लेषण किया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम का केंद्र बिंदु छात्र होना चाहिए। छात्रों की उम्र, पूर्व ज्ञान, रुचि, योग्यता, आवश्यकता आदि को ध्यान में रखते हुए पाठ्यक्रम का चयन किया जाना चाहिए। यह पता लगाया जाना चाहिए कि पाठ्यक्रम में इन कारकों को क्या महत्त्व दिया गया है। छात्रों के लिए इसकी उपयोगिता का मूल्यांकन केवल तभी संभव होगा।

वो या तो सैद्धांतिक हो सकता है या व्यावहारिक या दोनों। विज्ञान के सैद्धांतिक और व्यावहारिक पहलुओं को समान महत्त्व प्राप्त है। यदि पाठ्यक्रम केवल सैद्धांतिक है, तो यह पाठ्यक्रम को किताबी और सारगर्भित बना देगा। इसलिए विभिन्न विषयों की सामग्री का विश्लेषण करना होगा कि इसमें कितना सैद्धांतिक पहलू है और इसमें क्या व्यावहारिक संभावनाएं मौजूद हैं, इसे समझना आवश्यक है। ज्ञान-विज्ञान के सभी विषयों में एक दूसरे के साथ सहसंबंध स्थापित करते हुए अनूठे विषयों की जानकारी एवं ज्ञान छात्रों को दिया जा सकता है।

कर्नाटक में 11वीं एवं 12वीं के हिंदी पाठ्यक्रम की समीक्षा

सी. बी. एस. सी : उच्च माध्यमिक स्तर पर पाठ्यचर्या में शिक्षार्थियों में दक्षताओं को बढ़ावा देने के उद्देश्य से, पाठ्यक्रम में सात प्रमुख शिक्षण क्षेत्र शामिल हैं, जो हैं: भाषा, मानविकी, गणित, विज्ञान, कौशल विषय, सामान्य अध्ययन, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा। इन क्षेत्रों को मोटे तौर पर ऐच्छिक और अनिवार्य क्षेत्रों में विभाजित किया गया है।

1.3.1 में दिए गए ऐच्छिक विषयों में (i) भाषाओं में हिन्दी, अंगेजी एवं 30 अन्य भाषाओं को प्रदान किया गया है। भाषाओं के पाठ्यक्रम में सुनने, बोलने, पढ़ने तथा लिखने के कौशल पर केन्द्रित किया गया है जिससे प्रभावी संप्रेषण की निपुणता को विकसित किया जा सके। विचारों को समझने, प्राप्त करने और संप्रेषित करने के लिए, शिक्षार्थी, भाषा का उपयोग करते हैं।

कक्षा 11 एवं 12 में हिंदी या अंग्रेजी का पढना अनिवार्य है। इन दो विषयों को एक साथ भी लिया जा सकता है। छात्रों की अलग-अलग पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए हिन्दी एवं अंग्रेजी में दो पाठ्यक्रम प्रदान किए जाते हैं। छात्र हिंदी ऐच्छिक (कोड 002) या हिंदी कोर (कोड 302) और अंग्रेजी ऐच्छिक (कोड

–001) या अंग्रेजी कोर (कोड –301) का विकल्प चुन सकते हैं। हालाँकि, एक ही भाषा को मुख्य और वैकल्पिक दोनों स्तरों पर पेश नहीं किया जा सकता है।

क्षेत्रीय भाषाओं हेतु : राज्य सरकार के बोर्ड द्वारा प्रस्तावित पाठ्यपुस्तक को स्वीकार करने की सलाह दी जाती है।

आई. एस. सी : कुल 33 ऐच्छिक विषय तथा एक अनिवार्य विषय प्रदान किया जाता है। नियमों के अनुसार अंग्रेजी अनिवार्य विषय है तथा 33 ऐच्छिक विषयों में एक भारतीय भाषा, एक आधुनिक अंतरराष्ट्रीय भाषा, एक शास्त्रीय भाषा तथा ऐच्छिक अंग्रेजी प्रदान किया जाता है। यहां भी हिंदी को कोई स्थान प्राप्त नहीं है।

पी यू सी (राज्य सरकार)

भाषा के विषय में कर्नाटक सरकार त्रिभाषी सूत्र का पालन करती है। अंग्रेजी को अनिवार्य विषय तथा हिंदी, संस्कृत, कन्नड, तमिल, मलयालम, फ्रेंच में से किसी का भी चयन किया जा सकता है। अधिकांश महाविद्यालय/विद्यालय हिंदी, संस्कृत या कन्नड ही प्रदान करते हैं। अन्य को सभी महाविद्यालयों में प्रदान नहीं किया जाता। शिक्षार्थी चाहे वाणिज्य, विज्ञान या कला ले उसे अनिवार्यतः दो भाषाओं को पढ़ना पड़ता है।

वास्तव में हिंदी प्रथम भाषा तथा अंग्रेजी द्वितीय भाषा होनी चाहिए। परंतु इसके विपरीत अंग्रेजी को प्रथम तथा हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं को द्वितीय श्रेणी में रखा जाता है। फिर भी यह अवश्य है कि उच्च माध्यमिक शिक्षा में हिंदी का पठन –पाठन अवश्य होता है। 12वीं की अंतिम परीक्षा में लगभग 1 लाख छात्र हिंदी की परीक्षा देते हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

इस नीति में यह परिकल्पना की गई है कि स्कूली शिक्षा में मौजूदा 10+2 संरचना को एक नए उद्देश्य के साथ संशोधित किया जाएगा तथा 5+3+3+4 के आधार पर शैक्षणिक योजना और पाठ्यचर्या का पुनर्गठन किया जाएगा।

4.12 के अनुसार केंद्र और राज्य दोनों की ओर से, भाषा के पठन –पाठन के संदर्भ में विस्तृत एवं गंभीर प्रयास होगा। सरकारें, देश, और, विशेष रूप से, संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित सभी भाषाओं के लिए, आसपास की

सभी क्षेत्रीय भाषाओं में, बड़ी संख्या में भाषा शिक्षकों में निवेश करेंगी। राज्य, विशेष रूप से भारत के विभिन्न क्षेत्रों के राज्य, द्विपक्षीय समझौतों में प्रवेश कर सकते हैं त्रिभाषा फार्मूले को संतुष्ट करने के लिए एवं संबंधित राज्यों, और देश भर में भारतीय भाषाओं के अध्ययन को प्रोत्साहित करने के लिए भी एक दूसरे से बड़ी संख्या में शिक्षकों को नियुक्त करें। विभिन्न भाषाओं को पढ़ाने, सीखने और लोकप्रिय बनाने के लिए व्यापक रूप से प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाएगा।

4.13. संवैधानिक प्रावधान, लोगों, क्षेत्रों और संघ की आकांक्षाओं को सशक्त बनाने के लिए, बहुभाषावाद के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा देने के लिए त्रिभाषा सूत्र को लागू किया जाता रहेगा। हालाँकि, त्रिभाषा सूत्र में अधिक लचीलापन होगा और किसी भी राज्य पर कोई भाषा नहीं थोपी जाएगी। राज्यों एवं क्षेत्रों तथा स्वयं छात्रों के इच्छानुसार तीन भाषाएं सीखी जायेंगीं जो बच्चों द्वारा राज्यों, क्षेत्रों और निश्चित रूप से स्वयं छात्रों की पसंद होगी जब तक कि तीन में से कम से कम दो भाषाएँ भारत की मूल भाषाएं हों। विशेष रूप से, यदि कोई छात्र एक या उससे अधिक भाषाओं को बदलना चाहते हैं तो वे जिन तीन भाषाओं का अध्ययन कर रहे हैं उनमें से अधिक से अधिक कक्षा 6 या 7 में ऐसा कर सकते हैं, जब तक कि वे करने में सक्षम हों तीन भाषाओं में बुनियादी दक्षता प्रदर्शित करें (साहित्य में भारत की एक भाषा सहित स्तर) माध्यमिक विद्यालय के अंत तक।

इसके अंतर्गत कक्षा 9-12 तक एकीकृत पद्धति का पालन करना है जिसके अंतर्गत इस 4 वर्षो में शिक्षार्थी को 48 विषय पढ़ने हैं। इस संबंध में अभी तक कोई परिपत्र जारी नहीं किया गया है परंतु नीति में यह प्रस्तावित है।

शिक्षार्थी को प्रत्येक छमाही में कुछ विषय पढने हैं। इसके अंतर्गत भी 20 अनिवार्य तथा 28 ऐच्छिक विषय हैं। प्रत्येक छमाही में कुछ विषयों में उत्तीर्ण होना अनिवार्य है। इसमें विद्यालय छात्रों को 5 विषय करवाते हैं जिसमें भाषा एक विषय होता है। कुछ विद्यालयों में गणित के स्थान पर छात्रों को कुछ विकल्प दिए जाते हैं जैसे शारीरिक शिक्षा, भूगोल इत्यादि। अंतत: उन 4 विषयों को लिया जाता है जिनमें छात्र के अंक बहुत अच्छे हैं। इसलिए विद्यालय का प्रबंधन छात्रों को वही विषय प्रदान करते हैं जिनमें अधिक छात्रों के होने की संभावना है। इसका मुख्य कारण है शिक्षा का अर्थशास्त्र। बल्कि यह कहना गलत न होगा कि हम ज्ञान को आर्थिक लाभ से जोड़ देने के कारण बच्चों को सिर्फ वही सिखाते हैं, तथा सीखने के लिए कहते हैं, जिसमें आजीविका के अच्छे उपाय निकलें, विदेश जाने का अवसर मिले

आदि। यह उपयोगितावादी दृष्टिकोण है। उपयोगितावाद तथा व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के मुख्य उद्देश्य से ही राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 ने शिक्षा की मुख्यधारा में व्यावसायिक शिक्षा को भी महत्त्व दिया है। इसके अंतर्गत 3-5-8 का एक प्रारूप तैयार किया गया है जिसके अंतर्गत योग्यता निर्माण के उद्देश्य से मूल्यांकन को अधिक वैज्ञानिक बना दिया गया है। इसके अंतर्गत जब छात्र इन तीन कक्षाओं में होगा वो कुछ ऐसे विषयों को चुनेगा जिससे उसे कौशल प्राप्त हो। 10 दिन वो बिना बस्ते के विद्यालय जाएगा। उन 10 दिनों में वो अपने विद्यालय के 150 मीटर की सीमा में स्थित ऐसे स्थानों को जाएगा और ज्ञान प्राप्त करेगा जो कौशल/व्यवसाय प्रधान हैं। जैसे हथकर्घा, शिल्पकला, चित्रकारी या अन्य कोई भी व्यवसाय जिसमें उसकी रुचि हो। फिर जब वो 9वीं कक्षा से 10वीं की ओर जाएगा और उसे उन 48 विषयों में से चुनना होगा, उसे इस बात की जानकारी रहेगी कि उसे किस विषय में रुचि है तथा किसमें व्यवसाय के अवसर मिलते हैं। इस बीच वो 9-12 कक्षा में 15 दिन इंटर्नशिप करेगा। 4 साल में 60 दिन वो कोई विशेष कौशल सीखेगा जिससे कि उसे सही विषय का चयन करने की क्षमता होगी। इस नीति में इतना सब कुछ है परंतु अधिकांश विद्यालय इसे लागू नहीं करना चाहते क्योंकि इसमें उनका फायदा कम और काम अधिक है। इस व्यवस्था के कारण सीखने की दुनिया, कर्म की दुनिया के साथ निर्बाध संबंध स्थापित करने में सफल होगी।

इन सबके बीच में उठती है बहस भाषा की। अधिकांश भाषा से हमारा भावनात्मक संबंध होने के कारण हम इसके बारे में व्यावहारिक दृष्टिकोण से सोचने में असमर्थ हैं। यह सामान्य मान्यता है कि भाषा के अध्ययन से कोई लाभ नहीं। अतः बच्चे लगातार सिर्फ ऐसे विषय चुनते हैं जिनसे उनके व्यावहारिक जीवन में सफल होने की सहायता मिल सके। मुख्य रूप से वे अभियांत्रिकी, चिकित्सा या विधि का चयन करते हैं। 11 वी एवं 12 वीं में विशेषतः छात्र अन्य किसी भी विषय के प्रति रुचि नहीं दिखाते तथा व्यवस्था भी ऐसी है कि इससे उनकी कोई हानि भी नहीं होती। इन विषयों को प्रदान करने वाले महाविद्यालयों में दाखिला लेने के लिए 12वीं के अंकों की गणना नहीं होती तथा इनके लिए आयोजित प्रवेश-परीक्षा में प्राप्त अंक ही महत्त्वपूर्ण हैं। ऐसे में छात्र भाषाओं को नगण्य मानते हैं।

प्रथम वर्ष पी. यू. सी : हिंदी पाठ्यक्रम

पुस्तकः साहित्य वैभव

प्रथम सोपानः गद्य भाग

बडे घर की बेटी	प्रेमचंद
युवाओं से	स्वामी विवेकानंद
निंदा रस	हरिशंकर परसाई
बिन्दा	महादेवी वर्मा
बाबासाहेबद डा. अंबेडकर	शांति स्वरूप बौद्ध
दिल का दौरा और एन्जाईना	डा. यतीश अग्रवाल
मेरी बद्रीनाथ यात्रा	विष्णु प्रभाकर
नालायक	विवेकी राय
राष्ट्र का स्वरूप	वसुदेवशरण अग्रवाल
रिहर्सल	ओमप्रकाश आदित्य

द्वितीय सोपान : पद्य भाग

मध्ययुगीन काव्य

कबीरदास के दोहे

तुलसीदास के दोहे

मीराबाई के पद

शरण वचनामृत

रसखान के सवैये

आधुनिक कविता

कुटिया में राजभवन	मैथिलीशरण गुप्त
तोडती पत्थर	सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला'
उल्लास	सुभद्राकुमारी चौहान
तुम गा दो, मेरा गीत अमर हो जाए	हरिवंशराय बच्चन
प्रतिभा के मूल बिन्दू	प्रभाकर माचवे
तुम आओ मन के मुग्ध गीर	डा. सरगू कृष्णमूर्ति
मत घबराना	रामनिवास 'मानव'
अभिनंदनीय नारी	जयंतिप्रसाद नौटियाल

तृतीय सोपान – अपठित भाग (कहानियाँ)

मधुआ	जयशंकर प्रसाद
श्मशान	मन्नू भंडारी
खून का रिश्ता	भीष्म साहनी
शीतलहर	जयप्रकाश कर्दम
सिलिया	सुशीला टाकभौरे
दोपहर का भोजन	अमरकांत

चतुर्थ सोपान – व्याकरण तथा रचना

वाक्य शुद्धि, कारक – रिक्त स्थान की पूर्ति, मुहावरे, काल परिवर्तन, लिंग, वचन, पर्यायवाची / समानार्थी शब्द, विपरीतार्थक / विलोम शब्द, पत्र-लेखन, अपठित गद्यांश, अनुवाद

द्वितीय पी. यू. सी.

पुस्तक : साहित्य गौरव

प्रथम सोपान : गद्य भाग

सुजान भगत	प्रेमंचद
कर्तव्य और सत्यता	डा. श्यामसुन्दरदास
गंगा मैया से साक्षात्कार	डा. बरसानेलाल चतुर्वेदी
एक कहानी यह भी	मन्नू भंडारी
भारतरत्न विश्वेशवरैया	डा. बालशौरी रेड्डी
चीफ की दावत	डा. भीष्म साहनी
भोलाराम का जीव	हरिशंकर परसाई
यात्रा जापान की	ममता कालिया

द्वितीय सोपान : पद्य भाग

मध्ययुगीन काव्य

रैदास बानी

सूरदास के पद

रहीम के दोहे

बिहारी के दोहे

आधुनिक काव्य

अधिकार	महादेवी वर्मा
गहने	कुवेंपु (अनु. डा. विमला)
कायर मत बन	नरेंद्र शर्मा
एक वृक्ष की हत्या	कुँवर नारायण
भारत की धरती	डा. पुण्यमचंद 'मानव'
हो गई है पीर पर्वत–सी	दुष्यंत कुमार

तृतीय सोपान : अपठित भाग - एकांकियां

सूखी डाली	उपेन्द्रनाथ अश्क
प्रतिशोध	डा. रामकुमार वर्मा

चतुर्थ सोपान – व्याकरण तथा रचना

वाक्य शुद्धि, कारक – रिक्त स्थान की पूर्ति, मुहावरे, काल परिवर्तन, लिंग, वचन, पर्यायवाची / समानार्थी शब्द, विपरीतार्थक / विलोम शब्द, पत्र–लेखन, अपठित गद्यांश, अनुवाद

पाठ्यक्रम की समीक्षा के चार आयामों के दृष्टिकोण से हिंदी के पाठ्यक्रम की यदि समीक्षा की जाए तो:

प्रयोजन: साहित्य मुख्यतः मानवीय संवेदना एवं नैतिक मूल्यों को विकसित करता है। इसके अलावा भाषा के विभिन्न आयामों का ग्यान के साथ विशेषतः अहिन्दी क्षेत्रों में भाषा संबंधी कौशल एवं आजीविका के नए आयामों का परिचय प्रदान करते हुए हिन्दी का प्रचार–प्रसार भी हो पाता है। संभव है कि इससे राष्ट्र भाषा के रूप में स्वीकृति भी प्राप्त हो जाए।

विषय : इसके अंतर्गत यह ध्यान देना होता है कि छात्रों को पाठ्यक्रम के माध्यम से में साहित्य की सभी विधाओं एवं प्रमुख लेखकों, कवियों आदि का परिचय प्राप्त हो जाए।

कौशल संबंधी (लिखना, पढना, बोलना, सुनना), अनुप्रयोग के माध्यम से उपयोगिता सृजनात्मक लेखन : स्क्रिप्ट / संवाद लेखन आदि / पत्रकारिता / अनुवाद

क्रियापद्धति: व्याख्यान, सी.बी.एस.सी तथा आई.एस.सी. के विद्यालयों में कुछ नए प्रयोग प्रशिक्षण की आवश्यकता चिंतन तथा / कक्षा में छात्रों की संख्या की चुनौती

मूल्यांकन: परीक्षा / लिखित / कंठस्थ करना

कुछ चुनौतियां, कुछ प्रश्न / कुछ सुझाव

1. वास्तव में हिन्दी / कन्नड / संस्कृत प्रथम भाषा है एवं अंग्रेजी द्वितीय परंतु सामन्यत: इस के ठीक विपरीत ही होता है।
2. हिन्दी या किसी भी भारतीय भाषा को प्रथम भाषा माना जाए तथा अंग्रेजी को अंतर्राष्ट्रीय भाषा घोषित किया जाए। उदा. फिनलैण्ड
3. राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में एक राष्ट्र, एक बोर्ड का प्रस्ताव रखा गया है लेकिन उसमें भारतीय भाषाओं को महत्त्व नहीं मिला है। सरकार ने यह घोषणा तो कर दी कि मातृभाषा को शिक्षण का माध्यम बनाया जा सकता है परंतु जमीनी सच्चाई यह है कि जनता अंग्रेजी को अधिक मान्यता देती है एवं मातृभाषा में पठन-पाठन के लिए सामग्री तैयार नहीं है। अत: ये प्रस्ताव लागू होने से पहले ही हार जाते हैं।
4. सी.बी.एस.सी. एवं आई.एस.सी. के छात्र 11वीं या 12वीं में कोई भी भारतीय भाषा या हिन्दी पढकर नहीं आते अत: जब वो स्नातक स्तर पर आते हैं तो अतिरिक्त अंग्रेजी या फरेन्च जैसी कोई अंतर्राष्ट्रीय भाषा का चयन कर लेते हैं।
5. पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति में सिर्फ उत्तर भारतीय सदस्य हैं अहिंदी क्षेत्रों से, अहिंदी व्यक्तियों का भी कोई प्रतिनिधित्व होना चाहिए।
6. 11वी. / 12वी. की कक्षाओं के पाठ्यक्रम निर्माण के लिए विश्वविद्यालयों के प्रोफेसरों को समिति में रखा गया है। इसे बदलना होगा।
7. महत्त्व मात्र परीक्षाओं से नहीं आता। क्या ये संभव नहीं कि हिंदी को अनिवार्य बना दिया जाए, कम से कम 11वीं में, कम अंकों के लिए ही सही? साहित्य एवं भाषा के महत्व से हम सब भली भांति परिचित हैं। एक तरफ हम सर्वांगीण विकास की बात करते हैं तथा हम ही से

महत्वपूर्ण विषयों को हटा देते हैं। विकल्प देने मात्र से हमारा दायित्व समाप्त नहीं हो जाता। विद्यालय की प्रबंधन समिति हो या विद्यार्थी, दोनों ही, सिर्फ व्यवहार एवं व्यवसाय के दृष्टिकोण से इस मुद्दे का आकलन करेंगे। और यदि इसका मतलब है कि हिंदी को हटा देने से उनको लाभ मिलेगा तो वो अवश्य यही करेंगे। राज्यों की सरकार भी सिर्फ क्षेत्रीय भाषा को सुरक्षित रखने तथा भाषा के साथ राजनीति करने में रुचि रखती है।

8. कर्नाटक में, कुछ वर्ष पूर्व, माध्यमिक शिक्षा के स्तर से हिंदी हटा दी गई। इससे पहले वो कम से कम तृतीय भाषा के रूप में पढाई जाती थी। परंतु यह नीति पारित की गई कि हिंदी के स्थान पर कोई भी कौशल से संबंधित विषय रखा जा सकता है। इस नीति को लागू करने के कारण सभी विद्यालयों में हिंदी को हटाकर वह स्थान कौशल को प्रदान किया जाने लगा। इसका दूरगामी प्रभाव पड़ा। 1. हिंदी न लेने के कारण हिंदी के अध्यापकों को या तो नौकरी से हटाया जाने लगा या सरकारी विद्यालयों में उन्हें दूसरे काम दिए जाने लगे। यदि उन्हें अन्य किसी विषय का ज्ञान हो तो प्राथमिक स्तर पर उस विषय को पढ़ाने के लिए मजबूर किया गया। दूसरी ओर एक पूरी पीढ़ी ऐसी तैयार हुई जिसने 11वीं में हिंदी नहीं ली। तो 12वीं में भी ऐसा ही हुआ। वहां पर भी हिंदी के अध्यापक या तो बेरोजगार हो गए या उनकी तन्ख्वाह कम कर दी गई।

9. कई वर्ष पूर्व ही विश्वविद्यालयों से मुख्य विषय के रूप में हिंदी को हटा दिया गया। धीरे-धीरे स्नातकोत्तर स्तर से भी हिंदी हट जाएगी। क्रमशः हिंदी के अध्ययन-अध्यापन में संलग्न लोगों की संख्या कम होती जाएगी। फिर सरकार को, हिंदी को हटाने के लिए, एक और बहाना मिल जाएगा।

10. इस प्रकार की नीतियों के कारण स्वयंसेवी संस्थाओं में भी हिंदी पढने वाले छात्रों की संख्या कम होती जा रही है। उदा. एक समय में कर्नाटक महिला हिंदी प्रचार समिति लगभग 35000 छात्रों को हिंदी के प्रमाण-पत्र प्रदान करती थी। आज उनके पास 3000 छात्र भी नहीं हैं। लगभग 15 वर्ष पहले तक बैंगलोर में ही अनेक हिंदी विद्यालय हुआ करते थे, आज एक भी नहीं है। हिंदी में अच्छे अंक लाने वाले छात्रों को छात्रवृत्ति दी जाती थी जिसे कई अरसे पहले बंद कर दिया गया।

यूनेस्को की महानिदेशक इरिना बोकोवा ने बच्चों द्वारा बोली जाने वाली भाषा में सीखने के मूल सिद्धांत को रेखांकित करते हुए कहा, **"एक नए वैश्विक शिक्षा एजेंडे के साथ, जो सभी के लिए गुणवत्ता, समानता और आजीवन सीखने को प्राथमिकता देता है, शिक्षण और सीखने में मातृभाषा के उपयोग के लिए पूर्ण सम्मान को प्रोत्साहित करना और भाषाई विविधता को बढ़ावा देना आवश्यक है। समावेशी भाषा शिक्षा नीतियां न केवल उच्च सीखने की उपलब्धि की ओर ले जाएंगी, बल्कि सहिष्णुता, सामाजिक सामंजस्य और अंततः शांति में योगदान देंगी।"**

प्राचीनतम काल से भाषा हमेशा राजनीतिक सत्ता-खेलों के परिदृश्य में रही है। इतिहास इस बात का गवाह है कि जहां कभी एक भाषा ने एक ही जुबान वाले लोगों को एकजुट करने के लिए बाधाओं को तोड़ा वहीं पर दूसरी ओर अपने प्राचीन रूप की पवित्रता की रक्षा करने के लिए प्रतिरोध भी बना दिए। बांग्लादेशियों के भाषा आंदोलन को श्रद्धांजलि देने के लिए यूनेस्को ने 1999 में 21 फरवरी को अंतरराष्ट्रीय मातृभाषा दिवस के रूप में घोषित किया। सन 1952 में बांगलादेश का भाषा आन्दोलन इतिहास की उन दुर्लभ घटनाओं में से एक का गवाह है, जहां लोगों ने अपनी मातृभाषा की गरिमा को बनाए रखने और अपनी सांस्कृतिक विरासत को संरक्षित करने के लिए अपने प्राणों की आहुति दी। इस संदर्भ में संयुक्त राष्ट्र की उक्ति है कि, ष्भाषाएं हमारी मूर्त और अमूर्त विरासत को संरक्षित और विकसित करने का सबसे शक्तिशाली साधन हैं। मातृभाषा के प्रसार को बढ़ावा देने के लिए सभी कदम न केवल भाषाई विविधता और बहुभाषी शिक्षा को प्रोत्साहित करने के लिए बल्कि दुनिया भर में भाषाई और सांस्कृतिक परंपराओं के बारे में पूरी जागरूकता विकसित करने और समझ, सहिष्णुता और संवाद के आधार पर एकजुटता को प्रेरित करने के लिए भी काम करेंगे। ष्इसी संदर्भ में भारत में, 2019 में नरेंद्र मोदी सरकार ने राष्ट्रीय शिक्षा नीति का एक मसौदा प्रस्तावित किया जिसमें सुझाव दिया गया कि गैर-हिंदी भाषी राज्यों में हिंदी को पढ़ाया जाना चाहिए। तमिलनाडु में, जो परंपरागत रूप से अंग्रेजी के अनिवार्य अध्ययन का विरोध करता है, प्रतिरोध इतना शक्तिशाली था कि केंद्र सरकार को इस मसौदे के जारी होते ही वापस लेना पड़ा। संशोधित मसौदे में उन भाषाओं को अनिवार्य करने से परहेज किया गया है जो छात्र माध्यमिक स्तर पर तीन-भाषा फार्मूले के तहत अध्ययन करने का विकल्प चुन सकते हैं। भाषा संबंधी द्वंद्वात्मक परिस्थिति की जड़ 1968 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में दिखाई देता

है जिसने प्रस्तुत किया कि अहिंदी भाषी राज्यों में, अंग्रेजी तथा क्षेत्रीय भाषा के अलावा हिंदी को भी पढना होगा। नीतिकारों की प्रायः यह आकांक्षा थी कि हिंदी भारत की संपर्क भाषा के रूप में स्थापित हो जाए। परंतु उस समय भी यह समझा गया कि क्षेत्रीय भाषाओं पर हिंदी अपना वर्चस्व स्थापित करना चाहती है अतः इस प्रस्ताव का तीव्र विरोध हुआ। 21वीं सदी में भी, भूमण्डलीकृत राष्ट्र में, अंग्रेजी को सफलता की कुंजी मानने वाले भारतवासी, हिंदी के इस प्रयास को झुठला रहे हैं। 1918 में महात्मा गांधी ने जिस हिंदी को 'स्वराज्य' प्राप्त करने के लिए महत्त्वपूर्ण माध्यम बताया आज वह हिंदी अस्तिव–संकट के कगार पर है। 14 सितम्बर 1949 को देवनागरी लिपि में लिखी जाने वाली हिंदी को राजभाषा का स्थान प्रदान किया गया परंतु आज भी इस विषय में सर्वसम्मत, एकमत स्वर नहीं उभर रहा है। अपने राज्य की भाषा या मातृभाषा के संरक्षण में हिंदी को शत्रु के रूप में देखा जा रहा है। जो अंग्रेजी भाषा, औपनिवेश एवं गुलामी के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत होती है उसके प्रति उदार दृष्टिकोण दिखाया जा रहा है। परंतु हमें इस बात के प्रति सतर्क हो जाना चाहिए कि एक राष्ट्र के अस्तित्व को निरूपित करती अन्य चिह्नों के साथ भाषा भी एक चिह्न है तथा भारत के लिए वह स्थान हिंदी को ही दिया जा सकता है। अतः संपर्क भाषा, राष्ट्र भाषा के रूप में उसे स्वीकृत करना, उसे पोषित करने का दायित्व उठाना हमारा कर्तव्य है।

संदर्भ सूची

1. www.scotbuzz-org
2. https://ncert.nic.in / पाठ्यचर्या बदलाव के लिए व्यवस्थागत सुधार
3. https://oer.pressbooks-pub/curriculumessentials
4. https://www-qcc-cuny-edu › ppecorino ›Idealism intro_text ›
5. https://adamasuniversity.ac.in/the-relevance-of-realism-in-the-field-of-education-a-philosophical-discourse/
6. https://www.britannica-com › ... › Philosophers John Dewey Biography, Philosophy. Pragmatism
7. https://pgsd.binus.ac.id/2020/11/29@eñistentialism-and-its-implication-to-education/PENDIDIKAN GURU SEKOLAH DASAR

8. https://cer.jhu.edu / 4 Major Educational Philosophies Perennialism Essentialism ...
9. वही
10. वही
11. Educational Philosophies Definitions and Comparison Charthttps://web.augsburg.edu › comparison_edu_philo
12. https://oer.pressbooks.pub/curriculumessentials

14

डॉ. रीतामणि वैश्य

सहयोगी प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, गौहाटी विश्वविद्यालय, गुवाहाटी, असम

सुदीर्घ 34 साल बाद 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020' इक्कीसवीं सदी के भारतवर्ष की पहली राष्ट्रीय शिक्षा नीति के रूप में सामने आयी। शिक्षा नीति देश के बच्चों की शिक्षा प्रारम्भ करने की उम्र, शिक्षा वर्षों की संख्या, पाठ्यक्रम का प्रारूप, शिक्षा का उद्देश्य आदि विषयों से संबद्ध विस्तृत दलील होती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति किसी देश के अभियान और दृष्टि (Mission and Vision) की पहचान होती है, देश के भविष्य का नक्शा होती है। स्वातंत्र्योत्तर भारत में अब तक हमारे देश को कई आयोग और नीतियाँ मिलीं। प्रत्येक शिक्षा आयोग और नीति कुछ न कुछ नयेपन के साथ आती है। पर इस बार की यह नीति व्यापक बदलाव और वादों के साथ लायी गयी है। भारतीयकरण से शिक्षा का गुणगत उन्नयन तथा इसे सर्वजन सुलभ करना इस नीति का लक्ष्य है।

भारतीय शिक्षा व्यवस्था में भारतीय तत्वों का अभाव मिलता है। इसका कारण भारत में कार्यान्वित मैकाले की शिक्षा पद्धति है। ब्रिटिश पार्लियामेन्ट के ऊपरी सदन (हाउस ऑफ लाड्र्स) के सदस्य लार्ड थोमस बैबिंगटन मैकाले द्वारा सन 1835 में भारत में भारतीय लोगों के अंग्रेजीकरण के उद्देश्य से एक शिक्षा पद्धति अपनायी गयी थी। इस पद्धति में पाठ्यक्रम कुछ इस प्रकार बनाया गया था कि यहाँ के शिक्षित युवक देखने में हिंदुस्तानी हों, पर उनके मस्तिष्क पर अंग्रेजियत हावी रहें। पश्चिमी सभ्यता एवं जीवन पद्धति के प्रति आकर्षण पैदा करने में मैकाले की शिक्षा नीति पूर्णतः सफल रही। नयी शिक्षा नीति में मैकाले की शिक्षा पद्धति का निराकरण कर सभी के लिए अपनी भाषा में शिक्षा, वंशानुगत वृत्तियों के प्रति आस्था, भारतीय

मूल्यबोध की प्रतिष्ठा आदि से भारत को विश्वगुरु के रूप में अधिष्ठित करने का भरसक प्रयास किया गया है।

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020' व्यापक संभावनाओं के साथ हमारे सामने पेश हुई है। आज की दुनिया बड़ी तेजी से आगे बढ़ती जा रही है और उस तेजी को पकड़ने के लिए भारत को प्रस्तुत करने की दिशा में नयी शिक्षा नीति सर्वाधिक प्रभावी पहल है। शिक्षा व्यवस्था किसी देश के विकास का मूलभूत आधार होती है, भविष्य की नींव होती है। जैसे गाड़ी के इंजन पर उसकी गति निर्भर करती है, उसी तरह देश की शिक्षा व्यवस्था पर उसकी प्रगति निर्भर होती है।

नयी शिक्षा नीति में शिक्षा को भारतीयकरण करने की पहल की गयी है। इस नीति के निर्माण में प्राचीन भारतीय उपादानों का भरपूर प्रयोग किया गया है। नीति में प्राचीन भारतीय ज्ञान, प्रज्ञा, सत्य की परंपरा को आधार बनाने की बात की गयी है। इसी संदर्भ में नीति के 'परिचय' में कहा गया है– 'प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में यह नीति तैयार की गयी है। ज्ञान, प्रज्ञा और सत्य की खोज को भारतीय विचार परंपरा और दर्शन में सदा सर्वोच्च मानवीय लक्ष्य माना जाता है। प्राचीन भारत में शिक्षा का लक्ष्य सांसारिक जीवन अथवा स्कूल के बाद के जीवन की तैयारी के रूप में ज्ञान अर्जन नहीं बल्कि पूर्ण आत्म–ज्ञान और मुक्ति के रूप में माना गया है। तक्षशिला, नालंदा, विक्रमशिला और वल्लभी जैसे प्राचीन भारत के विश्व–स्तरीय संस्थानों ने अध्ययन के विविध क्षेत्रों में शिक्षण और शोध के ऊंचे प्रतिमान स्थापित किये थे और विभिन्न पृष्ठभूमि और देशों से आनेवाले विद्यार्थियों और विद्वानों को लाभान्वित किया था। इसी शिक्षा व्यवस्था ने चरक, सुश्रुत, आर्यभट, वराहमिहिर, भास्कराचार्य, चाणक्य, चक्रपाणि दत्ता, माधव, पाणिनी, पतंजलि, नागार्जुन, गौतम, पिंगला, शंकरदेव, मैत्रेयी, गार्गी और थिरुवल्लुवर जैसे अनेकों महान विद्वानों को जन्म दिया। इन विद्वानों ने वैश्विक स्तर पर ज्ञान के विविध क्षेत्रों, जैसे गणित, खगोल विज्ञान, धातु विज्ञान, चिकित्सा विज्ञान और शल्य चिकित्सा, सिविल इंजीनियरिंग, भवन निर्माण, नौकायान–निर्माण और दिशा ज्ञान, योग, ललित कला, शतरंज इत्यादि में प्रामाणिक रूप से मौलिक योगदान किये। भारतीय संस्कृति और दर्शन का विश्व में बड़ा प्रभाव रहा। वैश्विक महत्व की समृद्ध विरासत को आनेवाली पीढ़ियों के लिए न सिर्फ सहेज कर संरक्षित रखने की जरूरत है बल्कि हमारी शिक्षा व्यवस्था द्वारा उस पर शोध कार्य होने चाहिए, उसे और समृद्ध किया जाना चाहिए और नये–नये उपयोग भी सोचे जाने चाहिए।'

नयी शिक्षा नीति में की इस घोषणा में यह बात स्पष्ट हो जाती है कि यह नीति प्राचीन मूल्यों पर प्रतिष्ठित है और नीति में प्राचीन भारतीय शिक्षा के पुनरुत्थान और कार्यान्वयन पर महत्व दिया गया है। प्राचीन काल में भारत ज्ञान के विविध क्षेत्रों का महाभंडार हुआ करता था, वह विश्वगुरु हुआ करता था। भारत पर निरंतर हुए आक्रमणों ने उसके ज्ञान, गरिमा छीन लिये। आक्रांताओं को भारत पर अधिकार जमाये रखने के लिए भारतीय शिक्षा व्यवस्था की कमर तोड़ना जरूरी था। इसी का परिणाम है कि उच्च स्तरीय संस्थान नष्ट कर दिये गये, पुस्तकालय जलाये गये, संपदा लूट ली गई और आक्रांताओं के सुविधानुसार शिक्षा व्यवस्था की नींव डाली गयी और उसका कार्यान्वयन किया गया। समय बीतता गया, लोग गुजरते गये, घटनाएँ कुछ भूली गयीं, कुछ इतिहास के पन्नों में सही-गलत तरीकों से लिखी गयीं। भारत को विश्वगुरु के स्थान से उतारा गया और उसे दूसरे देशों पर निर्भर करने की नौबत आ गयी।

नयी शिक्षा नीति में प्राचीन भारतीय उपादानों का संधान कर युग-सापेक्ष पुन:प्रयोग की योजना बनायी गयी है। हमारे महान चिंतकों के ज्ञान, दर्शन, सृष्टि अब हमारी शिक्षा के अंग बनाये जायेंगे। जीवन के आवश्यक विषयों को शिक्षा के अंग के रूप में ग्रहण करने की योजना की गयी है। समग्र और बहु-विषयक शिक्षा की प्रेरणा से विद्यार्थियों की बौद्धिक, सौंदर्यात्मक, सामाजिक, शारीरिक, भावात्मक तथा नैतिक क्षमताओं का सामग्रिक विकास की संभावना राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में मिलती है। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020' शिक्षा के भारतीयकरण करने के उद्देश्य से कई उपाय सुझाये गये हैं, जो पाठ्यक्रम बनाने के आधारभूत बिन्दु भी हैं। इनमें से भाषा विषयक पाठ्यक्रम के लिए निम्नलिखित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है, जो हिन्दी के पाठ्यक्रम के लिए भी लागू होते हैं -

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020' के 4.6 बिन्दु में कहा गया है- 'सभी चरणों में, प्रायोगिक आधारित अधिगम को अपनाया जाएगा, जिसमें अन्य चीजों के अलावा स्वयं करने सीखने और प्रत्येक विषय में कला और खेल को एकीकृत किया जाएगा, और कहानी-आधारित शिक्षण-शास्त्र को प्रत्येक विषय में एक मानक शिक्षण-शास्त्र के तौर पर देखा जाएगा।' 4.15 बिन्दु में कहा है- 'दुनिया भर के कई विकसित देशों में यह देखने को मिलता है कि अपनी भाषा, संस्कृति और परम्पराओं में शिक्षित होना कोई बाधा नहीं है, बल्कि वास्तव में शैक्षिक, सामाजिक और तकनीकी प्रगति के लिए इसका बहुत बड़ा लाभ भी होता है।'

4.27 में है– "भारत का ज्ञान" में आधुनिक भारत और उसकी सफलताओं और चुनौतियों के प्रति प्राचीन भारत का ज्ञान और उसका योगदान शामिल होगा, और शिक्षा, स्वास्थ्य, पर्यावरण आदि के संबंध में भारत की भविष्य की आकांक्षाओं की स्पष्ट भावना शामिल होगी।'

4.29 में है– 'फाउंडेशनल स्तर से शुरू करके बाकी सभी स्तरों तक, पाठ्चर्या और शिक्षण–शास्त्र को एक मजबूत भारतीय और स्थानीय संदर्भ देने की दृष्टि से पुनर्गठित किया जाएगा। इसके अंतर्गत संस्कृति, परम्पराएँ, विरासत, रीति–रिवाज, भाषा, दर्शन, भूगोल, प्राचीन और समकालीन ज्ञान, सामाजिक और वैज्ञानिक आवश्यकताएँ, सीखने के स्वदेशी और पारंपरिक तरीके आदि सभी पक्ष शामिल होंगे, जिससे शिक्षा यथासंभव रूप से हमारे छात्रों के लिए अधिकतम भरोसेमंद, प्रासंगिक, रोचक और प्रभावी बने।'

9.1.3 बिन्दु में कहा गया है, 'सामाजिक स्तर पर, उच्चतर शिक्षा का उद्देश्य राष्ट्र को प्रबुद्ध, सामाजिक रूप से जागरूक, जानकार और सक्षम बनाना है जो अपने नागरिकों का उत्थान कर सके, और अपनी समस्याओं के लिए सशक्त समाधानों को ढूँढकर लागू कर सके। उच्चतर शिक्षा देश में ज्ञान निर्माण और नवाचार का आधार भी बनती है और इसके चलते राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसलिए उच्चतर शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तिगत रोजगार के अवसरों तक सृजन करना ही नहीं बल्कि अधिक जीवित और सामाजिक रूप से जुड़े हुए सहकारी समुदायों के साथ मिलकर एक अधिक खुशनुमा, सामंजस्यपूर्ण, सुसंस्कृत, उत्पादक, अभिनव, प्रगतिशील और समृद्ध राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करना है।'

शिक्षा नीति के 11.1 ग्यारहवें अध्याय के प्रथम बिन्दु में कहा गया है–'भारत में समग्र और बहु–विषयक तरीके से सीखने की एक प्राचीन परंपरा है, तक्षशिला और नालन्दा जैसे विश्वविद्यालयों से लेकर ऐसे कई व्यापक साहित्य है जो विभिन्न क्षेत्रों के विषयों के संयोजन को प्रकट करते हैं। प्राचीन भारतीय साहित्य जैसे बाणभट्ट की कादंबरी, शिक्षा को 64 कलाओं के ज्ञान के रूप में परिभाषित/वर्णित करती है:'

22.17 में है– 'शास्त्रीय, आदिवासी और लुप्तप्राय भाषाओं सहित सभी भारतीय भाषाओं का संरक्षण और बढ़ावा देने के प्रयास नये जोश के साथ किये जायेंगे।'

नीति के 22.5 में भारतीय भाषा को लेकर चिंता व्यक्त करते हुए कहा गया है– 'दुर्भाग्य से, भारतीय भाषाओं को समुचित ध्यान और देखभाल नहीं मिल पायी, जिसके तहत देश ने विगत 50 वर्षों में ही 220 भाषाओं को खो दिया। युनेस्को ने 197 भारतीय भाषाओं को 'लुप्तप्राय' घोषित किया है।'

उपर्युक्त बिन्दुओं से यह स्पष्ट है कि राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 के पाठ्यक्रम से विद्यार्थियों को भारतीय संस्कृति और सभ्यता से शिक्षित किया जाएँ। अर्थात पाठ्यक्रम में प्राचीन भारत के ज्ञान का संयोजन हों। पाठ्यक्रम में भारतीय संदर्भ के साथ-साथ स्थानीय संदर्भ भी शामिल हों, जिसके अंतर्गत संस्कृति, परंपरा, विरासत, रीति-रिवाज, भाषा, दर्शन, भूगोल, प्राचीन और समकालीन ज्ञान आदि सब शामिल हों। शिक्षा से व्यक्तिगत रोजगार के साथ-साथ खुशनुमा, सामंजस्यपूर्ण, सुसंस्कृत, उत्पादक, अभिनव, प्रगतिशील और समृद्ध राष्ट्र का निर्माण हो सकें। 64 कलाओं के अंतर्गत जीवन में आवश्यक समस्त कौशलों को ग्रहण किया जाएँ। आदिवासी और लुप्तप्राय भाषाओं का संरक्षण एवं संवर्धन हों।

पाठ्यक्रम का स्वरूप

नयी शिक्षा नीति में शिक्षा के भारतीयकरण का निर्णय लिया गया है। विद्यार्थियों को प्राचीन भारतीय ज्ञान एवं मूल्यबोध से पुष्ट करना पाठ्यक्रम का लक्ष्य होना चाहिए। पाठ्यक्रम से इस आलोक में हिन्दी पाठ्यक्रम में निम्नलिखित विषय अंतर्निहित किये जा सकते हैं-

- प्राचीन भारतीय ग्रन्थों-महाभारत, रामायण, पंचतंत्र, पुराण आदि से उन घटनाओं एवं उपघटनाओं के आधार पर निबंध, कहानी, लेख, कविता आदि का संयोजन हों, जो माता-पिता के साथ संतान का, गुरु के साथ शिष्य का, भाई और भाई का, व्यष्टि और समष्टि के एक दूसरे के प्रति श्रद्धा-भक्ति, दायित्वबोध को सबल बनाये।
- मनुष्य और मनुष्य, मनुष्य और इतर प्राणी, मनुष्य और प्रकृति के बीच सुसंबंध बनाए रखना, मानवतावाद और विश्वबंधुत्व की प्रतिष्ठा, दया, करुणा, सहानुभूति की शिक्षा की दृष्टि से पाठ्यक्रम का संयोजन हों। स्वस्थ्य, नीतिशिक्षा, मूल्यबोध, संस्कृति, नारी शिक्षा, मानसिक तनाव से मुक्ति, आत्मविश्वास को बल मिलनेवाली रचना का समावेश हों।
- वेद, गीता, आदि से प्राचीन भारतीय ज्ञान के प्रसार की व्यवस्था हों। साथ ही आधुनिक युग में विकसित ज्ञान-विज्ञान के विविध पहलुओं को जोड़ा जाएँ।
- संत एवं सूफी साहित्य को पाठ्यक्रम में उचित स्थान मिलें।

- देशभक्ति से संबन्धित गीतों एवं कविताओं का संयोजन हों। 'पुष्प की अभिलाषा' (माखनलाल चौतुर्वेदी), 'झाँसी की रानी' (सुभद्रा कुमारी चौहान) कैसी कविताओं का संयोजन हो सकता है।
- कालिदास, भवभूति, वाणभट्ट, शंकरदेव, माधवदेव, सूरदास, तुलसीदास, कबीरदास जैसे महान मनीषियों के जीवनीपरक लेखों की अंतर्भुक्ति हों।
- वैसे महान व्यक्तित्व की जीवनी का संयोजन हों, जिन्होंने अपनी वीरता से स्वदेश एवं स्वजाति की रक्षा के लिए चरम त्याग किया। लाचित बरफुकन, पृथ्वीराज चौहान, शिवाजी आदि की कथा का संयोजन किया जा सकता है।
- भारतवर्ष की स्वतन्त्रता आधुनिक भारत की सबसे बड़ी घटना है। स्वतन्त्रता के लिए अनेक देशभक्तों को जेल की हवा खानी पड़ी, जान गंवानी पड़ी। उनके द्वारा स्वतन्त्रता के लिए किये गये संघर्ष, जेल में रहते हुए अनुभव एवं उनकी दृष्टि से स्वतन्त्रता के संबंध में लिखे गये साहित्य का संयोजन हों।
- विविध क्षेत्रों में देश को प्रगति की ओर ले जानेवाले महान वैज्ञानिक, खिलाड़ी, साहित्यकार आदि व्यक्तियों पर जीवनीमूलक आलेख हों।
- भारतीय संस्कृति को उजागर करनेवाले आलेख का संयोजन हों। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध, दिनकर के 'संस्कृति के चार अध्याय' जैस ग्रन्थों से आलेख लिये जा सकते हैं।
- प्राचीन भारत की शिक्षा व्यवस्था, नालंदा, तक्षशिला आदि की गौरव–गाथा से संबन्धित जानकारियाँ दी जा सकती है।
- भारत के रजवाड़ों के इतिहास का समावेश किया जा सकता है। कश्मीर एवं पूर्वोत्तर भारत का इतिहास जोड़ा जा सकता है।
- भारत के विभिन्न समाज की लोककथा, लोकगीतों का हिन्दी अनूदित रूप भी दिये जा सकते हैं।
- 'टूटा पहिया' (धर्मवीर भारती), 'नदी के द्वीप'(अज्ञेय), जैसी कविताओं का संयोजन हों, जिससे विद्यार्थियों के मन में आत्मबल, आत्मविश्वास का संचार हो सकें।

- आदिवासी साहित्य का हिन्दी अनूदित रूपों का संयोजन आवश्यक है।
- देश के विविध राज्यों के स्थानीय लघु उद्योगों पर लेख दिये जा सकते हैं। जैसे- शुवालकुछि का रेशम उद्योग, सर्थेबारी का काँच और पीतल के वर्तन का उद्योग आदि पर की गयी रचना।
- भारत के विविध स्थलों के यात्रावृत्त, पर्यटन प्रसंग आदि पर रचना दी जा सकती है।
- विभिन्न क्षेत्रों में लिखित हिन्दी साहित्य का संयोजन किया जा सकता है।
- 64 कलाओं में से कुछ कलाओं पर आधारित लेख हों।
- भाषा के साथ तकनीक को जोड़ा जाएँ।
- शैक्षिक भ्रमण पाठ्यक्रम का अंग हों।

उपर्युक्त बिन्दु भाषा के सभी पाठ्यक्रम का आधार हैं। 'राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020' में इन्हीं विचारों को केंद्र में रखकर प्राथमिक स्तर से लेकर उच्च शिक्षा तक पाठ्यक्रम बनाने का स्पष्ट संकेत किया है। पाठ्यक्रम के निर्माण में इन बातों पर ध्यान देना आवश्यक है–

- अध्याय अनेकता की अपेक्षा एकता पर केन्द्रित हों। पाठ्यक्रम के पढ़ने के उपरांत विद्यार्थियों के मन में 'हम सब श्रेष्ठ भारत की सन्तानें हैं' ऐसी भावना का उद्रेक होना चाहिए।
- हर एक राज्य से किसी न किसी विषय को पाठ्यक्रम में अपनाना चाहिए। पाठ्यक्रम में कश्मीर से कन्याकुमारी तक और अरुणाचल से गुजरात तक वाणी मिलनी चाहिए। किसी कक्षा में मणिपुर का लोकटाक झील से संबन्धित लेख हो, तो किसी में उत्तर प्रदेश की राम जन्मभूमि से संबन्धित रचना, तो किसी में असम में स्थित दुनिया का सबसे बड़ा नदी द्वीप माजुली पर कोई आलेख। कोई भी राज्य छूटने नहीं चाहिए। इस तरह पूरे भारतवर्ष को भावात्मक एकता से जोड़ना होगा।
- जीवन एवं समाज के विविध पक्षों को साहित्य से जोड़ना है। इसके लिए आधुनिक युग में विकसित गद्य की विविध विधाओं में साहित्य का निर्माण करना होगा। जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, साक्षात्कार, डायरी, पत्र आदि साहित्य के विविध रूपों में आवश्यक विषयों से संबन्धित रचना की जानी चाहिए।

- विविध युग की विविधमुखी रचना का संयोजन न हों।
- एक कक्षा की पुस्तक में एक ही युग की एक ही विधा में लिखित एक जैसी कई रचना न हों।
- पाठ्यक्रम में सामंजस्य रखा जाए।
- विषयों को जोड़ने के क्रम में इस बात पर विशेष ध्यान रखा जाए कि साहित्य की आत्मा सुरक्षित रहे। कहने का तात्पर्य यह कि साहित्य साहित्य सा लगे, समाज विज्ञान या इतिहास सा न लगे। विविध साहित्यिक विधाओं के कलात्मक साहित्य का संयोजन एवं नये अध्यायों का लेखन कलात्मकता के साथ करना होगा।

उच्चतर माध्यमिक पाठ्यक्रम का नमूना

पुस्तक 1: आरोह

गद्य भाग

1. कहानी– जैसे, प्रेमचंद की 'बूढ़ी काकी'/विश्वंभरनाथ शर्मा 'कौशिक' की ताई जैसी कोई कहानी
2. समकालीन कहानी–किसी भी समकालीन कहानीकार की कोई कहानी
3. भारतीय भाषा से अनूदित कहानी–किसी भी भारतीय भाषा से अनूदित कोई कहानी। जनजातीय भाषा में लिखित कहानी का अनूदित रूप भी लिया जा सकता है। असम के बड़ो, राभा आदि आठ जनजातीय भाषाओं की सोलह कहानियों का हिन्दी अनूदित रूप 'असम की जनजातियों का लोकपक्ष एवं कहानियाँ' शीर्षक ग्रंथ में शीघ्र ही वाणी प्रकाशन से प्रकाशित होनेवाला है। इनके अलावा भी कई ऐसी कहानियाँ होंगी। ऐसी किसी कहानी ली जा सकती है।
4. रिपोर्ताज/संस्मरण जैसी रचना– जैसे रांगेय राघव का 'संपत्ति'/ महादेवी वर्मा का 'सुंघनी साहू' जैसी रचना हो सकती है।
5. संस्कृतिमूलक लेख– जैसे हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध 'कुटज', 'देवदारु' जैसा कोई निबंध
6. प्राचीन भारत के वीर/स्वतन्त्रता सैनिक/शहीद/किसी विशिष्ट भारतीय की जीवनी– जैसे शिवाजी, राणा प्रताप, लाचित बरफुकन की जीवनी दी जा सकती है।

7. स्वतन्त्रता सेनानी की डायरी, पत्र या जेलयात्रा में लिखी गयी रचना का संयोजन किया जाना चाहिए। बाल गंगाधर तिलक, अरविंद घोष, सावरकर के साहित्य का संयोजन हों।
8. देश की धरोहरों पर आलेख–जैसे– कामाख्या मंदिर/बद्रीनाथ/ केदारनाथ मंदिर, लोकटाक या डाल झील/माजुली पर कोई रचना
9. क्षेत्रीय संपदाओं से संबन्धित लेख– जैसे शुवालकुचि का रेशम शिल्प/ सर्थेबारी के काँचख्रपीतल के वर्तन निर्माण का उद्योग आदि संबन्धित कोई रचना
10. लोककथा– भारत के किसी समुदाय में प्रचलित लोककथा, लोकविश्वास या उन पर आधारित आलेख
11. भारत के प्रमुख पर्यटन स्थलों से संबन्धित रचना ख्र कश्मीर/ अरुणाचल का तवांग/ कुल्लू–मनाली से संबन्धित रचना
12. हिन्दी और तकनीक विषय पर कोई लेख हों।

पद्य भाग

1. प्राचीन कविता–भक्तिकाल के संत एवं सूफी रचना– कबीर और / जायसी की कविता
2. प्राचीन कविता–भक्तिकाल की कृष्णभक्ति और रामभक्ति से संबन्धित रचना– सूर और /तुलसी की कविता
3. भारतेन्दु काल की कविता–जैसे 'निज भाषा उन्नति अहै'
4. द्विवेदी युग की कविता– जैसे, मैथिलीशरण गुप्त की 'जीवन की ही जय हो' या ऐसी कोई कविता
5. छायावाद युग की कविता– निराला की 'राम की शक्ति पूजा' कविता (या कवितांश) जैसी रचना
6. छायावादोत्तर काल की कविता– जैसे अज्ञेय की 'नदी के द्वीप'/ धर्मवीर भारती की कविता 'टूटा पहिया' जैसी कविता
7. समकालीन कविता ख्रसमकालीन किसी कवि की कविता
8. किसी भारतीय भाषा से अनूदित कविता–जैसे असमिया कवयित्री नलिनीबाला देवी की कविता 'जनमभूमि' का हिन्दी अनूदित रूप

9. आदिवासी कवियों की मौलिक या अनूदित कविता, जहाँ आदिवासी समाज की संस्कृति प्रकाशित हों। मौलिक में से जैसे तारो सिंदिक के 'अक्षरों की विनती' से कोई कविता 2, जमुना बीनी तादर के 'जब आदिवासी गाता है' की कोई कविता
10. मौखिक साहित्य का संकलन कर उसका मूल हिन्दी रूप या अनूदित रूप रखा जा सकता है। जैसे– डॉ. मिलन रानी जमातिया और प्रो. जय कौशल द्वारा किया गया त्रिपुरा की ककबरक भाषा के लोकगीत का अनूदित रूप3 से कोई गीत लिया जा सकता है। ये गीत 'त्रिपुरा के गॉरिया लोकगीत' में संकलित हैं।

पुस्तक 2: वितान

1. संस्कृतिमूलक आलेख – जैसे, दिनकर के 'संस्कृति के चार अध्याय' से कोई आलेख
2. संस्कारमुखी रचना – जैसे गौरी दत्त की 'देवरानी जेठानी की कहानी' जैसी रचना
3. यात्रावृत्त/ किसी विशिष्ट व्यक्ति की डायरी
4. प्राचीन भारत का इतिहास–जैसे–पूर्वोत्तर भारत या कश्मीर का इतिहास/राम मंदिर का इतिहास

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में भारतीय भाषा एवं संस्कृति के संबन्ध में क्रांतिकारी बदलाव लाने की उद्घोषणा हुई है। प्राचीन गुरुकुल की शिक्षा पद्धति में विद्यार्थी गुरुगृह में रहकर जीवन के समस्त प्रयोजनों का ज्ञान सीखता था, जो बाद में उसके व्यावहारिक जीवन में काम आता था। यह शिक्षा नीति कला को जीवन के लिए उपादेय बनाने की योजना के साथ आयी है। कला कला के लिए होते हुए भी कला निर्विवाद जीवन के लिए भी है। कला जीवन के आवश्यक व्यावहारिक ज्ञान को व्यवस्थित तरीके से शिक्षा के अन्य महत्वपूर्ण माने जानेवाले विषयों की तरह सम मर्यादा देने का प्रबंध राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 में किया गया है। इससे मानव व्यक्तित्व के विकास की संभावना की दिशाएँ बढ़ेंगी। प्राचीन और पुरातन मूल्यबोध से बिछुड़ने से हमारा अवरोहण होता रहा। अब हमें हमारे निजी प्राचीन और सनातन उपदानों को, मूल्यों को जीवन और जगत के लिए फिर से अपनाने का अवसर मिला है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 ने भारतवर्ष के पुनरुत्थान का मार्ग खोला है।

कहते हैं इतिहास की पुनरावृत्ति होती है। नयी शिक्षा नीति के सफल कार्यान्वयन से भारत के प्राचीन गौरवशाली इतिहास की परंपरा के हम द्रष्टा ही नहीं, भोक्ता भी बनेंगे। यही नहीं, आनेवाला कल हमारे देश के आरोहण का काल सिद्ध होगा।

परिशिष्ट

1. जन्मभूमि

मूल (असमीया)- नलिनीबाला देवी

अनुवाद-रीतामणि वैश्य

खोली आँखें मैंने
तुम्हारी गोद में माँ
जनम की आदिम सुबह,
मुदूंगी फिर से आँखें
तुम्हारी गोद में माँ
जीवन की अंतिम संध्या को।
मरने के बाद भी
मिलें यहीं जगह
प्यारी ठंडी गोद में,
थकी हुई आत्मा
अंत में रुक कर
विश्राम लेगी तुम्हारी छाया में।

पंछी हो गगन की
छाती पर उड़ूँगी
घोंसला बनाउंगी पेड़ों पर,
भोर होते ही
जगाऊँगी तुम्हें
बनैले सुमधुर गीत गाकर।

आकाश के तारे बन
देखती रह जाउंगी
हरीभरी सुंदर ज्योति

चाँदनी में घुलकर
विमान पथ पर
सारी रात करूँगी आरती।

हिमालय पर्वत के
सफेद तुंग चढ़
खिलूंगी मानस झील में,
मलय के चँवर में
पारिजात रेणु सन
पखारूंगी चरण तुम्हारे।

नदी बन धोउंगी
दोनों चरण हर दिन
माटी हो लीन हो जाउंगी छाती पर,
सुनहले मेघ बन
हँसी झलकायूंगी
उदास दोनों होठों पर।

तुम्हारी ये धूल मिट्टी
तुम्हारे आकाश वायु
माँ मेरी स्वर्ग का वास,
तुम मेरे मर्त्य की
पुण्य मुक्ति की भूमि
तुम मेरी शांति का प्रभास।

ओ मेरे प्यारे देश
तुम्हारी गरीब झोपड़ी
रचते हो शांति का स्वर्ग,
कहाँ मिलेगी यह प्रीति
सरल प्राणों की भाषा
सेवा का महिमामय त्याग।

गरीब की टूटी झोपड़ी
एक-एक तीर्थ वहाँ
एक-एक पुण्य का आश्रम,
मरने के बाद आकर
गरीब देश में मेरे
लूँ मैं फिर से जनम।

2. अतिथि

-तारो सिंदिक

वे आए दूर कहीं पश्चिम से
हमारे घर अतिथि बनकर
किया उनका स्वागत प्रेम से
एक संस्कारी इंसान बनकर
खिलाए-पिलाये सिद्दत से
उन्हें सारे जल और आहार
पर जान न पाये हम बेखबर
देख न पाये हम इधर-उधर
उनकी थी मंशा ही कुछ और
अतिथि नहीं, थे वे कुछ और।

आसरा उन्हें एकबार जो मिला
फिर कभी न वहाँ से वो हिला
हमने न छोड़ा सेवा और सत्कार
करते गये मेहमाननवाजी बारंबार
देख भोला और नादान समझकर
उसने किया पीछे से नाजुक प्रहार
हुआ न हमारे तन को कुछ असर
पर रख दी हमारी बुद्धि कुचलकर

पश्चिम के ये अभियात यायावर
आये प्रभु के पवित्र संदेश लेकर

सुनाये पहले वो भीतर–भीतर
फिर कदम बढ़ाए घर के बाहर
जड़ बना ली उसने इस कदर
थमा न रुका उनका द्रुत प्रसार
अबोध जनों के हाथ थामकर
भौतिक जरूरतों के रिक्त स्थान भरकर
लाँघ गये हर पहाड़ और अंचल
तैयार किये अनुयायी अटल।

आये जब से वो हमारे घर
संस्कृति हुई हमारी बेघर
खाये ठोकर दर–ब–दर
गलियाँ–चौबारे हुए शर्मसार
अपनी पहचान नित्य खोकर
बन गये शरणार्थी अपने ही घर
हुआ इसका अब ऐसा असर
छोड़ा न उसने कोई कसर
युवा पीढ़ी हो या हो कोई उमर
साक्षर चाहे हो निरक्षर

चले गये जो एक बार
आ न पाये फिर इस पार
नये धर्म के पन्नों में बंधकर
निज संस्कृति की बलि चढ़ाकर
चलते हैं अब वे इतराकर
पूर्व स्रोत को भूल–भुलाकर
अंधा कानून कुछ न देखे
कुछ न बोले गूंगी सरकार
नवागंतुकों से कैसी ये हार?
पंगु हो गये सब आचार–विचार?

रिश्तों की प्राचीन दीवारों पर
खिंच गयी है रेखाओं में दरार
अब आया है मन में एक डर
भविष्य की धुंधली फलक पर
ढूँढेंगे कहाँ हम पूर्व-धरोहर?

3. वात्सल्य गीत

मूल– कॉकबरक भाषा में लिखित त्रिपुरा का गॉरिया लोकगीत

संकलन, अनुवाद तथा सम्पादन

डॉ. मिलन रानी जमातिया और प्रो. जय कौशल
भोर होते ही चारों ओर
पक्षी चहचहाने लगे
धरती को सुंदर बनाते हुए
गीत गा-गाकर
सबको जगाने लगे
भोर होते ही चारों ओर
पक्षी चहचहाने लगे।

जंगल की कलियाँ फूल बनने लगी
ऐसे में तुम्हारी माँ
तुमको जगा रही है
संगी-साथी जगा रहे हैं
माँ तुम्हारा नाम लेकर
बुला रही है
अब तो उठ जाओ
ओ नरसिंह!

चारों दिशाओं में
लाल-हरे फूलों की

खुशबू फैल गयी है
पहाड़-पर्वत, नदी-नाले
पशु-पक्षी, बाघ-हाथी
तुम्हारा नाम लेकर
जगा रहे हैं
अब तो उठ जाओ
ओ नरसिंह!

जल्दी उठकर
मुँह-हाथ धो लो
देखो सूर्य की लालिमा-हरीतिमा
चारों ओर फैल गयी है
अब तो उठ जाओ
ओ नरसिंह!

भोर होते ही चारों ओर
पक्षी चहचहाने लगे
धरती को सुंदर बनाते हुए
गीत गा-गाकर
सबको जगाने लगे
भोर होते ही चारों ओर
पक्षी चहचहाने लगे।

15

प्रोफेसर महेंद्रपाल शर्मा

जामिया मिलिया इस्लामिया, दिल्ली

पाठ्यक्रम को लेकर मेरा अनुभव यह रहा कि एक किताब पढ़ी थी 18वीं शताब्दी की उसमें लिखा था ''भारतीय लोग इतने गरीब हैं कि उनके पास चम्मच भी नहीं वो हाथ से खाना खाया करते हैं। तो एक प्रोफेसर ने पूछा डॉक्टर साहब यह बात समझ नहीं आई कि भारत ऐसा है''। यह बात होगी कोई 2010 के आसपास, मैंने कहा कि यदि ''भारत ऐसा है तो दक्षिण कोरिया भारत में कंपनियाँ क्यों जमाए हुए हैं। फिर मैंने उससे कहा कि एक बातऔर बताओ जितने कोरियन भारत में हैं उसके 10% कोरियन भी कोरिया में नहीं हैं''। आप इससे अनुमान लगा लो भारत में स्थिति क्या है? दूसरा यह कि 2000 में जब विश्व मंदी आई थी तो विश्व डूब रहा था। भारत में कोरियन कंपनी के आने का कारण है अपनी स्थिति को बूस्ट करना। उस दौर में भारत का कुछ नहीं बिगड़ा। इससे आप अंदाजा लगाइए कि जो मिस कंसेप्शन या फिर जानकारी का अभाव है वो भी कई बार दिक्कतें पैदा कर देता है।

मेरा अनुभव यह रहा कि जब कभी इस तरह की बात की जाती है कि भारतीय संस्कृति के महत्त्व की कोई रचना या फिर महाभारत, रामायण, गीता पाठ्यक्रम में लगाना या भक्तिकाल के संदर्भ में किसी विशेष कवि के बारे में बात की जाती है तो विपरीत शक्तियां तुरंत सक्रिय हो जाती हैं। यानी मैं यदि तुलसीदास की तारीफ करूं तो मैं प्रतिक्रियावादी, यदि मैं कबीर की करूं तो मैं प्रगतिशील। हालांकि दोनों हमारे लिए अच्छे कवि हैं पाठ्यक्रम में भी हैं। तो इतना संवेदनशील बन गया है पाठ्यक्रम का मामला कि उसे तुरंत राजनीति से जोड़ दिया जाता है। होना यह चाहिए कि भारत का विद्यार्थी यानि मैं स्वयं, आप सभी जिस तरीके से पढ़ें हैं गणित में बहुत तेज हुआ करते थे। विश्व में अब हम गैजेट्स का इस्तेमाल करते हैं। मैं तो

स्वयं उत्तर प्रदेश का रहने वाला हूं UP में विद्यार्थी मैथ में बहुत तेज हुआ करते थे, मैं दक्षिण क्षेत्र की बात नहीं कर रहा हूं। पांच साल पहले चीन और कोरिया के विद्यार्थी सबसे आगे आए गणित में और भारतीय विद्यार्थी उसमें पिछड़ गए। ऐसा क्या हुआ इन चीजों को सभी संस्थाओं को, परंपराओं को व्यवस्थित भ्रष्ट करते जाना एक तरीका बन गया है। एक प्रो. ने किताब लिखी Indian feministic litreture तो उन्होंने उसमें एक चौप्टर था जिसमें यह तथ्य स्थापित किया कि भारतेंदु हरिश्चंद्र एक सांप्रदायिक लेखक थे। उन्होंने इसीलिए महाराणा प्रताप पर लिखा, शिवाजी पर लिखा बड़े आश्चर्य की बात है। मैंने सवाल किया कि प्रोफेसर साहब उन्होंने तो अरबी, फारसी में भी लिखा है तो उनका जवाब था कि वो अलग तरह का है। यानि की इस तरह से शिवाजी की बात करें, चेतक का जिक्र करे, महाराणा का जिक्र करे वो अलग बात है कि आप कंक्लूजन कैसे लेते हैं लेकिन नाम का जिक्र करना सांप्रदायिक कहलाता है? तो इस तरह की स्थिति का सामना करने के लिए मजबूत दृष्टि की आवश्यकता है। पाठ्यक्रम तो महत्त्वपूर्ण है लेकिन उससे भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण है हम जम०ज क्या पढ़ा रहें हैं यानि भक्तिकाल में सब भक्तिकालीन हैं लेकिन हम भक्तिकाल में पढ़ाएंगे क्या? हमें वो रचनाएं चुननी होगीं जिन रचनाओं से हमारा सर्वांगीण विकास हो।

मैंने फिल्म देखी थी उसमें कुछ लड़के एक लड़के को परेशान करते हैं। तो वह एक्सपर्ट के पास जाता है। वह कहता है मुझे जूडो सिखा दीजिए। वो विशेषज्ञ था तो उन्होंने कहा आओ आप ईंट से दीवार बनाना शुरू कर दो, उसने ईंटों से दीवार बनाई फिर उससे कहा गया इस पर तुम प्लास्टर कर दो उसने सीमेंट कर दिया। अगली बार उससे कहा गया कि तुम इस पर पेंट कर दो तो उसने पेंट कर दिया। अब वो अंदर से परेशान कि मैं तो आया था जूडो कराटे सीखने और इन्होंने दीवार बनाने का काम दे दिया। तब उसने कहा अब उल्टे हाथ से पेंट कर दो अंत में वो लड़का परेशान हो गया तब वह कहता है कि गुरुजी मैं आपसे कुछ नहीं सीखना चाहता आप मुझे छोड़ दीजिए। मैं कहीं ओर जा कर सीख लूंगा तो उन्होंने उसे चांटा मारा लड़के ने दोनों हाथ सामने कर लिए एक्सपर्ट ने कहा यह पहला एक्शन था इससे तुम्हारे हाथ मजबूत हुए।

शिक्षा जो है हमारे नियमित कार्य व्यापार से हमारे आचरण में झलकती है। मुख्य बात यह है कि भारत में जो स्थिति है भारतीय संस्कृति है, भारतीय परंपरा है उसे निरंतर पिछड़ा दिखाने की कोशिश की जा रही है। उसे बचाने के लिए हमें

विद्यार्थियों को ऐसा text पढ़ाना है जो लंबे समय तक याद रहे। बचपन में मुझे एक कविता पढ़ाई गई थी वो मुझे आज भी याद है। तो जम॰ज क्या चुनना है वो ज्यादा महत्वपूर्ण है जो स्ट्रक्चर है वो तो लगभग वैसा ही रहता है। हमें पढ़ाना क्या है वो महत्वपूर्ण है अगर तुलसीदास पढ़ाना है तो तुलसीदास की कौन–सी रचना पढ़ानी है, ये हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है। निराला पढ़ाना है तो निराला का क्या पढ़ाना है ये महत्त्वपूर्ण है। उन्होंने ''वर दे वीणा वादिनी वर दे'' भी लिखा है और दूसरी कविताएं भी लिखीं हैं। इसलिए हमारा चुनाव सही दिशा में होना चाहिए। हमें ऐसी रचनाओं का चुनाव करना है जिससे विद्यार्थियों को भारतीय संस्कृति के बारे में जानकारी हो। उनमें गौरव का भाव तो जागे।

दूसरी बात यह कि वैश्विक स्तर पर हिंदी को बढ़ावा दिया जा रहा है क्योंकि भारत से व्यापार करना है लेकिन फिर भी भाषा को अंतरराष्ट्रीय बढ़ावा तो मिल ही रहा है। जो अच्छी बात है। रामचरित मानस, महाभारत, रामायण कई विश्वविद्यालयों में पढ़ाई जाती है। जब हम भारत में पैदा हुए हैं तो हमें अपने विद्यार्थियों को शिक्षा के माध्यम से इस लायक बनाना चाहिए कि उनकी सोच मजबूत हो और वो कुछ सीख कर जाए।

आपको याद होगा अरसे पहले क्रिकेट में हमारे खिलाड़ी बाहर विदेशी धरती पर जा कर काउंट्री क्रिकेट खेला करते थे लेकिन आज स्थिति बदली है। आज दुनिया भर के क्रिकेटर बिकने को तैयार हैं। माना IPL पैसा देता है लेकिन IPL पैसा कहां से लाता है। ये पैसा भारत ही तो दे रहा है।

जो Text हम बनाएंगे हमें उन सभी बातों को ध्यान में रखना होगा जो हमें गर्व करने का मौका दे। कमजोर न बनाए बल्कि मजबूती प्रदान करें। यह भी देखना होगा कि किसी भाषा का Text लगाने से पहले किसी अन्य भाषा की उपेक्षा तो नहीं हो रही, उस पर अन्य भाषा थोपी तो नहीं जा रही है।

16

प्रो. नंद किशोर पाण्डेय

राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के संदर्भ में हम हिंदी को केंद्र में रखकर चर्चा करें तो बहुत सी ऐसी बातें हैं जिनपर हमें बात करनी चाहिए। विशेष रूप से कक्षा 11 वीं और 12 वीं में भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिंदी को कैसे पढ़ा और पढ़ाया जाए? पाठ्यक्रम एक कला है। पूरे के पूरे ज्ञान को किसी एक कक्षा में हम प्रतिस्थापित नहीं कर सकते। ज्ञान की एक लंबी परंपरा है और कुछ भी हम सोचते और समझते हैं वह सब कुछ किसी कक्षा विशेष के पाठ्यक्रम का हिस्सा बनें यह विचार प्रासंगिक नहीं हो सकता। कक्षा 1 से हिंदी की पढ़ाई होती है। कक्षा 1 से लेकर एम. फिल और रिसर्च तक के कोर्स के पाठ्यक्रम में पाठयक्रमों के संदर्भ में जितना चिंतन और मनन होता है जितने विषय अपेक्षित होते हैं वे सारे विषय कक्षा 11 वीं और 12 वीं के पाठ्यक्रम में आरोपित नहीं कर सकते।

विषय का केंद्र चिंतन है। आप कक्षा 11 वीं और 12 वीं की पुस्तकें देखेंगे जो वस्तुत 2005, 2006 और 2007 में प्रकाशित हुई थी, केवल तीन-चार प्रकार की पुस्तकें दिखाई पड़ेंगी- आरोही, वितांत और अंतराल। कुछ और पुस्तकें भी हैं जिनको हम पढ़ाते हैं। प्रश्न यह है कि क्या वे भारतीय ज्ञान परंपरा को समाहित करतीं हैं। तब भी पाठ्यक्रम नियमित रूप से परिवर्तित होते रहने चाहिए। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग का आग्रह है कि 3 वर्ष पर विश्वविद्यालयों में पाठ्यक्रम परिवर्तित हो। NCERT का पाठ्यक्रम 17 वर्ष बीत गए परिवर्तित नहीं हुआ। 17 वर्ष बाद हम चर्चा करने के लिए उपस्थित हैं। यह आवश्यक नहीं है कि 2022 में ये पाठ्यक्रम तैयार हो कर लागू हो जाए। हम ये नहीं कह सकते कि बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण है लेकिन विचारणीय अवश्य है कि किसी पाठ्यक्रम पर जो वस्तुत

किसी भी विषय के लिए उच्च शिक्षा की तैयारी की आधार भूमि है वह पाठ्यक्रम 17 वर्षों तक अनवरत चलता रहता है।

बहुत ठीक और व्यवस्थित होने पर भी एक पूरी की पूरी पीढ़ी निकल गई। कहानी भी पढ़ानी हो, कविता भी पढ़ानी हो तो क्या किसी कवि विशेष को किसी कथाकार को, उपन्यासकार को एक कक्षा में हम नियमित रूप से 15-17-20 वर्षों तक पढ़ा सकते हैं, क्या पढ़ाना उचित रहेगा?

कक्षा 11 वीं, 12 वीं की पुस्तक पर हम ज्ञान परंपरा के संदर्भ में चर्चा करेंगे। ज्ञान परंपरा प्रत्येक पुस्तक में होती है लेकिन क्या वो भारतीय ज्ञान परंपरा है। जब हम भारतीय ज्ञान परंपरा की बात करेंगे तो बहुत सारे लोग कहेंगे कि जो कुछ भी भारत में आया उसे स्वीकार करते हुए हम बात को कहें। लेकिन स्वीकार करने के लिए भारत में प्राचीन काल से बहुत कुछ है और प्राचीन काल में जो भी है उसको उपस्थित करने की विधि, तकनीक या इच्छा कोई पुरातन पंथी होने की इच्छा नहीं है। उस पुरातनता के भीतर नव्यता का जो आग्रह है जो संस्करण है वह नव्यता भारत को स्थिर बनाए हुए है, वह हमारे विचार का विषय होना चाहिए। हम कैसे उस परंपरा का वहन करते हैं। उस परंपरा को जीते हैं जो आज हम दिखलाई पड़ रहे हैं उसका आधार क्या है?

भक्ति पद्धति में दो पद्धतियां ईश्वर की शरणागति में दिखलाई पड़ती हैं। एक तो पद्धति उस बंदरिया की जो अपने बच्चे को पेट से चिपकाए हुए, चिपकाए हुए नहीं बल्कि बंदरिया का बच्चा अपनी माँ के पेट को पकड़ कर चिपका हुआ है। बंदरिया उछलती कूदती रहती है। दूसरी पद्धति है शेरनी की। शेरनी अपने बच्चे को मुँह में पकड़कर दौड़ती रहती है।

हमारे ऋषियों की परंपरा ने अपने बच्चे को किस प्रकार खड़ा किया है। ये ध्यान में आता है कि पूरा भारत एक परंपरा के जीवित स्वरूप के रूप में पूरे देश में और इस धरती पर उपस्थित है। वह शेरनी के बच्चे की तरह है जो शेरनी मुँह खोल कर अपने बच्चे को पकड़े हुए है। उसी ऊर्जा और प्रेरणा के साथ वह अपना उछल कूद करती है पूरी उस भाव और भंगिमा के साथ जीती है। इसलिए हजारों वर्षों के संघर्षों में इतिहास के दबाव में हम उस चैतन्य के साथ यहाँ खड़े हैं तो वह भाव भूमि जहाँ से प्रकट होती है वह विचार परंपरा किस तरह से रचनात्मक रूप में साहित्य बनकर प्रस्तुत हुआ उसके लिए हमें किसी शोध की आवश्यकता नहीं है।

यह शोध व अनुसंधान हजारों वर्ष पहले कभी महाभारत में, कभी रामायण में और कुछ पाठ उपनिषदों के, पुराणों में साहित्य के रूप में हमको मिलते हैं। उस साहित्यिक रूप में प्राप्त ज्ञान को आधुनिक संदर्भों में यदि किन्हीं लोगों ने किसी रूप में प्रस्तुत किया है तो वह प्रस्तुति अंतराल पाठ्यक्रम का हिस्सा बन सकती है। आज जिस चिंता पर हम बात कर रहे हैं, वह चिंता वाल्मीकि की भी चिंता है उत्तर भी वहां है कि ऐसे व्यक्ति के विषय में लिखना चाहते हैं जो धैर्यवान, शीलवान, धर्मज्ञ, सत्यज्ञ और बलिष्ठ हो उस रूप में वाल्मीकि को श्री राम का चरित्र दिखलाई पड़ता है। उस चरित्र को लिखा जाना है। उस चरित्र के लेखन में केवल चरित्र कथन नहीं है। हम वाल्मीकि को आदिकाव्य के रूप में उपस्थित करते हैं, उसमें भी हम इतिहास के सूत्रों को ढूंढते हैं। कथा के सूत्र को ढूँढते हैं। अब पूरी की पूरी ज्ञान परंपरा हमको वाल्मीकि के अन्तर्गत दिखलाई पड़ती है।

जन की स्वीकृति और साहचर्य की बात करें तो केवल चित्रकूट में जो कुटिया का निर्माण है उस प्रसंग को पढ़िए। लक्ष्मण किस प्रकार से पंचवटी में कुटिया बनाते हैं। उस कुटिया के निर्माण की कला का जितना बेहतरीन वर्णन वाल्मीकि ने किया है कि किस प्रकार से घास को एकत्रित करना और किस प्रकार के बांस और बलियों का उपयोग करना और किस प्रकार से उसको सजाना है। इसमें राम केवल द्रष्टा के रूप में हैं, लक्ष्मण उसको निर्मित करते हैं और सीता उसमें सहयोग करती है। यह प्रसंग बतलाता है कि राजकुलों में केवल शास्त्र और शस्त्र की शिक्षा नहीं दी जाती थी। केवल यही शिक्षा दी गई होती तो लक्ष्मण इतनी शीघ्रतापूर्वक उस कुटिया का निर्माण कैसे कर पाए होते। इसका मतलब लक्ष्मण के प्रशिक्षण में झोपड़ी बनाने का प्रशिक्षण समाहित था। जब हम कौशल विकास की चर्चा करते हैं तो उस कौशल के साथ घड़ा, कुर्सी, खाट बनाने की कला से लेकर कम्प्यूटर और उसके आगे तक के समस्त प्रकार के कौशल उसमें समाहित होते हैं, जिसकी चर्चा रामायण और महाभारत के विभिन्न प्रसंगों में दिखलाई पड़ती है। कथा सूत्र में गूंथकर पिरोकर भारतीय मनीषी तमाम प्रकार की विचार सारणी को, ज्ञान परंपरा को हमारे सामने उपस्थित करता है।

श्रीकृष्ण ने युद्ध के मैदान में अर्जुन को जाग्रत करने के लिए गीता की शिक्षा दी। कर्म की शिक्षा दी, ये शिक्षा युद्ध के मैदान में युद्ध प्रारंभ होने पर दी जाती है। उसके बहुत पहले आप महाभारत को देखेंगे तो एक दिन द्रौपदी पांचों पांडवों को कर्म की शिक्षा दे रही है कि तुम पांचों योद्धा होते हुए भी बड़े विद्वान होते

हुए भी अकर्मण्य हो गए हो। पूरे द्रौपदी के व्याख्यान को सुनने के बाद उस शिक्षा को सुनने के बाद युधिष्ठिर ने पूछा कि यह ज्ञान तुमने कहाँ सीखा, जो कुछ भी कह रही हो वो कोई आकस्मिक प्रतिक्रिया है, क्रोध है या तुम चाहती हो कि हम पांचों भाई दुर्योधन से, कौरवों से लड़े या इस ज्ञान को तुमनें कहीं से अर्जित किया था। द्रौपदी कहती है कि मैं राजपुत्री हूँ। हमारे घर में विद्वानों का आना जाना होता था। एक बार एक ऋषि मेरे घर में आए थे और मेरे पिता जी से कुछ ज्ञान की बातें कर रहे थे तो खेलते हुए मैं उनके कक्ष में आई और ऋषि जो बात मेरे पिता जी को बतला रहे थे, वे बातें मुझे बहुत अच्छी लगी और मैं खेलते हुए पिता जी की गोद में जिद्द पूर्वक तब तक बैठी रही जब तक ऋषि ज्ञान चर्चा करते रहे। उस ज्ञान चर्चा में वे मेरे पिता जी को कर्म की शिक्षा दे रहे थे। वहाँ जो मैंने सीखा था अपने बाल्यावस्था में मुझे लगा कि तुम्हें इस समय बतलाने की आवश्यकता है। जो शिक्षा श्रीकृष्ण युद्ध के मैदान में अर्जुन को दे रहे हैं उस शिक्षा में से कर्म की शिक्षा पहले ही द्रौपदी पांडवों को दे चुकी थी। तात्पर्य यह है कि विद्यार्थी जीवन में क्या पढ़ रहे होते हैं किस प्रकार की ज्ञान सरणी को विकसित कर रहे होते हैं, कौन सी ज्ञान चर्या हमारे कक्षा के विद्यार्थियों में चल रही होती है उसके आधार पर भारतीय जीवन पद्धति की, भारतीय ज्ञान परंपरा केन्द्रित सोच की, विचार की हमारी पद्धति बनती है तद्नुरूप हमारा मन बनता है।

जब हम हिंदी के संदर्भ में विचार करें तो ये सारी बातें कहीं न कहीं हमारे मानस-पटल पर आनी चाहिए। हम लोगों ने आरुणि की कहानी पढ़ी थी। अब मुझे नहीं लगता कि आरुणि की कहानी चूंकि उपनिषद की कहानी है और उपनिषद तो पुरातन पंथ की बात करता है। जो लोग उपनिषद शब्द से ही दुराग्रह रखते हैं वे आरुणि की कहानी को पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं बना सकते।

सावित्री स्त्री विमर्श के केन्द्र में नहीं आती इसलिए सावित्री सत्यवान की कथा को पढ़ाना भक्त बनाना है और भक्ति बहुत ही उपेक्षित चीज है। इसलिए जिससे व्यक्ति भक्त बनता हो ऐसी कथाओं से दूर रहना हमारे विषय, हमारी सोच का विषय हो गया है। इसलिए पुराण में सब कुछ त्याज्य है। जो पुराना होकर भी नया है उसको पुराण के रूप में भारत के परंपरागत आचार्यों ने देखा उसे व्याख्यायित किया। इसलिए पुराण की कथाएं अलग-अलग संदर्भों से भी किनारे कर दी गई। उपनिषद की कथा को भी किनारे कर दिया गया।

जिन्होंने भारत को स्वतंत्रता दिलाई जिनके कारण हम स्वच्छंद भारत में साँस ले रहे हैं जिनके कारण हमारा तंत्र स्थापित हुआ उनके बारे में भी बहुत कुछ देखने को नहीं मिलता। शुरू के स्वतंत्रता सेनानियों में महात्मा गांधी, उसके पहले गोपाल कृष्ण गोखले, बाल गंगाधर तिलक और पंडित मदन मोहन मालवीय आते हैं। पंडित मदन मोहन मालवीय के विचार के केन्द्र में गीता थी। गांधी जी गीता के बिना सोच नहीं सकते थे। बाल गंगाधर तिलक ने श्गीता रहस्यश लिखा। गांधी जी एक बार अपने विद्यालय गए और विद्यार्थियों से पूछा कि कितने लोगों को गीता का श्लोक याद है शायद एक या दो विद्यार्थियों ने हाथ उठाया। बाकी किसी विद्यार्थी को गीता का श्लोक याद नहीं था। यह देख गांधी जी ने प्रधानाचार्य जी से कहा कि जिस विद्यालय से पढ़ा हूँ उस विद्यालय के विद्यार्थियों को गीता का कोई श्लोक याद नहीं है, गीता की पढ़ाई नहीं होती है क्या? प्रधानाचार्य जी ने कहा कि गीता पढ़ाई जाए तो क्या शिक्षा साम्प्रदायिक नहीं हो जाएगी। गांधी जी ने कहा गीता पढ़ाने से शिक्षा साम्प्रदायिक होती है तो मैं साम्प्रदायिक शिक्षा के पक्ष में हूँ। महात्मा गांधी जी बनारस गए तो वहाँ शिक्षा से जुड़े कुछ विद्यार्थी उन से मिलने के लिए आए और पूछा बापू भारत को समझने के लिए कुछ पुस्तकें बताइए। गांधी जी ने कहा कि श्रीमद्भगवद्गीता और तुलसीदास की रामचरितमानस पढ़िए। थोड़ी देर बाद किसी दूसरे विद्यार्थी ने पूछा कि कुछ ओर पुस्तकों के नाम बताइए। गांधी जी ने कहा दो बहुत हैं। भारत को जानने समझने के लिए श्रीमद्भगवद्गीता और रामचरितमानस पढ़ो भारत का बोध हो जाएगा।

हम भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिंदी पर चर्चा कर रहे हैं। निश्चित रूप से ही हिंदी साहित्य में जो भी पाठ किसी ने भी गीता से जुड़ा हुआ लिखा, चाहे गांधी जी ने, मालवीय जी के प्रवचनों में, काका कालेलकर के द्वारा, बाल गंगाधर तिलक के द्वारा लिखा गया है तो गीता के पठन पाठन के आग्रह के साथ स्वतंत्रता संघर्ष भारत ने जीता। गीता केवल NCERT ही नहीं बल्कि किसी भी प्रदेश में हिंदी के पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं है।

बहुत कम लोग जानते हैं कि गांधी जी आश्रम में जब भी रूकते थे तो वहाँ के गुजराती माध्यम के विद्यालय में हिंदी पढ़ाते थे और हिंदी में भी रामचरितमानस का उत्तरकाण्ड विशेष कर राम राज्य का प्रसंग। जब हिंदी का प्रश्न महात्मा गांधी के सामने कई लोगों ने खड़ा किया तो गांधी जी ने कहा कि यदि मैं हिंदी न पढ़ा होता तो रामचरितमानस कैसे पढ़ता और रामराज्य की बात मेरे मन में कैसे आती। गांधी जी सत्य और अहिंसा की बात करते हैं।

एक सात्विक गीता तुलसीदास के रामचरितमानस में उस प्रसंग में दिखाई पड़ती है जिसमें विभीषण चिंतित होते हैं– ''रावण रथी विरथ रघुवीरा'' का बहुत सुन्दर वर्णन तुलसीदास जी करते हैं कि जिस रथ पर बैठकर युद्ध लड़ा जाता है वह रथ दूसरा होता है। उस रथ के वर्णन के साथ सत्य है, अहिंसा है, धर्म का चक्र है, भारत की परंपरा है, आधुनिकता का बोध है, वैश्विक संस्कृति कैसे सुविचारित ढंग से बिना विश्रृंखलित हुए सबका भरण–पोषण और जीवन की सुरक्षा के आग्रह के साथ आगे बढ़ सकती है उसकी चर्चा श्रीराम के मुख से तुलसीदास जी ने करवाई है। मुझे नहीं लगता कि कक्षा 5 वीं से लेकर एम. ए. तक की किसी कक्षा में ष्रावण रथी विरथ रघुवीराष का पाठ हम पाठयक्रमों के रूप में हिंदी जगत को देते हैं। तुलसीदास का भाव सर्व समावेशिता के साथ उपस्थित होता है। गांधी जी को रामराज्य इसलिए भाता था क्योंकि बार–बार तुलसीदास रामराज्य के पाठ में ष्कोउ को दुखी न दीनाष की बात करते थे। सबके सुख और प्रसन्नता की चर्चा करते थे। उसमें जाति नहीं है, वर्ण भी नहीं है, सबके दरवाजे पर हाथी है। सबको दीर्घ जीवन मिला हुआ है। सब निरोग्य हैं। जो सब के साथ बात कही गई है वो कहीं न कहीं हमारे परंपरा के मान्य श्लोक ष्सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाःष की धारणा के साथ वह भाव जुड़ता है। उस भंगिमा के साथ बढ़ने का जो अभ्यास है वह हमारे जीवन और चर्या का विषय होना चाहिए।

कक्षा 11 वीं और 12 वीं की पुस्तकों की हम सब ने चर्चा की है। दलित विमर्श और स्त्री विमर्श की चर्चा है। पाठ्यक्रम के किसी हिस्से में किसी पाठ की जब हम चर्चा करते हैं तो मीरा के बिना काम नहीं चलता। मीरा किसी पाठ्यक्रम के हिस्से के रूप में उपस्थित होती है लेकिन मीरा की चर्चा के बहाने भारतीय स्त्रियाँ मध्यकाल में पूरी ताकत के साथ लिख रहीं थी। ऐसी १० स्त्रियों के नाम की चर्चा भी हम नहीं करते। उसी तरह से दलित लेखकों की एक पूरी श्रृंखला है। उस पूरी श्रृंखला में केवल संत रैदास जी नहीं है, हालांकि रैदास जी वर्तमान पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं है। कहीं–कहीं उच्चतर कक्षाओं में पढ़ाए जाते हैं।

महाराष्ट्र से मराठी कवियों ने भी हिंदी में रचनाएँ लिखी, वह संख्या बहुत बड़ी है। नामदेव जी से लेकर तुकाराम जी तक की परंपरा है, जिन लोगों ने हिंदी में लिखा उस पूरी की पूरी परंपरा का ओगाहन पृष्ठभूमि में या अन्य अंतराल करके जो पाठ्य पुस्तक दी जाती है उन पाठ्य पुस्तकों का हिस्सा होना चाहिए। जैसे हम चर्चा के क्रम में प्रति प्रांत के कवि को एक पुस्तक में स्थान नहीं दे सकते। कोई

ऐसा संस्मरण, यात्रा वृतांत या रेखाचित्र जिसमें पूर्वोत्तर की भावभूमि समाहित हो रही हो। जिसमें भारतीय भाषाओं के संरक्षण, अनुरक्षण और प्रवधान की चिंता व्यक्त हो रही हो ऐसा कोई हिस्सा हमारे पाठ का हिस्सा नहीं बनता।

स्नातकोत्तर कक्षा में हिंदी का विद्यार्थी हिंदी की बोलियों के नाम पर 18-19 बोलियों को याद करता है। फिर परीक्षा में जाकर पूर्वी में पश्चिमी, पश्चिमी में राजस्थानी, राजस्थानी में बिहारी हिंदी का जैसे-तैसै नाम याद कर के रखता है। लेकिन लगभग 1800 बोलियाँ प्रमुखता से जीवित रूप में भारत में बोली जा रही है, ये संख्या बहुत बड़ी है। इनकी लिपियाँ नहीं है लेकिन ये जीवित रूप में विद्यमान हैं, उनके लोग विद्यमान है। ऐसी बोलियों की चर्चा किसी तरह से कोई भाषा-विज्ञान या व्याकरण के नाम पर हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा हो। जिसकी बात हम कर सके और वह ज्ञान विज्ञान जो हमसे आपेक्षित है क्या साहित्य का विषय हो कर के उपस्थित हो सकता है। हम वराहमिहिर, आर्यभट्ट, चरक, सुश्रुत और ब्रहम गुप्त को गणित और विज्ञान की तरह तो नहीं पढ़ा सकते। साहित्य का पठन-पाठन अलग विषय है। दर्शन का पठन-पाठन अलग विषय है। पुराण का पठन-पाठन अलग विषय है। साहित्य में भी अन्य भाषाओं के साहित्य के पठन-पाठन का अलग विषय है लेकिन यह भारतीय ज्ञान परंपरा का हिस्सा है।

भारतीयों को पृथ्वी की गति, ग्रह नक्षत्रों, चंद्रग्रहण, सूर्यग्रहण और अनेक प्रकार की तिथियों का बोध था तो वह बोध हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा हो सकता है। ऐसे लेख परंपरागत ढंग से, आधुनिक ढंग से और साहित्य की दृष्टि से लिखे गए हैं। पूरे के पूरे पाठ्यक्रम में हिंदी के बहुत से महत्त्वपूर्ण कवि और स्वतंत्रता आंदोलन के महत्त्वपूर्ण कवि थे जो हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं बनते। स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में एक स्वतंत्रता सेनानी का नाम बताइए जिसके घर और कार्यालय की तलाशी 63 बार ली गई। जिसको 12 बार जेल की यात्रा हुई। ऐसा कवि भी पाठ्यक्रम का हिस्सा नहीं है। कहीं माखनलाल चतुर्वेदी की कविता ष्पुष्प की अभिलाषा पढ़ाते हैं। वे माखनलाल चतुर्वेदी थे जो 12 बार जेल गए।

बालकृष्ण शर्मा श्नवीनश् अनेक वर्षों तक जेल में बंद रहे। क्या कहीं भी ये हमारे पाठ्यक्रम का हिस्सा बनते हैं। हमने श्यामलाल पाण्डेय की श्चेतकश् पर कविता कभी पढ़ी थी। पूरे देश भर में अलग अलग पाठयक्रमों से साजिश के तहत इनको पाठयक्रम से निकाल दिया। एक जगह बहस हुई तो एक अपने वरिष्ठ साथी ने कहा कि डॉ. साहब आप भी घोड़ा, कुत्ते पर लिखी गई कविता पर क्मइंजम कर

रहे हैं। आप क्या चाहते हैं कि चेतक के नाम पर अब घोड़ा पढ़ाया जाए। यानि महाराणा प्रताप और चेतक से जुड़ी कविताओं को पाठ्यक्रम का हिस्सा न बनने दिया जाए। इसके लिए एक मुहिम चलाई गई।

इतिहास को भारतीय विद्यार्थी परीक्षा के प्रश्न पत्र के उत्तर के रूप में लिखता है और साहित्य को अपना जीवन बनाकर जीता है। इतिहासकारों ने 400 वर्षों तक पढ़ाया है कि महाराणा प्रताप हल्दी घाटी में पराजित हुए और भारतीय मन ने कभी स्वीकार नहीं किया। राजस्थान के जयपुर विश्वविद्यालय में अनेक गोष्ठियाँ हुई फिर लोगों ने कहा कि हल्दी घाटी में कोई नहीं हारा, कोई नहीं जीता, फिर कहा कि महाराणा प्रताप जीते लेकिन भारतीय मन 400 वर्षों से कह रहा है कि महाराणा प्रताप हल्दी घाटी में जीते और यह ज्ञान हमें साहित्य से प्राप्त हुआ था।

1192 में पृथ्वीराज चौहान तराइन के युद्ध में मारे गए। साहित्य ने कहा कि पृथ्वीराज चौहान को गिरफ्तार किया गया। उनकी आँखों में मिर्च डाल कर फोड़ दी गई। भारतीय मन इस सत्य को स्वीकार करता है न कि इतिहास के उस सत्य को जिसमें पृथ्वीराज की मौत दिखलाई जाती है तो साहित्य का पाठ सुसंगत, ज्ञान परक, भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिंदी में दिया जाना चाहिए और उसकी सुनियोजित व्यवस्था हो इस आग्रह के साथ ये गोष्ठी हुई है। मुझे लगता है कि हम लोग इस देश में सुचिंतित रूप में हिंदी का पाठ्यक्रम बनाने में सफल होंगे।

17

प्रो करूणा शंकर उपाध्याय

बम्बई विश्वविद्यालय, बम्बई

'राष्ट्रीय शिक्षा नीति और भारतीय ज्ञान परंपरा के आलोक में हिंदी' विषय पर अपने विचार प्रकट करने से पूर्व पिछले एक महीने के दो-तीन उदाहरण देना चाहूंगा जिससे आप समझेंगे कि हम आज कहाँ हैं?

हमारे विदेश मंत्री ने ब्रिटेन के विदेश मंत्री से कहा कि आप हमको उपदेश देने से पहले हमारे यहाँ से 45 ट्रिलियन डॉलर जो लूट कर ले गए थे वे वापिस करें। आपको यह भी कहने का अधिकार नहीं है कि हम क्या हैं और क्या कर रहे हैं? उन्होंने एक प्रकार से ब्रिटेन की पहली बार बोलती बंद की। आज से 27 दिन पहले अमेरिका के एक सीनेटर ने कहा कि हम भारत से कुछ तकनीक के मामले में काफी पिछड़ गए हैं। उसमें उन्होंने दो तकनीकों का नाम लिया-

1. Hyper Sonic Missile का
2. Direct Energy Weapon का

जो प्रत्यक्ष ऊर्जा निर्देशित हथियार है जिसमें भारत हमसे ७ साल आगे है। कहने का तात्पर्य यह है कि स्थितियां फिर वहां लौट रही है जहाँ कभी हम विश्व गुरु हुआ करते थे। ऐसा ही एक उदाहरण और है जिसमें पुतिन ने मोदी जी से आग्रह किया कि आप अंतरिक्ष में मिसाइलों और परमाणु बमों की तैनाती न करें। कहने का तात्पर्य है कि जो अपने आप को महाशक्ति समझता है उस देश का राष्ट्रपति भारत के प्रधानमंत्री से आग्रह कर रहा है कि अंतरिक्ष में आप हथियार तैनात न करें। तो कहीं न कहीं कुछ ऐसी स्थितियाँ है जो भारत को वापस उसी स्थिति की ओर ले जा रहा है जहां हम विश्व गुरु दिखाई पड़ते हैं।

हम कुछ तुकबंदियों के चक्कर में भारत के स्वरूप का ही गलत ढंग से विश्लेषण करते हैं। कश्मीर से कन्याकुमारी और अटक से कटक कह कर हम भारत के बहुत सारे हिस्से को छोड़ देते हैं। कश्मीर हमारा उत्तरी हिस्सा नहीं बल्कि लद्दाख है और लद्दाख में भी सबसे उत्तरी हिस्सा सियाचिन का इन्दिरा वैली है जो सीधे इन्दिरा कोल (चीन) से जुड़ा है। सबसे दक्षिणी हिस्सा बहुत कम लोग जानते हैं कि दक्षिणी निकोबार में इन्दिरा पाइन्ट है। जहाँ से इण्डोनेशिया मात्र 70 कि. मी. है और कन्याकुमारी से 1700 कि. मी. दूर है। उसकी चर्चा हम नहीं करते। अब कहीं जाकर भारत सरकार उस रणनीतिक जगह के महत्त्व को समझ पाई है और आपकी जानकारी के लिए बता दें कि उसका क्षेत्रफल हांगकांग और सिंगापुर से ज्यादा है। भारत सरकार ये मानकर चल रही है कि यदि हम आने वाले 10 सालों में वहां 1 लाख करोड़ का निवेश करते हैं तो हम हांगकांग और सिंगापुर की दुकान बंद कर सकते हैं और उसका बड़ा कारण यह भी है कि वहाँ से 2 लाख 75 हजार जहाज प्रतिवर्ष गुजरते हैं। कुछ ऐसी स्थितियाँ भी है जिनको सही ढंग से समझने की जरूरत है। जैसे भारत का पश्चिमी हिस्सा नलिया है जो कच्छ में है। सबसे पूर्वी हिस्सा आइजान– नागालैंड और मिजोरम में आता है। कहीं न कहीं सम्पूर्ण भारत को सम्पूर्णता में देखने की जरूरत है। कुछ लोंगों का मत है कि दक्षिण भारत और पूर्वोत्तर भारत पाठ्यक्रमों से उपेक्षित है। कहीं न कहीं हमें सम्पूर्ण भारत के बोध को समझने की जरूरत है, उसके स्वरूप को समझने की जरूरत है।

जब ''उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चौव दक्षिणम्, वर्ष तद् भारतं नाम, भारती यत्र सन्ततिष का विष्णुपुराण में जिक्र आया तो भारत के भौगोलिक आकार को प्रस्तुत किया गया। कहीं न कहीं उसके पूरे विशालकाय स्वरूप को रखा गया। हमारे पाठ्यक्रमों में जो गड़बड़ियां हुई उसके लिए कहीं न कहीं वे लोग जिम्मेदार है जिन्होंने उसके साथ छेड़छाड़ की है। इसमें ब्रिटिश इतिहासकारों की भूमिका बहुत ज्यादा है। क्योंकि वे किसी भी स्थिति में भारतीय सभ्यता, संस्कृति और ज्ञान परंपरा को बहुत पुराना नहीं देखना चाहते थे। हमारे यहाँ जो सभ्यता प्रस्तावित होती है। वैदिक काल में वह सिंधु सरस्वती सभ्यता थी। मानसरोवर झील से सरस्वती नदी निकलती है। अब सरस्वती नदी की जलधारा को वैज्ञानिकों ने खोज निकाला है। सरस्वती के तट पर सारस्वत प्रदेश विकसित हुआ जहां वैदिक सभ्यता विकसित हुई लेकिन उसका समय अंग्रेजों के गले की हड्डी बना। जब अंग्रेजों ने देखा कि भारत में ऋग्वैदिक काल का शुभारंभ 12 हजार ई. पू. से 8 हजार ई. पू. के बीच का

है। उनके यहां जो सबसे पुराना इतिहास है यूनान का जो होमर से थोड़ा पहले जाता है, वह 1200 ई. पू. तक जाता है। उसके पहले उनके यहाँ कुछ भी नहीं था। जब वे पाषाण युग में थे आदिमानव की स्थिति में, तब हमारे यहाँ वैदिक काल चल रहा था। उनको लगा अगर 12 हजार ई. पू. तक भारत के इतिहास को ले जाएंगे तो भारत पूरे विश्व का गुरु माना जाएगा और हम लोग बहुत पिछड़े माने जाएंगे तो भारतीयों के स्वाभिमान को चूर्ण करने के लिए षड्यंत्र के तहत उन्होंने सीधे एक शून्य हटा दिया। 12 हजार ई. पू. को 1200 ई. पू. कर दिया। जिससे 10 हजार साल का हमारा इतिहास कल्पना लोक में चला गया। वैदिक काल, उपनिषद् काल, आरण्य काल, ब्राह्मण काल, रामायण, महाभारत काल सारा का सारा हमारा इतिहास कल्पना लोक में भेज दिया गया। अजातशत्रु के आसपास से भारत का इतिहास आरंभ होता है। 1200 ई. पू. के थोड़े बाद भारत का इतिहास इसलिए शुरू किया ताकि हम यूनान से पुराने न दिखें। इसलिए हमारा इतिहास विकृत हुआ। कुछ ऐसे उदाहरण मिलते हैं जिनसे पता चलता है कि हमारे इतिहास के साथ छेड़छाड़ हुई है। जैसे वाल्मीकि रामायण की चर्चा करें तो उसमें उन्होंने विंध्याचल और हिमालय की ऊंचाई बराबर बताई गई है। इससे आप अंदाजा लगा सकते हैं कि लगभग 100 साल में हिमालय की ऊंचाई 1 फीट ऊपर जाती है। मतलब हिमालय ऊँचा हो रहा है और विंध्याचल जहां था वहीं है। वाल्मीकि के समय और आज के समय में कितने 100 साल बीते होंगे कि हिमालय की ऊंचाई विंध्याचल से बहुत ज्यादा हो गई। विंध्याचल आज भी 5 हजार फीट की ऊंचाई पर है जबकि हिमालय 29500 फीट ऊंचाई तक पहुँच चुका है। कहीं न कहीं ये भौगोलिक और वैज्ञानिक दृष्टि से अध्ययन की अपेक्षा रखता है। वाल्मीकि ने रामायण में रावण की सेना में 4 दांतों वाले हाथी का जिक्र किया है। 4 दांतों वाले हाथी आज से 75 हजार साल पहले इस धरती पर मौजूद थे तो क्यों नहीं गहन अध्ययन से इन तथ्यों का अन्वेषण किया जाए। हम क्यों नहीं पूरी ज्ञान परंपरा को नए संदर्भ में आलोकित कर सकते हैं। जो हमारी विरासत है, कहीं न कहीं इन सारी चीजों को नए संदर्भ में नए ढंग से देखने और समझने की जरूरत है।

अब तक क्या पढ़ाया गया, कैसे पढ़ाया गया यह निश्चित रूप से इस बात का द्योतक है कि संतुलित पाठ्यक्रम नहीं था। कहीं न कहीं भारतीय ज्ञान परंपराओं और भारत बोध को प्रतिष्ठित करने वाला पाठ्यक्रम नहीं था। आज जरूरत है कि हम अपनी उस विरासत को, उस गौरवशाली समुन्नत परंपरा को पुनर्जीवित कर

परिष्कृत करें और जो भी पाठ्यक्रम हम निर्मित करें उसमें ग्रहण और त्याग का विवेक जरूरी है। हमारे धर्मग्रंथों, पुराणों यहाँ तक की मनुस्मृति के साथ अंग्रेजो ने बहुत ज्यादा छेड़छाड़ की है और उसमें बहुत ज्यादा क्षेपक जोड़ दिए गए हैं। आप खुद सोचिए मनुस्मृति के पहले ही श्लोक में– ''जन्मना जायते शुद्रः'' कह दिया गया है कि हर व्यक्ति जन्म से ही शुद्र है तो बाद में कोई भेद क्यों आएगा। ये जो भेद लाया गया है अंग्रेजो द्वारा लिखवाया गया क्षेपक है। हमारे इन ग्रंथों को नए ढंग से मौलिक रूप से संपादन करने की जरूरत है। उसमें क्या तथ्य सही है क्या मूल रूप में हैं, देखने की आवश्यकता है। चूंकि वे हमारे सारे ग्रंथ उठा के ले गए।

मैक्समूलर की चर्चा करें तो उसने भारतीय इतिहास की परंपरा को विकृत करने का काम किया। हमारे यहाँ जो था उसका उल्टा लिखने का कार्य मैक्समूलर ने किया। हमारे ग्रंथ तो सब उठा कर ले गए और बहुत सारे नालंदा में जला दिए गए। कहीं न कहीं हमें जो टूटी हुई कड़िया हैं उन कड़ियों को जोड़ने की जरूरत है, उसको नए सिरे से समझने की जरूरत है।

हम ऐसे पाठ्यक्रम के बारे में विचार करें जिसमें हिन्दी के जो कवि हैं वे तो रहें विशेषकर मध्यकाल के। मध्यकाल में आप देखेंगे कि लगभग देश के हर एक हिस्से के कवि आतें हैं। सिंध से रोहलदास, गुजरात से नरसिंह मेहता, राजस्थान से जंभूजी, बिलोजी, पंजाब से गुरु नानक, दक्षिण से संत नामदेव, तुकाराम स्वामी, स्वामी समर्थ रामदास, एकनाथ, महाराष्ट्र से पुतन्ना, अलवार भगत, पूर्व से चौतन्य महाप्रभु, शंकरदेव आते हैं। यह एक राष्ट्रव्यापी आंदोलन भक्तिकाव्य ही रहा है। भक्तिकाल के अधिकांश कवियों को हम पाठयक्रम में अगर शामिल करते हैं तो उनकी रचनाएँ उपयोगी सिद्ध होगी। उनकी रचनाएँ संदेशपरक हैं। चूंकि ये सारे कवि मूल्य मीमांसा, मनुष्यता के कल्याण की कामना करनेवाले, लोकमंगल की भावना से युक्त, उदार भक्ति चेतना के कवि हैं। ये पूरी तरह से रागद्वेष से निर्लिप्त कवि हैं। इन कवियों ने अपना भक्ति मार्ग सबके लिए खुला रखा है। तुलसी ने यहां तक कहा कि ष्पुरूष नपुंसक नारि वा जीव चराचर कोइष आज हम किन्नर विमर्श की चर्चा कर रहे हैं। तुलसीदास का भक्तिमार्ग पुरुष, स्त्री, किन्नर सभी के लिए खुला है। चराचर जगत के हर प्राणी के लिए खुला है। मतलब ये जो व्यापक अवधारणा है कहीं न कहीं इस अवधारणा को समझने की आवश्यकता है।

डॉ. रत्नाकर निराला जी कनाडा के है जिन्होंने ''हिन्दूराज तरंगिणी'' लिखी है। उसमें उन्होंने दिखाया है कि भारतवर्ष के राजाओं ने दुनिया के अलग–अलग देशों

में कहाँ–कहाँ, कब–कब शासन किया है। बहुत ही व्यापक रूप से उन्होंने 19 वें सन् के साथ उसका परिचय दिया है। उन्होंने उसमें ओर महत्त्वपूर्ण बातें कही हैं जो ध्यान देने योग्य है। सब कहते हैं कि हम हजार साल गुलाम थे तो पहले तो हमें ये कहना बंद करना होगा क्योंकि पूरे भारतवर्ष पर कभी भी किसी विदेशी सत्ता या आक्रांता सत्ता का शासन नहीं था। मुगलों का शासन भी पूरे भारतवर्ष पर नहीं था। भारत के केवल कुछ मैदानी इलाकों पर था। चितौड़गढ़ से लेकर उदयपुर तक का सारा इलाका आजाद था। छत्रसाल, महाराष्ट्र, दक्षिण भारत, पूर्वोत्तर भारत, कश्मीर, लद्दाख, हिमाचल प्रदेश, नेपाल, भूटान उस तरफ का सारा इलाका आजाद था। जब आपका पूरा देश गुलाम नहीं था तब आप देश को गुलाम क्यों कहते हैं। मतलब हम ये कह सकते हैं कि हमारे देश के एक हिस्से पर आक्रांताओं का शासन था। मतलब कहीं न कहीं इसको हमें नए सिरे से देखने और परिभाषित करने की जरूरत है।

दूसरी बात यह है कि उस समय जो साम्राज्य आक्रांताओं का था उसकी उम्र बहुत कम है। लेकिन हमारे यहाँ चोल वंश का शासन कंबोडिया तक था। 21 सौ साल तक हमारे देश में जिसका साम्राज्य रहा हम भारत के इतिहास में उसकी चर्चा कम करते हैं और जो छोटा सा कुछ दशकों या शतकों का साम्राज्य है उस को इतिहास के केन्द्र में रखते हैं। कहीं न कहीं भारतवर्ष को व्याख्यायित व विश्लेषित करने के लिए सम्पूर्ण भारत पर चर्चा करे न कि केवल दिल्ली पर। दिल्ली को केन्द्र बनाकर हम भारत को देखेंगे तो कहीं न कहीं हम सम्पूर्ण भारतवर्ष के वैविध्य के साथ उसके सांस्कृतिक, भौगोलिक और भाषिक विभिन्नता के साथ अन्याय करेंगे।

यह हमारा सौभाग्य है कि हमारा देश ऐसा है जिसके पास यूरोप से भी ज्यादा भौगोलिक, सांस्कृतिक और भाषिक विभिन्नता है। पूर्वोत्तर में जितनी बोलियां है उतनी बोलियाँ और विभाषाएं यूरोप में नहीं हैं। जैसे यूरोप में लद्दाख की प्रकृति और सिक्किम मिल जाएगा लेकिन राजस्थान का मरूस्थल, छत्तीसगढ़ का नागलोक नहीं मिलेगा। हमारे पास भौगोलिक दृष्टि से भी ऐसा खजाना है जो कहीं नहीं है। इसी प्रकार आप सोचिए हमारे यहाँ जो कला है वह कितनी विकसित है। चौसठ कलाओं की चर्चा बार–बार आई। हमारे शास्त्रीय नृत्य में भरतनाट्यम से लेकर कत्थक तक आते हैं जिसमें मुद्राओं के माध्यम से, ऑखों के हावभाव के माध्यम से जीवन का कोई भी ऐसा गान, मनोवैज्ञानिक व्यापार नहीं है जिसकी अभिव्यक्ति न हो सकती हो और उनका जो नृत्य है संगीत है वह आज भी हमारे वनवासियों, आदिवासियों के स्तर का है क्योंकि उसमें ठवकल उवअमउमदज बहुत ज्यादा है, उछल कूद ज्यादा

है। उसमें किसी प्रकार का सांस्कृतिक उन्नयन व सूक्ष्मता दिखाई नहीं पड़ती। कहीं न कहीं पहले हम पूरे विश्व में पश्चिम को समझ लें और उसके बाद अगर हम अपने को समझना आरंभ करते हैं तब हमें अपना महत्त्व मालूम पड़ता है। पश्चिम में एक ओर बात अच्छी है कि उनके यहाँ होमर, अरस्तू के खिलाफ आज भी कोई नहीं लिख सकता। उनके प्रति एक अंध श्रद्धा का भाव है। हमारे यहाँ अंध श्रद्धा नहीं है। हमारे यहाँ कृष्ण ने कहा ''श्रद्धावान लभते ज्ञान'' कि श्रद्धा रखने वाला ज्ञान प्राप्त करता है। सबसे पहले विद्यार्थी के मन में भारत बोध के प्रति, भारत के प्रति, भारतीय विषयों के प्रति, हिन्दी के प्रति निष्ठा पैदा करने की जरूरत है। श्रद्धा का भाव पैदा करने की जरूरत है। क्योंकि अगर हम सकारात्मक भाव लेकर जाएंगे तभी हम सीख पाएंगे।

हमारे रचनाकारों ने विशेषकर आधुनिक काल में महाकवि जयशंकर प्रसाद ने भारत बोध और अस्मिता का एक मौलिक अन्वेषण करने का कार्य किया है। वही एक मात्र हिन्दी के रचनाकार हैं जो दक्षिण की देवदासी प्रथा, अरुणाचल प्रदेश, सम्पूर्ण भारत की अवधारणा और सिंध के बारे में लिखते हैं। सरस्वती नदी जिस मार्ग पर खोजी गई है इस मार्ग की चर्चा उन्होंने कामायनी के सारस्वत प्रदेश में इड़ा सर्ग में कर दी थी। ऐसे रचनाकार के माध्यम से हमें कहीं न कहीं बहुत सारे जो उसके अंत:सूत्र है उसको पकड़ने की जरूरत है। उन्होंने एक बड़ा कार्य किया है कि परिक्षित जन्मेजय, अजातशत्रु, जरासंध और शिशुनाग के बीच में जो 27-28 पीढ़ियाँ आई हैं उनको ढूँढकर निकालने का कार्य किया है। हम लोग उसको अंधकार युग में मानकर उसके पूरे इतिहास को छोड़ देते हैं। तो भारतीय इतिहास की दो कड़ियाँ ऐसी है जो सही संदर्भ में जोड़ने की जरूरत है। तो हमारा पूरा का पूरा वैदिक काल से लेकर आज तक का जो इतिहास है जुड़ जाता है।

दूसरा हर्षवर्धन के बाद हम सीधे राजपूत काल, चौहान वंश, चंदेल वंश पर आ जाते हैं लेकिन बीच में जो राजा आते हैं उनकी कड़ी को जोड़ने की जरूरत है यदि ये जुड़ जाए तो हमारा इतिहास अपनी परंपरा से पूरी तरह से सूत्रबद्ध रूप में एक प्लुत प्रवाह की तरह आगे बढ़ता हुआ दिखाई देगा।

जो भी पाठ्यक्रम अब निर्धारित किया जाए उसमें दो-तीन बातों का विशेष ध्यान रखा जाए-

1. भारत बोध भारतीय अस्मिता के अनुरूप हो।
2. भारत के जिन कलाकारों ने, महा-मनीषियों ने, वैज्ञानिकों ने, चिंतकों ने

भारत को विश्व गुरु बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। जिनके माध्यम से भारतवर्ष विश्व गुरु माना जाता है उनके बारे में जानकारी दी जाए। यह बहुत जरूरी है चूंकि 11 वीं और 12 वीं के पाठ्यक्रम में सब कुछ नहीं पढ़ाया जा सकता है लेकिन एक अनुपात रखते हुए हम कितनी मात्रा में किन चीजों को रख सकते हैं इसका ध्यान रखने की जरूरत है और लगातार हम निश्चित अवधि के भीतर 3 साल या 5 साल में पाठ्यक्रम को बदलते रहेंगे तो हमें उसको अद्यतन करने का भी मौका मिलता रहेगा। आज भी जो विभूतियाँ भारत को विश्व स्तर पर गौरव दिला रही हैं जिनके कारण भारत आज विश्व की 5 वीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था, चौथी सबसे बड़ी सैन्य शक्ति है और निकट भविष्य में वह चौथे से तीसरे स्थान पर आने वाला है। उन विभूतियों की भी चर्चा लगातार होनी चाहिए। उनके बारे में भी पाठ्यक्रम में सामग्री रखनी चाहिए। जिससे हम परंपरा की गहरी जड़ों तक भी जाएं और उन्नति के चरम शिखर तक भी जाएं। दोनों के बीच की पूरी की पूरी रूपरेखा जुड़ी रहे।

18

प्रो. प्रमोद कुमार दुबे

एन. सी. ई. आर. टी, दिल्ली

मैं सबसे पहले मदन मोहन मालवीय के विचार से इस लेख की शुरुआत करना चाहूँगा। उन्होंने कहा है, ''मैं पूरे हिंदुत्व को नष्ट हो जाने देता यदि विश्व की रक्षा का सवाल नहीं होता।'' विश्व की रक्षा आवश्यक है इसलिए हिंदुत्व चाहिए, राष्ट्रीयता चाहिए।

आधुनिक सभ्यता ने विश्व को विनाश की कगार पर खड़ा किया है। सभी शिक्षक वर्ग अर्थात् आप सब लोग एक योद्धा हो आपको विजयश्री लेनी है अपने लिए नहीं इस राष्ट्र के लिए। शिक्षण प्रशिक्षण प्रोग्राम ऐसा दिया जाना चाहिए जैसे एक सेना को दिया जाता है। प्रशिक्षण एक गंभीर विषय है। यदि गुरु जी बैठे हैं सारे विद्यार्थी शांत हैं तो ज्ञान का सृजन नहीं हो सकता ज्ञान के सृजन के लिए छात्रों और अध्यापकों के मध्य वार्तालाप बहुत जरूरी है।

एन.सी.ई.आर.टी. की पाठ्यपुस्तकों का निर्माण विशेष विशेषज्ञों द्वारा किया जाना चाहिए क्योंकि किताब बनाना एक बारीक काम है, एक तकनीक है। पाठ्यपुस्तकों का समय-समय पर संशोधन किया जाना चाहिए। इनके निर्माण में राजनीति कदापि नहीं होनी चाहिए, हमारे देश में महान दार्शनिक स्वामी विवेकानंद को चालीस साल पहले एक राजनीतिक पार्टी ने गाली दी लेकिन आज देखो हमारे देश के प्रधानमंत्री उनका अनुसरण कर पूरे देश को चला रहे हैं। मैंने बहुत सी किताबें बनाई लेकिन उन्हें संसद में प्रस्तुत नहीं किया गया, जब पाठ्यपुस्तकों से रामकथा को हटाने की बात हुई, मैंने नामवर जी के सहयोग से रामकथा को हटने नहीं दिया।

अर्थात् आशय यह है कि पाठ्यपुस्तकों में भारतीय संस्कृति का समावेश होना चाहिए। शिक्षा का इतिहास हमनें अपने अंग्रेजों से सीखा प्रशिक्षण प्रोग्राम विभिन्न

प्रकार से दिया जाता है। जैसे- मूक, आनलाइन, संवादी तमाम तकनीकी इस प्रशिक्षण के भीतर है। आज शैक्षिक नवाचार का महत्व बढ़ रहा है। संवादी प्रशिक्षण में प्रशिक्षक अपने स्रोताओं से बुलवाता है वे स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचार रखता है। फ्रेमवर्क और पाठ्यक्रम में अंतर होता है हमें इस अंतर को समझना चाहिए, शिक्षा नीति संविधान को आधार बनाकर चलती है। शिक्षा नीति पर ही राष्ट्रीय पाठ्यक्रम की रूपरेखा चलती है। पाठ्यचर्या शब्द अंग्रेजी भाषा का करिकुलम शब्द का हिंदी रूपांतरण है। इसमें शिक्षण सहायक सामग्री तथा शिक्षण विधियों का निर्धारण किया जाता है। पाठ्यक्रम शब्द अंग्रेजी भाषा के सिलेबस का हिंदी रूपांतरण है। यह संपूर्ण विषय के विशेष ज्ञान एवं कौशल को प्रभावित करता है।

प्रो. धर्मपाल 1928 में एक बार भारत आए उन्होंने भारत में जो देखा वह अपनी पुस्तक 'ब्यूटीफूल ट्री' में लिखा। भारत सोने की चिड़िया हुआ तो कैसे हुआ? वेद, उपनिषद, गीता, रामायण, महाभारत भारतीय ज्ञान परंपरा को उन्होंने अपनी पुस्तक में दिखाया। बहुत ही गहरी निष्ठा और लग्न से हमारे सामने भारतीय संस्कृति का वह चेहरा उद्घाटित किया है जिसे अंग्रेजी शिक्षा ने दबा दिया, समृद्ध और सुसंस्कृत भारत को अंग्रेजों ने बिखेर दिया। हमें अपने प्राचीन ज्ञान की जानकारी होनी चाहिए।

भारत एक बहुभाषी देश है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति में बहुभाषिकता को विशेष महत्व दिया गया है। जिसमें भारतीय भाषाओं की एकात्मकता देखने को मिल रही है। अब भारतीय भाषाओं का संपूर्ण व्याकरण एक साथ तैयार किया जा रहा है। शिक्षक को अपने सभी विद्यार्थियों के भाषा ज्ञान और कौशल को निखारने का प्रयास करना चाहिए। अवधी का ब्रज से, ब्रज का भोजपुरी से क्या संबंध है, हमारे लिए यह जानना जरूरी है। किसी का विरोध मत कीजिए, अपना काम कीजिए।

19

डॉ. विनोद कुमार विलासराववायचल

व्यंकटेश महाजन वरिष्ठ महाविद्यालय, उस्मानाबाद, धाराशिव

नयी शिक्षा नीति 2020 के चलते भारतीय शिक्षा पद्धति में आमूल-चूल परिवर्तन होने जा रहा है। मुस्लिम-ईसाई गुलामी के हजार वर्षों में भारत की शिक्षा नीति परमुखापेक्षी हो गयी थी। स्वाधीनता से पूर्व और स्वाधीनता के पश्चात बहुत से प्रयोग इस शिक्षा क्षेत्र के साथ हुए परन्तु कभी मूलभूत विचार नहीं किया गया। अतः बदलते समय के साथ स्वाधीन विचार और लाखों वर्ष पुरातन भारतीय संस्कृति का विचार शिक्षा नीति को लागू करने वाले लोगों ने राजनैतिक लाभ के लिए कभी किया ही नहीं। अतः इस बात पर पुनर्विचार होना समय की माँग थी। हिंदी भाषा और साहित्य के पठन-पाठन, अध्ययन-अध्यापन, समीक्षा आलोचना और शोध अनुसंधान में विशेषकर पाठ्यपुस्तक निर्मिति में भारतीय जीवनमूल्यों के प्रति जागरूकता निर्माण होनी चाहिए। इस दृष्टिकोण से प्रस्तुत शोधालेख में कुछ सुझाव परामर्श देने का प्रमाणिक प्रयास किया गया है।

कुंजी शब्द

शिक्षा, संस्कृति, अध्ययन-अध्यापन, पठन-पाठन, पाठ्यसामग्री पाठ्यपुस्तक, स्वाध्याय, समिति, आयोग, रोजगार, ज्ञान, मानव संसाधन, भारतीय भाषा, साहित्य आदि।

विषय वस्तु

एतद्देश प्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः।
स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्व मानवाः।।
(मनुस्मृति २/२०)

भारत में शिक्षा

सहस्रों वर्षों तक भारतवर्ष श्विश्वगुरुश की उपाधि से सम्मानित हुआ था। वेदादि सत्य शास्त्रों के पठन–पाठन से हमारे पूर्वज ऋषि–मुनियों ने सम्पूर्ण विश्व में अपनी प्रतिष्ठा बनाये रखी थी। यद्यपि महाभारत के युद्धोपरांत आचार्यों और वीरों के मारे जाने से ज्ञान के आदान–प्रदान की भूमिका में एक प्रकार का व्यवधान आ गया तथापि गुरुकुल न्यूनाधिक प्रमाण में इस भूमिका का निर्वहन करते रहे। एक वैदिक मत के स्थान पर वैष्णव, शैव, शाक्त, गाणपत्य, जैन और बौद्ध उपासना स्थानों पर शिक्षा और ज्ञान के आदान–प्रदान का अन्य प्रकार से प्रबंधन हो गया। धीरे–धीरे ये सभी उपासन स्थान गुरुकुलों और विश्वविद्यालयों में परिवर्तित होते गए। उदाहरणार्थ तक्षशिला, नालंदा, उदान्तपूरी, सोमपुरा, जगद्दल, नागार्जुनकुंडा, विक्रमशीला, वल्लभीपुर, वाराणसी, कांचीपुरम, मणिक्षेत्र, शारदापीठ, पुष्पगिरी ये 13 विश्वविद्यालय और स्थानीय गुरुकुलों में पढ़ने के लिए विश्वभर से छात्र–छात्राएँ आते थे।

आक्रान्ता मुसलमानों (मुगल, पठाण, अफगान, तुर्क, मंगोल) के शासन काल ने हमारी शाश्वत ज्ञान परम्परा के उपासना स्थलों को तहस–नहस कर डाला। रही–सही कसर को ईसाई (अंग्रेज, फ्रेंच, डच, पोर्तुगीज) शासकों ने पूरा किया। हमारे ही कुछ समाज सुधारकों ने संस्कृत के स्थान पर अंग्रेजी शिक्षा का समर्थन किया। परिणामतः अंग्रेजों ने सन 1836 में भारत में चल रहे सात लाख गुरुकुलों को बंद कर दिया और भारतीय ज्ञान परम्परा के स्थान पर पाश्चात्य विद्या को अधिक महत्त्व देकर एक प्रकार से हमें शैक्षिक दास बना दिया। तथापि भारतीय ज्ञान साधना के पक्षधर आर्य समाजी भी जी–जान से गुरुकुल प्रणाली का पुनरुज्जीवन करने का प्रयास करते रहे।

आधुनिक काल में भारत में बहुत से ऐसे प्रयास हुए जिनमें कोलकाता मदरसा स्थापना (1780), बनारस संस्कृत कॉलेज स्थापना (1791), फोर्ट विलियम कॉलेज स्थापना (1800) लाई मैकोले का घोषणापत्र (1835), महात्मा ज्योतिबा फुले प्राथमिक कन्या विद्यालय स्थापना (1948), चार्ल्स वूड का घोषणापत्र (1854), कोलाकाता, मुंबई, मद्रास विश्वविद्यालयों की स्थापना (1858), फर्ग्युसन कॉलेज की स्थापना (1870), विलियम हंटर आयोग (1882), दयानंद एंग्लो वैदिक कॉलेज की स्थापना, लाहौर (1886), गोपाल कृष्ण गोखले प्रस्ताव (1890), सर थॉमस रेले आयोग (1902), गुरुकुल कांगड़ी की स्थापना (1902), डॉ. एनी

सैडलर आयोग (1917), इंचकेप आयोग (1923), हर्मोट आयोग (1929), लिंडसे आयोग (1929), महात्मा गाँधी जी की वर्धा बुनियादी शिक्षा प्रयोग (1937), सार्जेंट आयोग (1944), डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन आयोग (1848), मुदलियार शिक्षा आयोग (1952), डॉ. दौलतसिंह कोठारी आयोग (1964), नई शिक्षा नीति (1986), एम्. बी. बच समिति (1989). नई शिक्षा नीति पर पुनर्विचार (1992), जी. रामरेड्डी समिति (1992), प्रोफेसर यशपाल समिति (1992), रामलाल पारेख समिति (1993), नई शिक्षा नीति (यथासंशोधित 1993), प्रो. राम ताकवले समिति (1995), राष्ट्रीय ज्ञान आयोग (2005), जस्टिस जे. एस. वर्मा समिति (2012) आदि बहुत से प्रयास हो गए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020

भारत के यशस्वी प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी के समर्थ नेतृत्व में भारतवर्ष फिर से अपने पूर्व वैभव को प्राप्त करने के लिए लालायित है। 2017 में नई राष्ट्रीय नीति का मसौदा बनाने के लिए सुप्रसिद्ध अंतरिक्ष वैज्ञानिक पद्मभूषण डॉ. के. कस्तूरीरंगन की अध्यक्षता में 9 सदस्यीय समिति का गठन किया गया। इस समिति ने जून 2018 को अपना प्रतिवेदन तत्कालीन मानव संसाधन मंत्री डॉ. रमेश पोखरियाल नि:शंक जी को सौंप दी। दि. 29 जुलाई 2020 में भारत सरकार ने डॉ. के. कस्तूरीरंगन जी के प्रतिवेदन को कतिपय परिवर्तनों के साथ स्वीकार किया। इन परिवर्तनों को क्रियान्वित करने से पूर्व लाखों शिक्षाविदों और प्रत्यक्ष जनता से हजारों परामर्श प्राप्त हुए। जिससे शिक्षा का आकृतिबंध ही बदल दिया गया।

परिवर्तित आकृतिबंध

विद्यालयों में 10+2 के स्थान पर 5+3+3+4 इस नए प्रारूप को स्वीकार किया गया। जिसमें आंगनवाड़ी के 3 वर्ष पहली और दूसरी के 2 वर्ष (पूर्व-प्राथमिक) + तीसरी से पांचवी तक के 3 वर्ष (प्राथमिक) + छठी से आठवीं तक के 3 वर्ष (माध्यमिक) + नौवीं से लेकर बारहवीं तक के 4 वर्ष अपेक्षित हैं। आलोच्य कक्षाओं का समावेश पहले केवल 2 वर्षो का था अब 4 वर्षों का हो गया है। जिसे द्वितीयक शिक्षा का नाम दिया गया है। इस शैक्षिक स्तर में पढ़नेवाले छात्र-छात्रों की आयु 14 से 18 वर्ष की होगी। इन छात्र-छात्रों से ज्ञान के साथ-साथ कतिपय कार्मिक कुशलताओं का भी अर्जन अपेक्षित है। हिंदी की साहित्यिक शैलियाँ :

हिंदी की पाठ्यपुस्तकें लिखते समय विद्वानों ने हिंदी भाषा के सभी रूपों को ध्यान में रखकर लिखना होगा। साथ ही साथ हिंदी भाषा के साहित्य के इतिहास के अलग-अलग कालखंडों में प्रयुक्त हिंदी भाषा के साहित्यिक रूपों को भी उदहारण के रूप में पाठ्यपुस्तकों में स्थानीय आवश्यकताओं के अनुसार स्थान देना होगा।

जैन, सिद्ध और नाथ पंथी साहित्यिकों द्वारा प्रयुक्त पुरानी हिंदी अथवा अपभ्रंशयुक्त हिंदी, वीरगाथा की डिंगल और पिंगल हिंदी, अमीर खुसरो की खड़ीबोली हिंदी, विद्यापति की अवहट्ट हिंदी आदि। भक्तिकालीन नामदेव, कबीर आदि संतों की सधुक्कड़ी हिंदी, सूफियों और तुलसीदास की अवधी, कृष्णभक्त एवं रीतिकालीन कवियों की ब्रजभाषा हिंदी को पाठ्यक्रम में स्थान अवश्य देना चाहिए।

साहित्य का पाठ्यपुस्तक में समावेश

शाश्वत मानवीय मूल्यों को युवा छात्रों में प्रतिबिंबित करने वाला साहित्य चाहे वह आदिकालीन, मध्यकालीन या आधुनिक हिंदी साहित्य हो पाठ्यक्रम की क्रमिक पुस्तकों में होना ही चाहिए। यहाँ हमारा यह स्पष्ट मत है कि, जो रचना एवं रचनाकार भारत की हजारों वर्षों से चली आ रही संस्कृति के विरोध में कुछ कह रहा हो उसे पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकों में स्थान नहीं देना चाहिए।

महाराणा प्रताप, छत्रपति शिवाजी महाराज, गुरु गोविन्द सिंह, झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई, राजा राममोहन राय, महर्षि दयानंद सरस्वती, महात्मा फुले, स्वामी विवेकानंद, योगी अरविंद घोष, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, महात्मा गांधीजी, बिरसा मुंडा, राजर्षि शाहूमहाराज, लोकमान्य तिलक, स्वातंत्र्यवीर सावरकर, नेताजी सुभाषचंद्र बोस, डॉ. बाबासाहेब आम्बेडकर, तुकडोजी महाराज आदि महामानवों की जीवनियाँ अवांतर वाचन के रूप में रखी जानी चाहिए।

पद्य साहित्य

आदिकालीन जैन, सिद्ध और नाथ सम्प्रदाय की आध्यात्मिक उक्तियों को हमारे वीर पूर्वजों के पराक्रम का बखान करने वाले पृथ्वीराज रासो, आल्ह खंड आदि ग्रंथों की वीरगाथाओं को पाठ्यपुस्तकों में स्थान देना ही चाहिए।

खुसरो, विद्यापति, नामदेव, कबीर, रैदास, नानक, तुलसीदास, सूरदास, जायसी, रसखान, रहीम, मीराँबाई, सहजोबाई, दयाबाई, आदि संतों भक्तों का समावेश किया जाना चाहिए। रीति कालीन शृंगारिक कवियों का पूर्णतया बहिष्कार कर देना चाहिए।

छत्रपति शिवाजी महाराज, महाराज छत्रसाल जैसे वीरों के पराक्रम का वर्णन करने वाले कवि भूषण और गोरे लाल जैसे कवि अनिवार्य कर देने चाहिए। नीति काव्य की रचना करनेवाले वृन्द कवि को भी पाठ्यपुस्तकों में स्थान मिलना चाहिए।

राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, माखनलाल चतुर्वेदी, बालकृष्ण शर्मा श्नवीनश, रामधारीसिंह दिनकर, सियारामशरण गुप्त सुभद्राकुमारी चौहान की देशभक्तिपूर्ण कवितायें युवा छात्र–छात्राओं में अवश्य ही उत्साह का संचार करेंगी। छायावादी कवि सूर्यकांत त्रिपाठी 'निराला' की ओजस्वी कवितायें, नागार्जुन की संस्कृतप्रचुर कवितायें अवश्य पढ़ाई जानी चाहिए। आपातकाल का विरोध करनेवाली दुष्यन्तकुमार त्यागी और सुदामा पांडे 'धूमिल' की कवितायें पाठ्यक्रम में होनी ही चाहिए।

गद्य साहित्य

पद्य साहित्य की तरह ही गद्य साहित्य की प्रत्येक विधा के पाठों का समावेश होना चाहिए। कहानी, उपन्यास, नाटक, एकांकी, जीवनी, आत्मकथा, रेखाचित्र, संस्मरण, डायरी, पत्र भेंटवार्ता, रिपोर्ताज, यात्रावृत्त, व्यंग्य आदि विधाओं में से दो–तीन विधाएँ अवश्य पढ़नी होंगी। साथ ही इन सभी का रसास्वादन करना आना चाहिए। आधुनिक साहित्य के पुरोधा भारतेंदु हरिश्चंद्र का सृजनात्मक साहित्य और महर्षि दयानंद सरस्वती जी का समीक्षात्मक साहित्य, जयशंकर प्रसाद का ऐतिहासिक चिंतन, प्रेमचंद का ग्रामीण समस्याओं का वर्णन करनेवाला साहित्य पाठ्यपुस्तकों में आना चाहिए।

समीक्षा

छात्रों को समीक्षा भी करनी आनी चाहिए। अतः भारतीय और पाश्चात्य साहित्यशास्त्रों के सिद्धांतों का गहन अध्ययन भी पाठ्यक्रम का हिस्सा होना चाहिए। इतना ही नहीं समाजशास्त्र, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, इतिहास, भूगोल, मनोविश्लेषणशास्त्र, व्याकरण, भाषाविज्ञान आदि शास्त्रों का साहित्य के साथ क्या सम्बन्ध होता है इसका भी अंतर्विद्याशाखीय ज्ञान पाठ्यक्रम का भाग होना आवश्यक है। साथ ही योग, आयुर्वेद, वैदिक गणित जैसी परम्परागत ज्ञान का भी प्राथमिक ज्ञान होना चाहिए।

लेखन

सृजनात्मक साहित्य के साथ–साथ प्रयोजनमूलक हिंदी की पाठ्यपुस्तक में निबंध लेखन कार्यालयीन लेखन, समाचार लेखन, फीचर लेखन, रेडियो वार्ता लेखन, कथा

लेखन, पटकथा लेखन, संवाद लेखन, नाट्यरूपांतरण, वक्तृत्व, वाद-विवाद, ब्लॉग लेखन, धारावाहिक लेखन, वेब सीरिज लेखन का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। साथ ही शैक्षिक हक-श्राव्य साहित्य के निर्माण का भी प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए। जैसे श्रुति लेखन, ध्वनि लेखन, पीपीटी, पीडीएफ, ऑडियो, वीडियो बनाना, वीडियो एडिट करना, यूट्यूब पर अपलोड करना आदि। छात्रों को आवेदन, प्रारूप, प्रतिवेदन, संक्षेपण, अनुवाद आदि लेखन का कौशल भी अर्जित करना होगा। परीक्षा की दृष्टि से छात्रों को वस्तुनिष्ठ प्रश्न, अतिलघुत्तरीय प्रश्न, लघुत्तरीय प्रश्न, दीर्घोत्तरीय प्रश्नों के उत्तर लिखने आने चाहिए।

भाषाई कार्मिक कुशलताओं का अर्जन

श्रवण, संभाषण, वाचन, लेखन, टंकण, मुद्रित दोष शोधन, मंच संचलन, मन्त्र श्लोक उच्चारण, गीत गायन, वक्तृत्व, वाद-विवाद, अनुवाद, कार्यालयीन लेखन, कथाकथन, समीक्षा, रसास्वादन, समाचार लेखन आदि। हिंदी के अध्येता छात्र-छात्रा से संस्कृत, उर्दू, अंग्रेजी और एक दक्षिण भारत की भाषा का कामचलाऊ ज्ञान होना ही चाहिए। इन सभी बातों का समुचित ध्यान रखते हुए ही कक्षा नौवीं से बारहवीं तक के पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया जाना चाहिए।

उपर्युक्त प्रकार से बनी पाठ्यपुस्तकों के अध्ययन से युवा छात्र-छात्रों में स्नातक स्नातकोत्तर शोध अध्ययन में रूचि निर्माण होगी और वे स्वयं रोजगार प्राप्त भी कर सकेंगे। छात्र आगे चलाकर स्नातक, स्नातकोत्तर और शोध कक्षाओं में नेत्रदीपक यश प्राप्त कर सकेंगे।

और साथ ही अपने भाषाई कुशलताओं का उपयोग कर धनार्जन भी कर सकेंगे। देश-विदेश में जाकर अपनी कुशलताओं की छाप छोड़ सकेंगे।

अंत में राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी के शब्दों में कहना चाहूँगाः

हाँ! आज शिक्षा मार्ग भी संकीर्ण होकर क्लिष्ट है,
कुलपति- सहित उन गुरुकुलों का ध्यान भी अवशिष्ट है।
बिकने लगी विद्या यहां अब, शक्ति हो तो क्रय करो,
यदि शुल्क आदि ना दे सको तो मूर्ख बनकर ही मरो।

निज पूर्वजों उनके सद्‌गुणों को यत्न से मन में धरो,
सब आत्म- परीभव -भाव तज निज रूप का चिंतन करो।

निज पूर्वजों के सद्‌गुणों का गर्व जोर रखती नहीं,
वह जाती जीवित जातियों में रह नहीं सकती कहीं।

हे भाइयों सोए बहुत अब तो उठो, जागो अहो!
देखो जरा अपनी दशा, आलस्य को त्यागो अहो!
कुछ पार है, क्या-क्या समय उलट-फेर ना हो चुके!
अब भी सजग होगे न क्या? सर्वस्व तो बुक हो चुके!

हाय कार्य ऐसा कौन-सा साधे न जिसको एकता?
देती नहीं अद्‌भुत अलौकिक शक्ति किसको एकता?
दो एक एकादश हुए, कितने नहीं देखे सुने?
हां, शून्य के भी योग से है अंक होते दस गुने !
(शिक्षा की अवस्था राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त)

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. राष्ट्रीय शिक्षा नीति २०२०
2. भारतीय शिक्षा ग्रन्थमाला पुनरुत्थान विद्यापीठ
3. भारतीय शिक्षा का स्वरुप दीनानाथ बत्रा
4. भारत भारती राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

20

डॉ. विवेकानंद उपाध्याय

बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, बनारस

पाठ्यक्रम निर्माण में शिक्षण, शिक्षक प्रशिक्षण,अभ्यास और विद्यार्थी से अपेक्षा पाठ्यक्रम शिक्षक और विद्यार्थी शिक्षा का त्रिभुज निर्मित करते हैं। शिक्षा विद्यार्थी के लिए ही होती है। इसलिए पाठ्यक्रम तथा शिक्षण दोनों का विद्यार्थी केन्द्रित होना आवश्यक है। शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को पुरुषार्थ साधन के योग्य बनाना है। वह विद्यार्थी के शरीर, मन और आत्मा को शक्तिशाली बनाने वाली होनी चाहिए। भारतीय दार्शनिक शब्दावली में इसी को पंचकोश आधारित शिक्षा कहा जाता है। अगर शिक्षा का केन्द्र विद्यार्थी है तो पाठ्यक्रम को विद्यार्थी की स्थानीय, राष्ट्रीय और मानवीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर निर्मित किया जाना चाहिए। लेकिन अगर हम 2005 में निर्मित एनसीईआरटी की हिन्दी की पुस्तकों को देखते हैं तो पता चलता है कि ये पुस्तकें विद्यार्थियों को केन्द्र में रखकर या उनकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर नहीं बल्कि तत्कालीन सरकार तथा एनसीईआरटी की हिन्दी सलाहकार समिति की राजनीतिक आकांक्षाओं और प्राथमिकताओं को ध्यान में रखकर तैयार की गयी थीं। कक्षा 11 के लिए हिन्दी आधार की पाठ्य पुस्तक में हिन्दी कवियों में अक्क महादेवी, अवतार सिंह पाश और निर्मला पुतुल की कविताएँ भी निर्धारित हैं। इसी पुस्तक में प्रेमचंद के साथ सत्यजित राय, कृश्नचंदर, जवाहरलाल नेहरू और सैयद हैदर रजा की रचनाएँ भी रखी गयी हैं। कक्षा 11 की ही वितान नामक पूरक पाठ्य पुस्तक में कुमार गंधर्व, अनुपम मिश्र और बेबी हालदार की रचनाएँ हैं। इसी तरह कक्षा 12 के लिए हिन्दी आधार पाठ्य पुस्तक में हरिवंश राय बच्चन, आलोक धन्वा, कुंवर नारायण, रघुवीर सहाय, मुक्तिबोध, शमशेर, निराला, तुलसीदास, फिराक, उमाशंकर जोशी आदि की कविताएँ निर्धारित

हैं। इनमें कवियों को न तो कालक्रम के अनुसार और न ही वर्णमाला के क्रम में रखा गया है। उसी पुस्तक के गद्य खंड में रजिया सज्जाद जहीर और विष्णु खरे की रचनाएँ रखी गयी हैं। साथ ही डॉ अंबेडकर के भी दो लेख लगाए गए हैं। वितान भाग 2 कक्षा 12 के लिए हिन्दी की पूरक पाठ्य पुस्तक है। इसमें मनोहर श्याम जोशी के साथ ओम थानवी और ऐन फ्रैंक की रचनाएँ रखी गयी हैं।

इस पाठ्यक्रम से निकलने वाले कुछ संक्षिप्त निष्कर्ष इस प्रकार हैं।

- विचारधारात्मक आग्रह की अधिकता के कारण अकादमिक कम राजनीतिक ज्यादा।
- हिन्दी में हिन्दीतर लेखकों को अनावश्यक रूप से स्थान
- हिन्दी रचनाकारों की उपेक्षा।
- विद्यार्थियों के विकास की बजाय पाठ्यक्रम निर्माताओं की मनमानी और तानाशाही।
- महत्वपूर्ण रचनाकारों के स्थान पर अपेक्षाकृत कम महत्व के रचनाकारों को स्थान।
- उपयोगी कम सजावटी ज्यादा।
- मौलिक साहित्य के स्थान पर दूसरी भाषाओं से अनुवादित साहित्य को भी स्थान।

उस संपूर्ण चित्र से जो बात स्पष्ट होती है वह यह है कि पाठों का चयन चयन समिति ने अपने विचारधारात्मक आग्रहों के कारण किया है। दूसरी बात यह कि हिन्दी की पाठ्य पुस्तक में हिन्दी साहित्य के रचनाकारों की रचनाओं की बजाए गैर साहित्यिक रचनाकारों की रचनाओं को अनावश्यक रूप से जगह दी गयी। उर्दू के लेखकों को हिन्दी के पाठ्यक्रम में शामिल करना पूरी तरह से अनुचित है। सत्यजित राय, हैदर रजा, नेहरू और डॉ अंबेडकर इत्यादि हिन्दी के लेखक नहीं हैं। ये सभी महत्वपूर्ण हैं पर हिन्दी के रचनाकार नहीं हैं। इसलिए उनकी रचनाओं को हिन्दी रचनाओं के स्थान पर रखना हिन्दी लेखकों की अत्यंत समृद्ध परंपरा की घोर उपेक्षा और अपमान है। यह मानकर चला गया है कि हिन्दी के विद्यार्थियों को हिन्दी के अलावा भी कुछ पढ़ना चाहिए शायद इसलिए हिन्दी में ऐसी चीजों को स्थान दिया गया है। परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि हिन्दी में विद्यार्थियों के लिए रोचक पाठ्य सामग्री के अभाव जैसी कोई स्थिति नहीं है। हिन्दी में उर्दू को घुसाना भी

अनुचित है। हिन्दी पाठ्यक्रम में अज्ञेय जैसे रचनाकार की बहुत योजनापूर्वक उपेक्षा की गयी है। उनको कथा कविता, निबंध इत्यादि किसी भी विधा में पाठ्यक्रम के योग्य नहीं पाया गया। उनके ही साथ राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त, जयशंकर प्रसाद, महादेवी, दिनकर, निर्मल वर्मा, विद्यानिवास मिश्र तथा कुबेर नाथ राय इत्यादि श्रेष्ठ रचनाकारों से भी विद्यार्थी अपरिचित रह जायेंगे। लेकिन पाठ्यक्रम निर्माताओं को उसकी कोई चिंता नहीं। उससे भी बुरी स्थिति कविताओं के चयन में है। निर्मला पुतुल, पाश उमाशंकर जोशी इत्यादि कवि हिन्दी के कवि नहीं हैं। फिर भी वे पाठ्यक्रम में हैं। इसी तरह मुक्तिबोध और शमशेर जैसे कवियों की रचनाएँ प्रायः कठिन मानी जाती हैं। वे 11-12 की कक्षा के छात्रों के लिए ज्यादा मुश्किल हो सकती हैं फिर भी उन्हें स्थान दिया गया है। मुक्तिबोध की जो कविता निर्धारित है उसका शीर्षक है सहर्ष स्वीकारा है। यह शीर्षक हिन्दी के व्याकरण की दृष्टि से ही गलत है। स्वीकार करना क्रिया होती है। स्वीकारना जैसी कोई क्रिया हिन्दी में नहीं होती। कविता में व्याकरणिक छूट कवि ले लेते हैं और यह सामान्य बात है पर विद्यालय स्तर पर ऐसी रचना को स्थान देने से परहेज किया जाना चाहिए। पर अगर पाठ्यक्रम निर्माताओं को विद्यार्थियों के हित की चिंता होती तो वे अवश्य ही यह ध्यान देते। पर उन्हें तो किसी तरह मुक्तिबोध के 12 वीं के पाठ्यक्रम में घुसाना था तो कौन और क्यों इस बात की चिंता करे। कवियों में जिनकी उपेक्षा हुई है वह तो महत्वपूर्ण है ही तुलसीदास के साथ तो सरासर अन्याय किया गया है। उनका परिचय रामभक्ति शाखा के सर्वोपरि कवि के रूप में दिया गया है जो विचारणीय है। अर्थात् तुलसीदास भक्तिकाल और सगुण भक्ति धारा के सर्वोपरि कवि नहीं हैं बल्कि सिर्फ रामभक्ति धारा तक ही सीमित हैं। उससे भी बड़ी बात की उनकी कविता में भक्ति की कविता की बजाय कवितावली के कलिकाल वर्णन को ही चुना गया है और रामचरित मानस से लक्ष्मण के मूर्छित होने पर राम के विलाप का प्रसंग लिया गया। उन दोनों ही अंशों का चयन यह बताता है कि तुलसीदास की क्या छवि विद्यार्थियों के मन में पाठ्यक्रम निर्माता निर्मित करना चाहते हैं। कबीर के प्रसंग में पीर ख़औलिया का अर्थ संत के रूप में दिया गया है। यह स्पष्टतः गलत है। पीर-औलिया संत नहीं होते वह सूफी परंपरा की पदवी है।

यह पूरा चित्र कुछ संदेश देता है। पहला यह कि पाठ्यक्रम विद्यार्थियों के लिए नहीं है बल्कि विद्यार्थियों को भविष्य में कम्युनिस्ट तथा उस समय की सत्तारूढ़ पार्टी के लिए संभावित कैडर तैयार करने की दिशा में कार्य करना है। पाठ्यक्रम बनाने

वाले हिन्दी पाठ्यक्रम इस भाव से बना रहे थे कि हिन्दी वही है जो वे कहें। जैसे विद्यार्थी और उनका भविष्य इन पाठ्यक्रम निर्माताओं की जागीर हो। यह पाठ्यक्रम एकदम तानाशाहीपूर्ण मनमाना और अवैज्ञानिक और विवेकविरोधी है। यह हिन्दी भाषा, साहित्य संस्कृति के शिक्षण प्रशिक्षण की प्रविधियों के विरुद्ध है। इसलिए पाठ्यक्रम निर्माण से पहले बड़ा प्रश्न है पाठ्यक्रम निर्माण की दृष्टि और लक्ष्य का। आग्रह पाठ्यक्रम को उपयोगी बनाने पर होना चाहिए न कि सजावटी। आरोह भाग दो जो कि 12 वीं कक्षा की हिन्दी आधार पाठ्यपुस्तक है उसमें सबसे पहले बहादुर शाह जफर की कविता मुद्रित कर दी गयी है। बहादुर शाह जफर की वह कविता महत्वपूर्ण है पर प्रश्न है कि किसके लिए? क्या पाठ्यक्रम कोई सजावटी वस्तु है जिसमें हमें अच्छी लगनी वाली वस्तुओं को स्थान मिलना ही चाहिए। अच्छा पाठ्यक्रम वह नहीं है जिसमें संसार की सारी अच्छी चीजें अजायबघर की तरह सजा कर रख दी जाएँ बल्कि वह है जो विद्यार्थियों के इच्छित विकास के लक्ष्य को उपलब्ध करने में सहायक हो। इसलिए सबसे पहले विद्यार्थियों के विकास के इच्छित लक्ष्य स्पष्ट किये जाएँ कि हम ग्यारहवीं-बारहवीं के विद्यार्थी में जो 10 वीं पास करके आय है तथा आगे स्नातक में जाएगा, उसमें भाषा, और साहित्य के कौन से कौशल और किस प्रकार की प्रवीणता विकसित होते देखना चाहते हैं। जब तक यह लक्ष्य स्पष्ट नहीं किया जाता तब तक हमारी शिक्षा गंतव्यहीन यात्रा की तरह अनंत काल तक बिना कहीं भी पहुँचे जारी रह सकती है। दूसरी बड़ी समस्या है कि हमारी शिक्षा में ज्ञान और अधिगम के बीच भयानक दूरी। अर्थात् नालेज और लर्निंग का अंतर। हमारे विद्यार्थी प्रायः हर चीज जानते हैं पर समझते बहुत कम हैं। एक उदाहरण लें। हमारे विद्यार्थी व्याकरण जानते हैं। संज्ञा,सर्वनाम, विशेषण और क्रिया तथा क्रिया विशेषण की परिभाषाएँ उनकी वाणी पर हैं। पर जैसे ही उनसे पूछा जाता है कि नमस्ते, स्वागत और धन्यवाद जैसे शब्दों की व्याकरणिक कोटि बताइये तो वे चकित हो जाते हैं। वे सकर्मक और अकर्मक क्रिया की परिभाषा जानते हैं पर जब उनको कुछ क्रियाएँ देकर उन्हें वर्गीकृत करने को कहा जाता है तो वे निरुत्तर हो जाते हैं।

शिक्षक शिक्षा में सबसे महत्वपूर्ण होता है कि शिक्षक किसी विषय के बारे में विद्यार्थियों में जिज्ञासा पैदा करें और उसके अनुरूप विषय को विद्यार्थियों की जानकारी स्थान और सुविधा के अनुसार शिक्षण को व्यवस्थित करें। शिक्षा में ज्ञान के साथ-साथ शोध और प्रशिक्षण की भूमिका यहीं महत्वपूर्ण हो जाती है। बिना प्रशिक्षण के एक शिक्षक विद्यार्थियों के लिए अपनी ज्ञान के कारण एक भारी बोझ

बन सकता है। विद्यार्थियों को आसान से कठिन विषयों की ओर ले जाना होता है। इस प्रक्रिया में पुनरावलोकन और अभ्यास बहुत महत्वपूर्ण होता है। शिक्षक का काम सिर्फ ज्ञान का प्रसार करना नहीं बल्कि विद्यार्थी का विकास करना है और इसलिए पुनरावलोकन के द्वारा विद्यार्थी किसी पढ़े गए विषय पर गहराई और सूक्ष्मता से ध्यान दे पाते हैं। अभ्यास के द्वारा विद्यार्थी उस विषय को हृदयंगम कर पाते हैं। विद्यार्थियों की कमजोरियां तथा उनकी और विषय गत स्पष्टता आदि समस्याएं अभ्यास के माध्यम से प्रकट हो जाती हैं। इसलिए किसी पाठ के चयन के साथ उस पाठ से संबंधित अभ्यास का सृजन शिक्षक के लिए एक बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य होता है। अभ्यास के ही माध्यम से किसी पाठ का लक्ष्य विद्यार्थी तक सफलतापूर्वक पहुंचता है। उदाहरण के तौर पर अगर हम एक कविता लेते हैं तो शिक्षक के लिए आवश्यक है कि पहले वह इस पाठ में आए शब्दों के शाब्दिक लाक्षणिक अर्थ आदि व्याकरणिक कोटियों के साथ स्पष्ट करे। उसी के साथ– साथ उस रचना में भाषिक प्रयोग के वैशिष्ट्य को भी रेखांकित किया जाना चाहिए। कविता में अलंकार, गुण, शन्द शक्ति बिंब और प्रतीक इत्यादि के बारे में विस्तार से बताया जाना चाहिए। इसी के साथ रचना में प्रयुक्त व्याकरणिक वैशिष्ट्य को भी विद्यार्थियों को ध्यान में लाए जाने के लिए अभ्यास विकसित किया जाना चाहिए। किसी पाठ पर विकसित किया गया एक विस्तृत अभ्यास ही विद्यार्थियों के लिए कई व्याख्यानों से ज्यादा उपयोगी होता है। कविता में शब्द, अर्थ, भाव, भाषा बिंब प्रतीक आदि का अद्वैत होता है। इसलिए शिक्षक को को न केवल बेहतर तैयारी करने की जरूरत होती है बल्कि उस पाठ पर आधारित अभ्यास को विकसित करने की असली चुनौती होती है। यह कार्य पाठ्यक्रम निर्माण के स्तर पर भी बहुत कुछ किया जा सकता है पर उसकी सीमाएं हैं। इसलिए शिक्षक प्रशिक्षण की भूमिका अनिवार्य हो जाती है। एक प्रशिक्षित शिक्षक ही जानता है कि किसी विषय को विद्यार्थी के सामने किस क्रम में और किस रूप में प्रस्तुत किया जाए जिससे उस विषय को समझने में सर्वाधिक आसानी हो। शिक्षण प्रविधि प्रशिक्षण प्रविधि पर आधारित होती है इसलिए शिक्षक प्रशिक्षण का बहुत गहरा अर्थ होता है। गद्य पाठ में कविता जैसी जटिलता तो नहीं होती पर विद्यार्थी के समक्ष यह चुनौती होती है कि वह पाठ से क्या और कितना ग्रहण करें। पाठ पर आधारित अभ्यास इस समस्या का समाधान कर सकते हैं। अभ्यास के द्वारा ही पाठ्यक्रम के पूर्व निर्धारित लक्ष्य बिना परीक्षा के ही प्राप्त किए जा सकते हैं और विद्यार्थी के मन में परीक्षा का भय भी समाप्त हो जाता

है। आज शिक्षण प्रायः शिक्षकों का एकालाप बन गया है जिसमें संवाद चर्चा और मंथन की प्रक्रिया बाधित हो गई है। कक्षा में पाठ की वाचन की बजाए पाठ पर चर्चा और अभ्यास ही किया जाना चाहिए। तभी विद्यार्थी उस पाठ के वैशिष्ट्य और सूक्ष्मता को गहराई से पकड़ पाएंगे। इसलिए पाठ्यक्रम निर्माण में अभ्यास के लिए पर्याप्त निर्देश पहले से ही दिए जाने चाहिए। शिक्षा एक सांस्कृतिक बौद्धिक उपक्रम है इसलिए उसमें विद्यार्थियों के हित के अतिरिक्त अन्य किसी बात को प्राथमिकता नहीं दी जानी चाहिए। भाषा साहित्य के अध्ययन अध्यापन की सबसे बड़ी चुनौती है विद्यार्थियों की प्रवीणता समय के साथ बढ़नी चाहिए। इसमें उनके भाषा तथा साहित्य का विकास भी अपेक्षित है। उनकी मौखिक अभिव्यक्ति का विकास अभ्यास के द्वारा बढ़ाया जा सकता है। लिखित परीक्षा में मौखिक अभिव्यक्ति की कोई गुंजाइश नहीं होती इसलिए पाठ के अभ्यास को विकसित करते समय उसमें मौखिक अभिव्यक्ति की गुंजाइश भी तलाशी जानी चाहिए। मौखिक अभिव्यक्ति का अवसर मिलने से विद्यार्थियों के व्यक्तित्व का विकास होता है तथा वे आत्माभिव्यक्ति का गुण सीखते हैं। इसी के साथ भाषा में लेखन गत, वर्तनी और व्याकरण की अशुद्धियां आरंभिक कक्षाओं से लेकर उच्च शिक्षा के स्तर पर भी विद्यार्थी करते पाए जाते हैं। अभ्यास के द्वारा उनका भी सुधार संभव है। वर्तनी और व्याकरण की शुद्धि के लिए अलग से व्याकरण कक्षा या पुस्तक की आवश्यकता नहीं होती बल्कि अभ्यास के द्वारा उसका परिमार्जन किया जा सकता है। समय के साथ विद्यार्थियों की शब्दावली का भंडार भी विकसित हो उनमें शब्दों के पर्यायों के बीच सूक्ष्म अंतर का बोध विकसित हो। इसलिए अभ्यास के द्वारा उनके शब्द भंडार को बढ़ाया जा सकता है अन्यथा सोशल मीडिया के युग में शब्द भंडार की रिक्तता का सामना हम सब लोग कर रहे हैं। आज भक्ति काव्य, रीति काव्य और छायावादी काव्य में प्रयुक्त शब्दावली नई पीढ़ी के बालकों के लिए बिल्कुल अपरिचित है। इसलिए शब्द संपदा में समृद्धि के साथ विद्यार्थियों की भाषा भी अनिवार्य रूप से बढ़ेगी। रचनात्मक लेखन का अभ्यास भी पाठ्यक्रम का हिस्सा होना चाहिए।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति विद्यार्थियों में कौशल विकास पर बल दे रही है इसलिए भाषा और साहित्य के विद्यार्थी सृजनात्मक लेखन की ओर जाकर एक कौशल विकसित कर सकते हैं साथ ही अनुवाद के एक बहुत बड़े क्षेत्र में भी कार्य कर सकते हैं। पर, इसके लिए स्कूली पाठ्यक्रम में भाषा और साहित्य के प्रति अभिरुचि जगाने वाले पाठ तथा उससे संबंधित अभ्यास का निर्धारण आवश्यक है।

विद्यार्थी से अपेक्षा

विद्यार्थी से अपेक्षा यह होती है कि विद्यार्थी दिए गए पाठ को सावधानीपूर्वक घर पर पढ़ेंगे और संबंधित अभ्यास को अपने स्तर से हल करने का प्रयास करेंगे। कक्षा में विद्यार्थी अध्यापक के साथ दिए गए पाठ के महत्वपूर्ण बिंदुओं पर चर्चा करेंगे तथा अध्यापक उनको कठिन अभ्यास हल करने में सहायता करेंगे। शिक्षक की भूमिका व्याख्यान देने के लिए नहीं होगी बल्कि विद्यार्थी के सहयोगी के रुप में होगी और इस नाते मुख्य जिम्मेदारी विद्यार्थी की होगी कि वह पाठको एक से अधिक बार अपने स्तर से पढ़ें और उस पर और उस पर चिंतन करें।

उपसंहार

ज्ञान स्वयं का महान शुद्धिदाता और मुक्तिदाता है।
श्रीमद्भागवत् गीता 4.33,37-38

भारतीय ज्ञान परंपरा वेद, उपनिषद से शुरू होते हुए विवेकानन्द और अरविंद दर्शन तक देखने को मिलती है। दर्शन एक प्रकार का दृष्टिकोण है। यही दृष्टिकोण मनुष्य को ज्ञान प्राप्ति में सहायक होता है। इसी ज्ञान का व्यवस्थित रूप विद्या है। व्यवस्थित ज्ञान विद्या के रूप में शिक्षार्थी को जब मिलती है तब वह एक आदर्श नागरिक बन, स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण करता है। विद्या प्राप्ति के बाद वह आत्मनिर्भर बनता है, मानवता के हित में काम करने के लिए प्रोत्साहित होता है। इसीलिए ज्ञान को अप्रतिम माना गया है। प्राचीन शिक्षा पद्धति में ज्ञान प्राप्ति का लक्ष्य आत्मज्ञान और मुक्ति से जोड़ा गया है। जब मनुष्य आत्मज्ञान की प्राप्ति कर लेता है तब वह कोई भी ऐसा अनैतिक काम नहीं करता जिससे मानवता का अहित हो। भारतीय ज्ञान परंपरा ने हमेशा वसुधैव कुटुम्बकम की बात की। पूरे विश्व को परिवार की तरह माना। अलगाववाद की प्रवृति भारतीय परंपरा का हिस्सा कभी नहीं रही। ऋग्वेद के समय से ही भारतीय शिक्षा प्रणाली में हम देख सकते हैं कि नैतिकता, भौतिकता, आध्यात्मिकता, बौद्धिकता का संतुलन हमारे यहाँ मिलता है। इस संतुलन के कारण ही शिक्षार्थी जब शिक्षा ग्रहण कर नए जीवन में प्रवेश करता है तब वह परिवार, समाज, राष्ट्र आदि के हित में निर्णय लेने की स्थिति में होता है। उसमें विनम्रता, अनुशासन, नैतिकता आदि मूल्यों का संतुलित रूप देखने को मिलता है।

भारतीय संस्कृति नाना परंपरा के माध्यम से एक सुव्यवस्थित आदर्श प्रस्तुत करती है। हमारी परंपरा में कर्तव्य को श्रेष्ठ माना गया है। संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, वेदांग, उपवेद आदि ग्रन्थों में ज्ञान की विपुल राशि संचित है जिसके श्रेष्ठ अंशों को वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अंतर्भुक्त करने की आवश्यकता है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 में जहां दर्शन के केंद्र में भारतीय ज्ञान परंपरा को रखा गया है और ज्ञान तथा विद्या को समायोजित करने का प्रयास किया जा रहा

है। प्राचीन शिक्षा पद्धति कर्म पर बल देती है, फल की चिंता नहीं करने की बात कहती है। शिक्षार्थी भी फल की चिंता किए बिना कर्म करने को ही अपना कर्तव्य मानते थे। मगर वर्तमान शिक्षा प्रणाली में अभ्यर्थी कर्म से अधिक फल की चिंता पर जोर देते हैं। फल की प्राप्ति के लिए वह नैतिक-अनैतिक सभी हथकंडों को अपनाने में संकोच नहीं करता है। शिक्षा का लक्ष्य केवल उसके लिए अर्थ की प्राप्ति तक ही सीमित रह गया है। उसके सोचने की सीमा संकुचित हो गई है। वह अपनी संस्कृति व परंपरा को हीन मानता है और विदेशी संस्कृति के प्रति श्रेष्ठता का बोध रखता है। इसी कारण वह विदेश में ही बसने की सोचता है और विदेशी संस्कृति में रचना-बसना, उसके अनुसार अपनी जीवन शैली को बदलना उसे आधुनिक लगता है। आधुनिकता के मापदंड वह पाश्चात्य जीवन को ही मानता है। अतिशय भौतिकता का अंध अनुयायी होने के कारण आज का नवयुवक विद्यार्थी जीवन से ही काम, क्रोध, लोभ, मद, मत्सर की ओर झुक रहा है। यही कारण है कि वह जीवन के अनेक स्तरों पर असफल साबित ही रहा है। आवश्यकता देशज शिक्षा पद्धति अपनाने की है जिसमें विद्यार्थी ऐसी शिक्षा प्राप्त करता है जहां वह वैयक्तिक और सामूहिक जीवन के नैतिक मूल्यों को सीखता है। एक आदर्श चरित्र बनकर वह समाज के सामने प्रस्तुत होता है। लेकिन आज की शिक्षा केवल डिग्री प्राप्ति तक ही सीमित हो गई है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020 हमें यह अवसर देती है कि हम औपनिवेशिक मानसिकता से बाहर निकल सकें, हमारे पास ज्ञान की समृद्ध परम्परा है जिसका प्रयोग हम व्यक्तिगत रूप से नहीं कर पाए हैं। जबकि हमारे पास इसके अत्यंत समृद्ध स्रोत हैं कुछ उदाहरणों से इसकी पुष्टि की जा सकती है। उपनिषद की एक कथा है, जो ऋषि याज्ञवल्य और राजा जनक के बीच संवाद है।

राजा जनक ऋषि याज्ञवल्य से पूछते हैं कि महात्मन मनुष्य को प्रकाश कहाँ से मिलता है? याज्ञवल्य कहते हैं सूर्य से।

राजा जनक पूछते हैं सूर्य ना हो तो? चन्द्रमा से, चन्द्रमा ना हो तो, अग्नि से, अग्नि ना हो तो, वाणी से और जब वो पूछते हैं कि अगर वह भी ना हो तो?

तब याज्ञवल्य जी कहते हैं कि तब मनुष्य का प्रकाश उसकी आत्मा है यही अपने को जानने की अभ्यर्थना वेद और उपनिषद का मूल संदेश है यह नीति हमें अवसर देती है कि पाठ्यक्रम का निर्माण इस अनुरूप हो कि बालक और बालिका अपने 'स्व' को जाने।

''पुराणपि नवम्ः पुराना होकर भी नया पुराण की परिभाषा है। पुराणों में मुख्य रूप से ब्रह्मा विष्णु महेश के कार्यों और गुणों की चर्चा की गई है। पर इनमें अनेक रोचक विषय मिलते हैं। उदाहरण के लिए पश्चिम से बहुत पहले विष्णु पुराण में कहा जा चुका है कि सौरमंडल का केंद्र पृथ्वी नहीं सूर्य है।

पुराण के भेद उपभेद हैं- महापुराण- उपपुराण- स्थलपुराण, भूगोल कैसे एक दूसरे से अनुस्युत हैं, इसका एक उदाहरण देखते हैं- स्थलपुराण देश के तीर्थों का परिचय देता है।

कलिका पुराण में शिव और पार्वती का आख्यान है। जिसमें शिव को दक्ष द्वारा अपमानित करने पर सती की मृत्यु होती है। शिव उनकी लाश को कंधे पर लेकर घूमते ही जाते हैं तबविष्णु अपने अदृश्य सुदर्शन चक्र से सती के अंगों को काटते हैं और जहाँ जहाँ अंग-वस्त्र गिरे वे शक्तिपीठ कहलाये। पाटलिपुत्र और कामरूप इत्यादि से सभी परिचित हैं।

रामायण में मर्यादा पुरुषोत्तम राम का अनुपम चरित काव्य है और इसकी ख्याति अलग अलग रूपों में पूरे भारत और विश्व के दूसरे देशों में फैली है। महाभारत के बारे में कहा जाता है, जो और कहीं है वो यहाँ भी है और जो यहाँ नहीं है वो कहीं भी नहीं है।

'कहानियों में नदियों से बना सागर' कथा सरित्सागर का संकलन शैव मनीषी सोमदेव ने किया जो मूलतः गुणाढ्य ने वृहत्तकथा के रूप में लिखी थी. तीव्र अंर्तद्वन्द्व में उन्होंने इसे जला दिया था, जिसका केवल एक हिस्सा ही बच पाया था, लेकिन उसके पहले यह मौखिक रूप से भी फैल चुकी थी, कहा जाता है अलिफ लैला का मूल वृहत कथा ही है।

पंचतंत्र विष्णु शर्मा द्वारा लिखित नीति कथाएं है। जिसमें मूल रूप में यह सीख है कि निस्वार्थ होने के साथ-साथ मनुष्य सावधान और होशियार रहे तो उसका अच्छा फल जरूर मिलता है।

हितोपदेश बुद्ध के जन्म की कथाए हैं, जिसमें हमें जीवन को भली भांति समझने और अच्छा की जीवन बिताने कि प्रेरणा मिलती है। वे यह भी बताती हैं कि लालच घमंड और बुराई से दूर रहना चाइए क्योंकि दुनिया में जितने भी दुख हैं उनके मूल कारण यही है।

तमिल में तिरुवल्लुर के कुरल और कनन्ड में बसवेश्वर के वचन साहित्य एक नीतिपूर्ण सम्यक जीवन के लिए आधार भूमि देता है।

यह सारी बातें हमारी ज्ञान परंपरा की कुछ ही मणियों हैं। इस पर बहुत देर तक बात की जा सकती है। लेकिन हमें अफ्रीकी और दक्षिण अमेरीकी चिंतकों और लेखकों से भी यह समझना चाहिए कि हमें अपनी जड़ों की ओर लौटना होगा और इसके लिए अगर हम इसकी अपनी शुरुआत देश के नौनिहालों के पाठ्यक्रमों को इसके अनुरूप बनाकर करें तो इससे बेहतर क्या हो सकता है।

पाठ्यक्रम निर्माण के महत्वपूर्ण बिंदु :

- यह सुनिश्चित किया जाएगा कि पाठ्य पुस्तकें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (एनईपी) 2020 के ढांचे के अनुरूप हैं।
- मुख्यतः हिंदी और संस्कृत साहित्य परंपरा और गौणतः भारतीय भाषाओं की साहित्य परंपरा से ऐसी पाठ्य सामग्री का निर्माण हो, जो भारतीय मूल्यों, नैतिकता और दर्शन को प्रदर्शित और उजागर करती है, और उन्हें स्कूली पाठ्यपुस्तकों में शामिल करके मुख्यधारा में लाएं।
- यह सुनिश्चित किया जाए कि पाठ्यपुस्तकें श्भारतीयताश पर केंद्रित हों और प्रेम की भावनाओं को भी बढ़ावा दे। पाठयक्रम मातृभूमि और उसके नागरिकों के लिए अपनेपन और करुणा के साथ-साथ प्राचीन वसुधैव कुटुम्बकम के भारतीय मूल्य को आत्मसात किए हुए हो।
- यह सुनिश्चित किया जाए कि पाठ्य पुस्तक लिखते समय वैज्ञानिक तर्कसंगतता और प्रामाणिकता के सभी सिद्धांतों पर ध्यान दिया जाए।
- पाठ्य पुस्तकों में यथास्थान क्षेत्रीय और स्थानीय संस्कृति, कला और विरासत का समावेश सुनिश्चित किया जाए।

पाठ्य पुस्तकों में क्या समाहित किया जाना चाहिए

- **भारतीय जड़ों और गौरव से बंधे रहना:** प्राचीन और सनातन भारतीय ज्ञान और विचार की समृद्ध परंपरा के आलोक में राष्ट्रीय शिक्षा नीति तैयार की गयी है। जहां भी प्रासंगिक लगे वहाँ भारत की समृद्ध एवं विविध प्राचीन और आधुनिक संस्कृति तथा ज्ञान प्रणालियों और परंपरा को शामिल करना और उससे प्रेरणा पाना आवश्यक है।

  सभी भाषाओं के शिक्षण को नवीन और अनुभवात्मक विधियों के माध्यम से समृद्ध किया जाए, जिसमें सरलीकरण और 'ऐप्स' के माध्यम से, भाषाओं

के सांस्कृतिक पहलुओं जैसे कि फिल्म, थिएटर, कथावाचन, काव्य और संगीत को जोड़ते हुए, और विभिन्न प्रासंगिक विषयों के साथ और वास्तविक - जीवन के अनुभवों के साथ संबंधों को दिखाते हुए इन्हें सिखाया जाए। इस प्रकार, भाषाओं का शिक्षण भी अनुभवात्मक-अधिगम शिक्षणशास्त्र पर आधारित हो।

- **स्वदेशी तथा पारंपरिक प्रथाओं को बढ़ावा देना :** भारत में कई शताब्दियों से बाल्यावस्था में शिक्षा के विकास के लिए समृद्ध प्रथाएँ हैं। स्थानीय परम्पराओं के अंतर्गत विकसित ये प्रथाएँ जिनमें कला, कहानियाँ, कविता, खेल, गीत और बहुत कुछ शामिल हैं, इन सभी को पाठ्यक्रम में शामिल करने की आवश्यकता है।
- **भारतीयताः** पाठ्यपुस्तकें प्राचीन भारत के साथ-साथ आधुनिक भारत से भी ज्ञान प्राप्त करेंगी। देश के भविष्य की आकांक्षाओं को ध्यान में रख कर वैज्ञानिक और सटीक तरीके से सभी प्रासंगिक ज्ञान को एक में शामिल किया जाएगा। पाठ्य पुस्तकों की पूर्व की श्रृंखला में श्भारतीयताश का अभाव था। परंपराएं, भारतीय विचार, भारतीय ज्ञान प्रणाली, सामाजिक समस्याओं से निपटने के भारतीय तरीके , भारतीय मूल्य प्रणाली, भारतीय सांस्कृतिक विरासत, भारतीय तर्क प्रणाली, भारतीय गणित, वैदिक विज्ञान और गणित, उपनिषद आदि में निहित दर्शन भारतीय ज्ञान के समृद्ध स्रोत हैं। भाषा और साहित्य के क्षेत्र में भारतीय विचारों के उत्थान और प्रचार के लिए श्भारतीयताश का चित्रण सुनिश्चित किया जाना चाहिए।
- **बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान पर अतिरिक्त बलः** आरंभिक एवं माध्यमिक स्कूल, पाठ्यचर्या के दौरान एक मजबूत सतत रचनात्मक और अनुकूल मूल्यांकन प्रणाली के साथ पढ़ने, लिखने, बोलने, गिनने अंकगणित और गणितीय चिंतन पर केन्द्रित होगा। द डिजिटल इनफ्रास्ट्रक्चर फॉर नॉलेज शेयरिंग (दीक्षा) पर बुनियादी साक्षरता और संख्या ज्ञान पर उच्चतर गुणवत्ता वाले संसाधनों का एक राष्ट्रीय भंडार उपलब्ध कराया जाएगा। पाठ्यक्रम में तकनीकी दखल का उचित समावेश आवश्यक है ताकि शिक्षक और विद्यार्थी के बीच भाषाई बाधा दूर हो।
- **विद्यार्थियों का समग्र विकासः** सभी स्तरों पर पाठ्यचर्या और शिक्षा विधि का समग्र केंद्रबिंदु शिक्षा प्रणाली को रटने की पुरानी प्रथा से अलग वास्तविक

समझ और ज्ञान की ओर ले जाना है। शिक्षा का उद्देश्य केवल संज्ञानात्मक समझ न होकर चरित्र निर्माण और इक्कीसवीं शताब्दी के मुख्य कौशल से सुसज्जित करना है। वास्तव में ज्ञान एक छुपा हुआ ख जाना है और शिक्षा व्यक्ति की प्रतिभा के साथ इसे प्राप्त करने में मदद करती है। पाठ्यचर्या और शिक्षाविधि को इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए पुनः तैयार किया जाएगा। पूर्व विद्यालय से उच्चतर शिक्षा तक प्रत्येक स्तर में एकीकरण के लिए विभिन्न क्षेत्रों में विशिष्ट कौशल और मूल्यों की पहचान की जाएगी। शिक्षण और अधिगम प्रक्रिया में इन कौशल और मूल्यों को किसप्रकार आत्मसात किया जा रहा है यह सुनिश्चित करने के लिए पाठ्यचर्या ढाँचा और सम्पर्क तंत्र विकसित किया जाएगा। एनसीईआरटी इन अपेक्षित कौशल की पहचान करेगा और आरंभिक बाल्यावस्था एवं स्कूल शिक्षा के लिए राष्ट्रीय पाठ्यचर्या ढाँचे में उनके व्यवहार के लिए संपर्क तंत्र शामिल करेगा।

- **शास्त्रीय और भारतीय भाषाओं का महत्त्वः** भारत की शास्त्रीय भाषाओं और साहित्य के महत्त्व, प्रासंगिकता और सुंदरता को भी नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। संस्कृत, संविधान की आठवीं अनुसूची में वर्णित एक महत्वपूर्ण आधुनिक भाषा होते हुए भी उपेक्षित है। इसका शास्त्रीय साहित्य इतना विशाल है कि सारे लैटिन और ग्रीक साहित्य को भी यदि मिलाकर इसकी तुलना की जाए तो भी इसकी बराबरी नहीं कर सकता। संस्कृत साहित्य में गणित, दर्शन, व्याकरण, संगीत, राजनीति, चिकित्सा, वास्तुकला, धातु विज्ञान, नाटक, कविता, कहानी, और बहुत कुछ (जिन्हें ष्संस्कृत ज्ञान प्रणालियोंष के रूप में जाना जाता है), विशाल खजाने हैं। इन सबको विभिन्न धर्मों के लोगों के साथ-साथ गैर-धार्मिक लोगों और जीवन के सभी क्षेत्रों और सामाजिक-आर्थिक पृष्ठभूमि के लोगों द्वारा हजारों वर्षों में लिखा गया है। संस्कृत को, त्रि-भाषा के मुख्यधारा में विकल्प के साथ, स्कूल और उच्चतर शिक्षा के सभी स्तरों पर छात्रों के लिए एक महत्वपूर्ण, समृद्ध विकल्प के रूप में पेश किया जाए। यह उन तरीकों से पढ़ाया जाए जो दिलचस्प और अनुभवात्मक होने के साथ-साथ समकालीन रूप से प्रासंगिक हैं, जिसमें संस्कृत ज्ञान प्रणाली का उपयोग शामिल है, विशेष रूप से ध्वनि और उच्चारण के माध्यम से।
- **भाषा शिक्षण को अनुभवात्मक एवं नवीन माध्यम से जोड़नाः** सभी भाषाओं के शिक्षण को नवीन और अनुभवात्मक विधियों के माध्यम से

समृद्ध किया जाएगा. जिसमें सरलीकरण और ऐप्स के माध्यम से, भाषाओं के सांस्कृतिक पहलुओं जैसे कि फिल्म, थिएटर, कथावाचन, काव्य और संगीत को जोड़ते हुए, और विभिन्न प्रासंगिक विषयों के साथ और वास्तविक-जीवन के अनुभवों के साथ संबंधों को दिखाते हुए इन्हें सिखाया जाएगा। इस प्रकार, भाषाओं का शिक्षण भी अनुभवात्मक-अधिगम शिक्षणशास्त्र पर आधारित होगा।

वांछित परिणाम

भारतीयता, विश्व दृष्टि, आर्थिक उपयोगपरकता, तकनीकी सम्पन्नता, भाषिक सहजता आदि ऐसे बिंदु हैं जिनको ध्यान में रखते हुए हमें इस दिशा में अग्रसर होना चाहिए। साथ ही पाठ्यपुस्तक निर्माण में हिंदी के विद्वानों के साथ-साथ विद्यालय के शिक्षकों को उचित प्रतिनिधित्व अवश्य दिया जाना चाहिए। पाठ्यक्रम निर्माण में अहिंदी भाषी प्रदेश से विषय विशेषज्ञ और पाठ्यक्रम सामग्री का भी उचित समावेश किया जाना चाहिए।

पाठ्य पुस्तकों की अंतर्वस्तु लेखन कार्य विषय विशेषज्ञों द्वारा किया जाएगा और उसे राष्ट्रीय स्तर पर अपनाया जाएगा। यह अन्य राज्यस्तरीय पाठ्यपुस्तक लेखन के लिए भी मानक सामग्री होगी। ये पाठ्य पुस्तकें न केवल भाषा और साहित्य को समझने में सहायक होंगी बल्कि भारतीय ज्ञान परंपरा, दर्शन, कला और इतिहास, भाषा, साहित्य और संस्कृति को बढ़ावा देने में भी सहयोगी होंगी। इसमें 21वीं सदी के नए भारतवर्ष की दृष्टि भी होगी जो अपने ज्ञान से पूरे विश्व को आलोकित कर सके।

आशा है कि उपरोक्त सुझावों को अमल में लाकर राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अनुरूप नई पाठ्य पुस्तकों का निर्माण होगा जिसमें पाठ्य सामग्री उपरोक्त अंतर्वस्तु के साथ-साथ विभिन्न कक्षाओं के छात्रों की उम्र और ग्रहणशीलता के अनुरूप हो।

****

प्रतियोगियों की सूची

S. No.	*Full Name*	*Designation*	***Institution***
1	राम कुमार	प्रांत प्रशिक्षण प्रमुख	विद्या भारती हरियाणा
2	Subhash sharma	Prant seva shiksha sah pramukh	Vidya bharti hariyana
3	Dr Annaram sharma	Associate professor hindi	Govt girls college Nokha,
4	Jalam singh	Principal	Adarsh Vidya mandir Sr sec Barmer
5	Vinod Kumar	Assistant Professor	Government Girls P G College Rampur
6	Dr. Vinod kumar Vilasrao Vayachal	Assistant Professor	Venkatesh Mahajan Senior College
7	Rajendra Prasad Tiwari	Principal	Saraswati Shishu/Vidya Mandir, Harda
8	Dr. Puneet Kumar Rai	Assistant professor	Arun pratap singh dev government college shankar garh, distt. balrampur,chhattisgarh
9	Birendra singh	Acharya	Adarsh vidya mandir ranjeet nagar
10	सतीश चन्द्र शर्मा	जिला सचिव	आदर्श शिक्षा समिति अलवर
11	राजेश कुमार शर्मा	प्रधानाचार्य	राउमावि-भदलाव
12	DAMODAR PRASAD SHARMA	Principal	Vidhya bharti
13	Yogendra joshi	M.A. HINDI, B.ED.	Saraswati vidhya mandir
14	Sawan Kumar Sitoke	Agency Manager	Care health Insurance
15	Ajeet bhartee	Tgt hindi	Svm sharda vihar bhopal mp
16	Sawan Kumar Sitoke	Agency Manager	Care health Insurance ltd
17	Vikash Palsaniya	Student	Hansraj College, Delhi University
18	Dr. Shobha Bisen	Assistant professor	Guru Ghasidas University, Bilaspur

19	Ashish Kumar	Editor - Srijan Samay	SSBSS, WARDHA
20	Sarita Kumari	Assistant Professor	PBTT College, Bhagalpur, Bihar
21	Dr Suraj Kumar	Associate Professor	Central University of Punjab
22	Dr. Amit Kumar Singh Kushawaha	Assistant Professor	Central University of Punjab
23	Satish chand sharma	जिला सचिव	आदर्श शिक्षा समिति, अलवर
24	Dr. Mythili P Rao	Deputy director, Research / professor, dept of Hindi	JAIN (Deemed-to-be University)
25	Dr. Ombir Yadav	PGT HINDI	GHS BARSANA, PUNDARI (KAITHAL)
26	Prof. Narendra Mishra	Professor	faculty of Hindi, Manvikee Vidya Peeth, IGNOU, New Delhi-110068
27	Dr. Rita Moni Baishya	Associate Professor, Department of Hindi	Gauhati University
28	Santosh Kumar Dewangan	PGT Hindi	Gita Niketan Awasiya Vidyalaya
29	VIDYA.P.U	Teacher	Chinmaya Vidyalaya Payyanur
30	SUSHA P V	PRT	Chinmaya vidyalaya payyanur
31	Som Nath	Principal	Vidya Bharti
32	सुभाष चन्द्र शर्मा	प्रान्त सेवा शिक्षा सह प्रमुख	विद्या भारती, हरियाणा
33	Gaurav Chaudhary	Principal	Vatsalya Vatika Prathmik Paathshala Kurukshetra
34	Dr Sameer	Assistant professor	Swami premanand mahavidyalaya
35	Geetha VP	Teacher	Chinmaya Vidyalaya payyanur
36	Dr Sonia Sharma	Assistant professor	Swami premanand mahavidyalaya
37	डॉ. अनिल कुमार शर्मा	प्रधानाचार्य	रवींद्र जोशी सर्वहितकारी विद्या मंदिर धनास
38	Dr Rashmi sharma	P.G.T (HINDI)	D.A.V Sr sec school No 1
39	Dr. Umesh Chand	Associate Professor (Retire	PGDAV COLLEGE, Delhi University
40	Ritu Ahuja Kumar	PRT	GLT, Saraswati Bal Mandir School, Nehru Nagar, New Delhi - 110065
41	Rajesh	Yoga Teacher	Vidya Bharti Delhi (SSS)

42	Dr kuldeep kumar mehendiratta	Assistant professor in political science	CBLU Bhiwani
43	Prof Babu Ram	Professor	CBLU Bhiwani
44	Rajesh Kumar sahastri	PGT	Sharda sarvitkari model senior secondry school
45	राजेश कुमार लिटौरिया	शिक्षा, साहित्यसेवी	विद्या भारती
46	Prof. Ratnesh Vishvaksen	Professor	Jharkhand Central University
47	Dr. Umesh Chand	Associate professor(Retired)	P.G.D.A.V. COLLEGE ,DELHI UNIVERSITY
48	Prakash Chandra Bishwas	Headmaster	High School
49	Prakash Chandra Bishwas	Principal	+2 High School
50	Vidyanand Jha	Teacher	Saraswati Vidya Mandir, Ring Bandh, Sitamarhi
51	Prakash Chandra Bishwas	Principal	High school
52	Rajesh Kumar Litoriya	Shikshak, sahitya sevee	विद्या भारती
53	Joginder singh	PGT Hindi	Government High School Sidhanwa
54	प्रदीप कुमार सोनी	सेवानिवृत उच्च श्रेणी शिक्षक	सेवा निवृत्त
55	Naresh Kumar Tyagi	PGT	Delhi Public School
56	Vishal Pandey	Teacher	University of Delhi
57	Ajeet Kumar Puri	Assistant Professor	Banaras Hindu University
58	Indra. S	Senior Hindi Translation Officer	CWC, Ministry Of Jal Sakti
59	Reena	Research scholar	Delhi university
60	Reena	Research scholar	Delhi university
61	गोपाल माहेश्वरी	कार्यकारी संपादक देवपुत्र बाल मासिक	देवपुत्र बाल मासिक इंदौर, म.प्र.
62	Kishor sanas	Teacher	Saraswati vidya mandir vijay nagar Dewas
63	Jalam singh	Principal	Adarsh Vidya mandir Sr sec Barmer

64	Deepika ojha	Principal	Tarkeshwer Rameshwer sarshwati girls s.sc.school pali
65	राजेश लिटौरिया	सेवा निवृत्त, शिक्षा, साहित्यसेवी	विद्याभारती
66	Ritu Soni	Higher Secondry Teacher	Saraswati Shishu Mandir Kalyangaj Khandwa
67	Govind Singh Gour	High Secondry Teacher	Saraswati Shishu Mandir Kalyanganj Khandwa
68	Dr Naresh Kumar Tyagi	PGT	Delhi Public School
69	Anubha Shrivastava	PGT	S.V.M.C.B.S.E. sanjeet marg
70	Ramendra Prasad ojha	Assistant professor	St Aloysius College
71	Dr ramendra Prasad ojha	Assistant professor	St Aloysius College
72	Ramendra Prasad ojha	Assistant professor	St Aloysius College
73	Dr.Rohitashva Kumar Sharma	Professor-Hindi	Govt madhav science College ujjain
74	मिश्रीलाल प्रजापति	सचिव-प्रबंध समिति आदर्श विद्या मंदिर, जोधपुर	प्रबंध समिति आदर्श विद्या मंदिर, जोधपुर
75	Banasri Baishya	Asst. Professor	Dhamdhama Anchalik college
76	Dr.SomDutt	Lect.	GMSSSSkkr.